डा० हरिवंशराय बच्चन के साहित्य में आत्माभिव्यक्ति

शोध प्रबन्ध
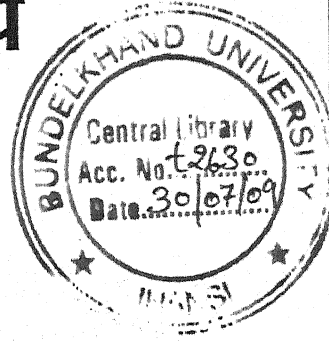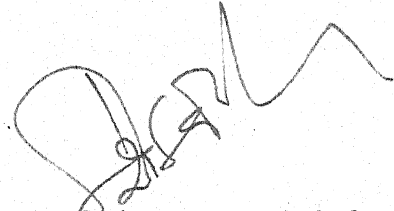
शोध निर्देशक
डा० दिनेश चन्द्र द्विवेदी

अनुसंधायक
निधि मालवीय

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

प्रमाण - पत्र

मुझे प्रमाणित करते हुए हर्ष है कि निधि मालवीय ने डा० हरिवंश राय बच्चन के साहित्य में आत्माभिव्यक्ति विषय पर शोध कार्य सम्पन्न किया है। शोधकार्य के दौरान अनुसंधित्सु ने आवश्यकतानुसार मेरे सम्पर्क में रहकर कर निर्देशन प्राप्त किया। यह इनका सर्वथा मौलिक शोधकार्य है। शोध लक्ष्य तक पहुंचने के लिये जिन उपजीव्य एवं उपस्कारक ग्रन्थों का सहयोग लिया गया है उनका आभारपूर्ण उल्लेख करके अनुसंधायक ने श्रेष्ठ सारस्वत परम्परा का पालन किया है। मुझे विश्वास है कि यह शोधकार्य हिन्दी अनुसंधान क्षेत्र में उनकी उपादेयता सिद्ध करेगा। मैं अनुसंधित्सु के मंगलमय उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

डा० दिनेश चन्द्र द्विवेदी
रीडर हिन्दी विभाग
गांधी स्नातोत्तर महाविद्यालय
उरई, उत्तर प्रदेश

विज्ञप्ति

'डा० हरिवंश राय बच्चन के साहित्य मे आत्माभिव्यक्ति' विषयक शोध प्रबन्ध मेरे द्वारा किये गये मौलिक कार्य का फल है। प्रस्तुत शोध न तो किसी विश्व विद्यालय से हुआ है न ही कहीं प्रकाशित हुआ है। इस शोध विषय को पूर्ण करने हेतु जिन ग्रन्थों व पाठ्य सामग्री की सहायता ली गई है उन सभी का उल्लेख शोध प्रबन्ध के अन्त में कर दिया गया है।

निधि मालवीय

निधि मालवीय
शोधकर्त्ता

महत्व

साहित्य एक आत्म परक प्रयास है, व्यक्तित्व का प्रकाशन है, आत्माभिव्यक्ति है। वस्तुतः साहित्य और साहित्यकार में 'आत्म' और अभिव्यक्ति का सम्बन्ध है। साहित्यकार की सृजनात्मक प्रज्ञा से अथवा आत्मान्वेषण, आत्मबोध या सृजन के महत्वपूर्ण क्षण से जुड़ी आत्मपरक रचनाधर्मिता, अभिव्यक्ति के धरातल पर उतरकर सार्वजनिक हो जाती है। सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा साहित्यकार में अर्न्तदृष्टि एवं संवेदनशीलता आधिक होती है। जिसके बल पर वह जागतिक संदर्भों के प्रतिमानित रूप, व परिसीमाओं से परे जाकर अनन्त संभावनाओं के क्षितिज छूता है। साहित्यकार की व्यक्तिगत जीवन शैली संस्कार, आचरण और उसके सामाजिक परिवेश के सहयोग से उसकी आत्माभिव्यक्ति का रूप निर्धारित होता है। यह आत्माभिव्यक्ति आत्मानुभूति पर आधारित है अर्थात् आत्मेतर वस्तुओं दृश्यों व गतिविधियों के आत्मीकरण के बाद साहित्यकार अपनी प्रतिक्रियाओं को अभिव्यक्त करने की ओर प्रवृत्त होता है अर्थात् वस्तु जगत के प्रति उसकी निजी प्रक्रिया ही आत्माभिव्यक्ति के रूप में उपस्थित हो जाती है। वस्तु जगत से पूर्णरूप से एकात्म हो जाने के बाद भी कुछ शेष रह जाता है जो इस एकात्म भाव को रचता हैं। यह साहित्यकार की निजी दृष्टि है। यहां साहित्यकार के आत्म का प्रतिनिधि है। सभी कथित जीवन को, जगत को देखते हैं, भोगते हैं और अवधि पूरी हो जाने पर शेष हो जाते हैं यह क्रम तो अनादि अनन्त है। वही आकाश, वही धरती, वही फूल–फल वृक्ष, नदी–नाले, वहीं लोग जीवन के चिरपरिचित व्यापार हमारे आसपास गतिमान है किन्तु साहित्यकार दिनानुदिन को घटनाओं दृश्यों तथा चिर परिचित प्रत्ययों को ऐसे रूप में प्रस्तुत कर देता है कि हमारे लिये वे नई हो जाती है, अलौकिक हो उठती है। डा० हरिवंशराय बच्चन आत्मानुभूति के कवि हैं इस शोध के माध यम से अनुसन्ध्य होगा कि बच्चन बर्हिजगत से किस्र सीमा धरातल व रीति से सम्प्रत्त हुए हैं। कथ्य का चयन किन आधारों पर करते हैं। उनका शिल्प उनकी आत्मानुभूति से कहां तक प्रभावित होता है। उनकी किस कोटि को ओर कितनी गहरी रूचि है, किस सीमा तक

वे प्रामाणिक और आत्मप्रतिद्ध है कि प्रेरणाओं मूलप्रवृत्तियाँ, अभिरूचियाँ एवं संवेगों भावनाओं व विचारों से परिचालित हुये हैं इसमें उनकी वैयक्तिक व सामाजिक संरचनाओं की क्या भूमिका है और कथ्य के निर्वाहण में युगबोध और व्यक्ति बोध का सामन्जस्य किस स्तर और किन शर्तो पर सम्पन्न हुआ है बाह्व आग्रहों व प्रतिबन्धों का किस सीमा तक अनुवर्तन प्रतिकरण हुआ है। किस सीमा तक वे स्वयं से प्रतिबद्ध हैं और कितनी सीमा तक वे युग से, परिवेश से प्रतिबद्ध हैं : ये दोनों प्रतिबद्धतायें अन्य शब्दों में बाह्व वास्वविकता का आग्रह अभिव्यक्ति की ईमानदारी व लेखकीय प्रतिबद्धता को कहाँ तक प्रभावित करते हैं इसका सामना करते हुये यदि बच्चन ने अपने आत्म की रक्षा ही नहीं उसकी अभिव्यक्ति व स्थापना की है। जैसा कि उन्होंने किया है तो यह उनके व्यक्तित्व की दृढ़ता का सूचक है इस परिपेक्ष्य में बच्चन पर दृष्टि निक्षेप किया जाये तो परिलक्षित होगा उनका व्यक्तित्व दृढ़ता और संकल्पिता जब पारिवेशिक दबाबों को अतिक्रान्त करने लगता है जब साहित्यकार का अजेय, अटूट और आत्मजयी व्यक्तित्व साहित्य सृष्टि में प्रतिफलित होकर अनूठी आत्मभिव्यक्ति कर गया है। प्रस्तावित शोधकार्य के माध्यम से बच्चन के साहित्य में बच्चन को आत्मभिव्यक्ति के अनुसंधान का प्रयास अनुषंधितु करना चाहती हैं।

प्रस्तावना

साहित्य की स्थिति साहित्यकार और पाठक के मध्य है। साहित्यकार का साहित्यिक कृतित्व अनुभूति के धरातल पर साहित्यकार और आस्वादक के बीच संवाद है। साहित्य वह बिन्दु है जहाँ जाकर साहित्यकार का 'आत्म' वस्तु जगत के साथ तादाम्य स्थापित करता है, अपनी वैयक्तिक सीमाओं का अतिक्रमण कर र्निवैयक्तिक हो जाता है। यह इसलिये नहीं होता कि साहित्यकार का उसके सृजन से अतदात्म्य है प्रत्युत्त यह इसलिये उसकी वैयक्तिक अनुभूतियों का इस सीमा तक विस्तार हो जाता है कि वो सभी पाठकों को अपनी अनुभूति प्रतीत होने लगती है। आत्माभिव्यक्ति कल्प और विन्यास दोनों में समान रूप से रेखांकित की जा सकती है। साहित्यकार बर्हिजगत से किस सीमा धरातल व रीति से सम्प्रक्त होता है, विषयी–विषय, क्रिया–प्रक्रिया में कैसी व कौन सी भूमिका सम्पन्न करता है, कथ्य का चयन किन आधारों पर करता है उसकी अनुभूति किस कोटि की ओर कितनी गहरी रूचि है किस सीमा तक आत्म प्रतिबद्ध है, कथ्य के चयन में किन प्रेरणाओं, मूल प्रवृत्तियों, अभिरूचियों, संवेगों, भावनाओं व विचारों से वह परिचारित होता है, इसमें उसकी वैयत्तिक व सामाजिक संरचनाओं की क्या भूमिका है और कथ्य के र्निवहण में युग बोध और व्यक्ति बोध का सामन्जस्य उसमें किस स्तर और किन शर्तो पर किया गया है। बाह्व आग्रहों व प्रतिबन्धों का किस सीमा तक अनुकर्ता या विरोधी है, किस सीमा तक वह स्वयं से प्रतिबद्ध है और कितनी सीमा तक वह युग व परिवेश से प्रतिबद्ध है–ये दोनों प्रतिबद्धतायें किस सीमा तक समन्वित हुई हैं। अर्थात् अन्य शब्दों में बाह्व आग्रह आत्माभिव्यक्ति की ईमानदारी व लेखकीय प्रतिबद्धता को कहां तक प्रभावित करता है इसका सामना करते हुए अपने –'आत्म' की रक्षा अभिव्यक्ति व स्थापना उसमें व्यक्तित्व की दृढ़ता का सूचक है। कई बार बाहरी दबाव इतने शक्तिशाली व शोषक हो जाते हैं कि व्यक्ति अपने आप से निर्वासित हो जाता है। पलायन करता है, अर्न्तमुखता में घुट–घुट कर आत्मनिर्वासित की सी स्थिति को झेलता रहता है, आत्मनिषेध, आत्मपीड़न, आत्मशोधन की प्रक्रिया से गुजर कर

यहां यंत्रणा जब अभिव्यक्ति पाती है तो एक नये ही पक्ष को उजागर करती है। मानवीय चेतना से संयुक्त होने की अदम्य आकांक्षा जब व्यक्ति चेतना की लघुता में बन्दी रहती है, आत्म प्रताड़ना, विवशता और अर्न्तमुखी वेदना का जन्म हुआ। हरिवंशराय बच्चन पर इस परिवेक्ष्य में दृष्टिपात किया जाये तो परिलक्षित होगा। दृढ़ता और संकल्पिता पारिवेशिक दबावों की जब अतिक्रान्त करने लगती है तो साहित्यकार का अजेय, अटूट, आत्मजयी व्यक्तित्व अनकी रचनाओं में परिलक्षित होता है।

मानवीय साहस वैयवित्तक हीनताओं से ऊपर संकल्पिता और सरोकारता का जयघोष एक रचनात्मक भाव भूमि का निर्माण करता है। आत्म निषेध और आत्म स्थापन ये दोनों प्रवृत्तियों आत्माभिव्यक्ति के दो सशक्त पहलू हैं जो साहित्यकार की ध्वंसात्मिकता व रचनात्मिकता सम्प्रेणाओं को स्वर देते हैं। आत्म निषेध में भी आत्माभिव्यक्ति है क्योंकि आत्मनिषेध से पूर्व 'आत्म' को जानने समझने, पहचानने व स्वीकार करने की प्रक्रिया से गुजरना अनिवार्य है यही प्रक्रिया अपनी वर्णात्मकता में आत्मनिर्वासन के रूप में प्रगट होती है। आत्माभिव्यक्ति का दूसरा पक्ष है आत्म स्थापन जिसमें आत्म विज्ञप्ति और अहम् प्रक्षेपण के तत्व भी आ जाते है किन्तु यह निर्विवाद तथ्य है कि साहित्यकार के कालजयी होने के लिये उसका आत्मजयी होना आवश्यक है वैयक्तिक भावभूमियों से उद्‌भूत होने पर भी उससे ऊपर उठ कर समग्र मानव चेतना की अभिव्यक्ति ही आत्माभिव्यक्ति की सम्पूर्ण व सार्थक सन्दर्भ दे सकती है।

प्रकृति और जीवन के कार्य व्यापार युग–युग से एक समान रूप में चलते आ रहे हैं किन्तु प्रत्येक कवि अपने निज उपागम (Approach) और निजी दृष्टि से उसे अभिव्यक्त करता हैं। प्रत्येक युग में प्रत्येक साहित्यकार को कुछ अनिवार्य स्थितियों का सामना करना पड़ता है, ये स्थितियों हैं – परिवेश और परम्परा।

बच्चन साहित्य की विविध विधाओं को अपनी रचना धर्मिता से जोड़कर अपनी

प्रतिभा का परिचय दे चुके हैं। परम्परा और परिवेश से सरोकार रखते हुये अपनी निजस्विता को जीवित रखा है। उनकी भावयित्री और करियत्री प्रतिभा परिवेश और परम्परा के तटबन्धों को छूती हुई उसके कल–कल छल–छल ध्वनि में कवि को अजेय आत्मशुता के स्वर सुनाई पड़ते हैं।

इस शोधकार्य का उद्देश्य बच्चन के साहित्य में विद्यमान उनके मनोंभावों की अभिव्यक्ति को प्रकाशित करना, उसे विभिन्न अर्थो में जन–साधारण के समक्ष उपस्थित करना है। प्रथम अध्याय में बच्चन के जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनका साहित्यिक परिचय दिया गया हे। आम जीवन को व्यतीत करते हुए बच्चन ने साहित्य के क्षेत्र में विशेष कार्य किये। कवितायें उनके जीवन का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनके साहित्यिक परचिय में उनकी कविताओं, निबंध, आत्मकथा, पत्र, समीक्षा, अनुवाद सम्मिलित हैं। साहित्यिक जीवन में मिले तमाम पुरस्कार, सम्मान उनकी इस साहित्यिक यात्रा की महान् उपलब्धियाँ हैं।

दूसरे अध्याय में बच्चन के काव्य में आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में प्रकाश डाला गयाहै। अभिव्यक्ति का मूल रूप एवं आत्मा उनके काव्य में ही विद्यमान है। अनुभूतियां, इच्छायें, भावनायें, आशायें तो हर व्यक्ति के अन्तर में निहित होती हैं लेकिन भावप्रवण हृदय, चित्रकार या कवि, कलाकार उसकी अभिव्यक्ति अपनी कला के माध्यम से करते हैं जो समाज में विशिष्ट हो जाते हैं। बच्चन ने काव्य को अपनी भावनाओं के प्रकाशन का माध यम चुना व स्वयं इस सम्बन्ध में लिखते हैं, – **'कि किसी दिन अपने जीवन की तीव्र अनुभूति को अभिव्यक्त करने की विवशता से मैंने अनायास लेखनी उठा ली होगी। अभिव्यक्ति से जो मुझे राहत मिली होगी उसी ने मुझे समय-समय पर लिखते रहने को प्रेरित किया होगा। जैसे लोग सहज भाव से अपना सुख-दुख अपने सगे सम्बन्धियों से से कहने लगते हैं - 'कहहूं तें कुछ दुख घटि होई'।**

तीसरे अध्याय में बच्चन के 'मधुकाव्य' में स्थित भावों का प्रकाशन है। बच्चन का

'मधुकाव्य' हिन्दी साहित्य जगत में 'हालावाद' के एक सशक्त स्तम्भ के रूप में सदैव विद्यमान रहेगा। मदिरा की फेनिल धार में बच्चन के जीवन के दर्शन की धारा प्रवाहित हुई उस धारा में उनकी हसरतें, अरमान, कल्पनायें, इच्छायें, आशायें सभी साकी के प्याले (कविता) में समा गई हैं। विश्व को वह प्याला बड़े ही मान से थमा दिया है।

चौथे अध्याय में उनके पत्रों का उल्लेख किया गया हैं। पत्र व्यक्ति का नितान्त निजी अभिव्यक्तियों का माध्यम है लेकिन जब वे ही विचार सृजन के अर्न्तगत आ जायें तब वह सभी के पठन का माध्यम हो जाते हैं ऐसे ही कुछ सृजनात्मक पत्र बच्चन ने अपने जीवन में लिखे उन पत्रों को उनके मित्रों ने प्रकाशित करवाया तथा उन पत्रों के माध्यम से देश, समाज व साहित्य की समस्याओं पर उनके विचार व उनका चिन्तन पाठकों के समक्ष आया। इन पत्रों में बच्चन ने अपने आलोचनार्थियों को भी बड़ी स्वाभाविकता से लिया है। दूसरों की निंदा, प्रशंसा, सम्मान को सहज ही आत्मसात् किया है।

बच्चन की साहित्यक याात्रा में उनकीआत्मकथा का वर्णन न आये तो वह अधुरी है। पांचवें अध्याय में बच्चन की आत्मकथा में जो अभिव्यक्तियां है उन्हीं अभिव्यक्तियों का उल्लेख है। जीवन की प्रथम सोपान से जीवन के आखरी पड़ाव तक का उनका जीवन जिन–जिन संघर्ष, समस्याओं, प्रफुल्लताओं, आह्लाद मनोविनोद से होकर गुजरा उसकी एक सहज व स्वाभविक अभिव्यक्ति उनकी आत्मकथा के चारों भागों में है। आत्मकथा में बच्चन अपने पाठकों से जितने आत्मीय होकर मिले हैं उतने अन्य कृतियों में नहीं। इसी कारण उनकी आत्मकथा में उनकी आत्माभिव्यक्ति का एक निष्पक्ष दर्पण है। उस दर्पण की कुछ झलकियों को इस शोधग्रन्थ में दिखाने की चेष्टा हुई है। उनकी आत्मकथा में उनके जीवन के अनुभव भी हैं विचार भी हैं, उपदेश भी हैं, कहानी भी है और संस्मरण भी इन सब से बढ़कर जीवन की उन रसमीने क्षणों की बातें हैं जो हृदय से निकल कर पाठकों के हृदय में समा जाती हैं।

छटे अध्याय में बच्चन के समीक्षक व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला गया है। अपने साहित्यिक जीवन में उन्होंने कई पुस्तकें अन्य कवियों के जीवन व कृतित्व पर लिखीं, उनकी समीक्षा की, उस समीक्षा में बच्चन के भावों की अभिव्यक्ति बड़ी बेबाकी से हुई है।

सातवां अध्याय आत्माभिव्यक्ति का विश्लेषणात्मक अनुशीलन है किसी भी लेखन या कवि की अभिव्यक्ति को ग्राह करने के लिये यह जान लेना आवश्यक है कि आत्माभिव्यक्ति क्या है। पाश्चात्यमत भारतीयमत इसकी पुष्टि किस रूप में करते हैं। आत्मभिव्यक्ति कवि की स्वयं से प्रेरित है वह सहृदय जनों की सूक्ष्मदर्शी काल्पनिक अनुभूति है जिसे वह आत्मभोगी स्थिति में वाणी देकर अपनी स्वचेतना को अभिव्यक्त करता है। अन्यत्र कुछ विद्वानों के मत हैं कि यह भावों से विरक्ति भावों का पलायन है। आत्माभिव्यक्ति ही व्यक्ति की प्रमाणिक अभिव्यक्ति है इस प्रमाण का आधार है–बौद्धिक चेतना, विवेक, आत्मानवेषण, आत्म–साक्षात्कार। साहित्यकार का आत्म रूपायन आत्म प्रशिक्षित होकर कला रूप में उसके साहित्य में उसका भावोत्कर्ष बन जाता है। कवि का यही आत्मज्ञान उसके बर्हिमुखी व अंतर्मुखी विचारों को उसकी कृति के माध्यम से पाठकों के समक्ष लाता है।

बच्चन के गुण दोषों का मुल्यांकन करना हमारा उद्देश्य नहीं है बल्कि उनके साहित्य के अभिव्यक्ति व अनुभूति पक्ष का विशद विश्लेषण करना ही हमारा ध्येय है उनकी भावाव्यक्तियों को करना इस शोध कार्य का प्रमुख ध्येय है।

मैं आभार प्रकट करना चाहूंगी ईश्वर का जिनकी अनुकम्पा से यह शोधकार्य सम्पन्न हुआ एवं आदरणीय मेरे शोध निर्देशक डा० दिनेशचन्द्र द्विवेदी जी जिनकी प्रेरणा सदैव साथ रही व आदरणीय विष्णुकान्त जी मालवीय जिनके सहयोग से वर्तमान में अनुपलब्ध व अप्रकाशित पुस्तक सामग्री भी सहज उपलब्ध हो सकी।

निधि मालवीय

निधि मालवीय

अनुक्रमाणिका

बच्चन का साहित्यिक परिचय

भूमिका - हिन्दी साहित्य जगत के लिये बच्चन का नाम अत्यन्त जाना पहचाना नाम है। कल्पनाओं को रंग देने व अपनी लेखनी से रंग देने वाले, भावों की कोमल अभिव्यक्ति करने वाले कवि बच्चन हिन्दी काव्य जगत में एक अविस्मरणीय स्थान रखते हैं। गीतकाव्य परम्परा को जो नया आयाम हरिवंश राय बच्चने ने दिया है वह हिन्दी पाठकों के लिये एक अमूल्य देन है। कवि बच्चन काव्य के अतिरिक्त गद्य लेखन में भी उतने ही भावपूर्ण हैं। निबन्ध, कहानियां, समीक्षा, पत्र आदि विधाओं में उनका लेखन दृष्टिगत होता है। आत्मकथा में बच्चने जी को 'सरस्वती' सम्मान प्राप्त हो चुका है जो कि स्वयं में एक बड़ी उपलब्धि है।

जीवन परिचय - २७ नवम्बर १९०७ में प्रयाग में जन्में श्री बच्चन देश के कोने–कोने में अपनी बहुप्रसिद्ध 'मधुशाला' के द्वारा सभी के हृदयों पर छायें हुए हैं। १९५३ में 'मधुशाला' प्रकाशिता हुई आपने म्युनिस्पिल स्कूल, कायस्थ पाठशाला, गर्वनमेंट कॉलेज एवं इलाहबाद यूनीवर्सिटी और काशी विश्व विद्यालय से शिक्षा प्राप्त की। १९४१ से १९५२ तक उन्होंने इलाहाबाद यूनीवर्सिटी में अंग्रजी के प्राध्यापक के रूप में शिक्षण कार्य किया एवं १९५२ से १९५४ तक इंग्लैण्ड में रह कर केम्ब्रिज यूनीवर्सिटी से पी.एच.डी. की उपाधि हासिल की। विदेश से लौटकर उन्होंने अपने पूर्वपद पर एक वर्ष कुछ माह तक अध्यापन कार्य किया। १० वर्ष विदेश मंत्रालय में हिन्दी विशेषज्ञ के पद पर आसीन रहे। छह वर्ष राज्यसभा के मनोनीत सदस्य रहे। वर्तमान पड़ावों पर बच्चन ने कविता का साथ नहीं छोड़ा वे काव्य रचना में हमेशा रत रहे। वर्तमान में भी वे लेखन में रत हैं। आपको अपनी आत्मकथा के लिये भारतीय साहित्य के सर्वोच्च पुरस्कार 'सरस्वती सम्मान' १९९१ से सम्मानित किया गया। इसके अतिरिक्त 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार 'सोवियत नेहरू लैंड' पुरस्कार एफ्रोशियन राइटर्स कान्फ्रेंस का 'लोटस' पुरस्कार भी मिल चुका है। राष्ट्रपति ने उन्हें 'पद्मविभूषण' से अलंकृत किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने उन्हें 'साहित्य वाचस्पति' की उपाधि प्रादन की।

सर्वप्रथम इनका कविता संग्रह 'तेरा हार' १९३२ में प्रकाशित हुआ। बच्चन के इस कविता संग्रह के प्रकाशित होने पर तत्कालीन पत्र पत्रिकाओं 'प्रताप', 'चाँद', 'हंस', 'वीणा'

आदि में प्रशंसा की गई बच्चन का कवित्व पाठकों के समक्ष उभरकर आ रहा था और हिन्दी साहित्य इसे स्वीकार भी कर रहा था।

१९३३ में उमर खैयाम की रूबाइयों का अनुवाद किया। 'रूबापात उमर खैयाम' को बच्चन अपने साहित्य काव्य एवं जीवन का प्रेरणा स्रोत मानते हैं। हर कवि लेखक की एक प्रेरणा होती है वही प्रेरणा उसे भाव जगत की अभिव्यक्ति में उच्च शिखर पर पहुंचा देती है। 'खैयाम की मधुशाला' बच्चन की वही प्रेरणा स्त्रोत काव्यमयी धारा थी। इसी काव्य धारा से 'मधुशाला' का जन्म हुआ और आगे 'मधुकलश' 'मधुबाला' इसी श्रंखला में जुड़ती गयी। 'मधुशाला' ने ही हिन्दी गीत काव्य में एक 'युग' का निर्माण किया है।

बच्चन ने छायावादी युग में गीतों की एक नयी शैली हिन्दी साहित्य को प्रदान की इनके गीतों मे छायावाद के भाव के साथ–साथ स्वच्छंदतावाद (रोमैंटिस्म) का भी उल्लेख है। विचारों को स्वछंद छोड़ दिया है। वही लेखनी के माध्यम से बच्चन की कविता में विचरण करते हैं। 'सतरंगनी' प्रणय पत्रिका का काव्य साहित्य इन्हीं (रोमैंटिक चित्र) स्वच्छंदतावाद पर आधारित है। लेकिन काव्य में कहीं असंगति नहीं आने पायी है। मानस के भाव पटल पर अंकित बच्चन के आन्तरिक विचार एवं आत्मा की अभिव्यक्ति उनके साहित्य में अंकित हुई है। उनके साहित्य में जीवन–मृत्यु, जय–पराजय, ह्रास–अश्रु, शक्ति–दुर्बलता की कथा है। कहानीकार न होनेपर भी अपकी कवितायें कहानी की ही तरह आदि और अन्त तक एक तारतम्य में पिरोयी गयी हैं, जहां पाठक जिज्ञासु रहता है। जीवन के विभिन्न सोपानों पर व्यक्ति कभी स्वयं को एकाकी पाता है, कभी सर्वत्र विश्व को अपना ही रूप समझता है इन भावों को सरल एवं प्रवाहमयी भाषा में बच्चन ने चित्रित किया है।

लेखन एवं पत्रकारिता का एक गहरा सम्बन्ध है पत्रकारिता के क्षेत्र में बच्चन ने १९३२ में 'पायनियर' में जिला कचहरी संवाददाता के रूप में कार्य किया यह पत्र इलाहाबाद से ही प्रकाशित होता था। १९३६ के समय प्रयाग में ही 'अभ्युदय' प्रैस में वे सम्पादक कोष विभाग में अपनी सेवा का योगदान दिया। १९३४ में आप अग्रवाल विद्यालय में अध्यापक नियुक्त हुये। बच्चन के जीवन काल में एक भारी उथलपुथल का समय आया १९३६ में उनकी पत्नी का देहावसान हुआ। संसार के अधिकांश कवि एवं लेखक वियोग से ही भावजगत में शामिल हुए बच्चने के जीवन का यही वियोग उनके काव्य में उद्घाटित हुआ। एक वर्ष तक उनकी लेखनी एकदम मौन रही। यही शान्ति उनके भविष्य में आने वाले काव्य की धरणा बनी। १९३७ में उनका मौन (लेखनी का) टूटा और 'निशानिमन्त्रण' के रूप में

उनके भाव हृदय से निकल कर कविता में सिमटने लगे और निशा निमन्त्रण की प्रथम पंक्ति आपने लिखी–

'दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।'

१९३८ में परस्नातक होने के उपरान्त बनारस में ट्रेनिंग कॉलेज में प्रविष्ट हुए जहां उन्होंने 'एकांत संगीत' की रचना आरम्भी की। 'आकुल अन्तर' विकलविश्व, एवं 'धार के इधर–उधर' जैसी भाव पूर्ण कृतियों की रचना की। कवि बच्चन दुख से तपकर काव्य जगत में स्वर्ण की भांति दैदीप्यमान हो रहे थे। 'वियोगी होगा पहला कवि' की आह से ये गीत काव्य के गान उभरकर साहित्य के पटल पर आते रहे। अपनी कविता के साथ जीवन जीते हुए बच्चन १९४२ में विवाहसूत्र में बंध वहीं से अपके काव्य में संयोग का भाव जागृत हुआ एवं उनकी कविताओं में आशावादिता, प्रेरणा, आकांक्षा, प्रफुल्लता जैसे भाव दृष्टिगत होने लगे। पतझड़ के उपरान्त जिस प्रकार वसन्त अपनी नयी छवि, नवीन हरीतमा लेकर आता है उसी तरह बच्चन के काव्य में भी मोड़ आया।

१९५२ में बच्चन अंग्रेजी साहित्य पर शोधकार्य हेतु कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय गये जहां उन्होंने महाकवि कीट्स प़र शोधकार्य किया उन्हीं से अपनी कविताओं में यत्र–तत्र प्रेरणा भी ली। उनके अध्ययन पर पर्याप्त प्रभाव देखा जा सकता है। १९५५ में बच्चन जी डाक्टरेट की डिग्री हासिल करके वापस प्रयाग आये और आकाशवाणी में हिन्दी प्रोडयूसर का पद्भार संभाला। १९५८ में विदेश मंत्रालय में विशेषाधिकारी का पद स्वीकार करने का निमन्त्रण मिला। इन सभी जीवन के उत्थान–पतन आशा–निराशा के मध्य बच्चन का कृतित्व वैसे ही जारी रहा। काव्य प्रतिभ और ज्यादा परिपक्व होती गयी।

बच्चन एक संवेदनशील साहित्यकार है उनके साहित्य में संवेदना का पुट सर्वत्र व्याप्त है। अगाध संवेदनशीलता तो उनके काव्य में ही दृष्टिगत होती है। उनके साहित्य में उनकी संवेदना उनकी अभिव्यक्ति बनकर उभरी है। आत्मसंवेदना ही आत्माभिव्यक्ति के रूप में विद्यमान है।

बच्चन ने छायावाद के उत्तरकाल में कविता को एक नये आधुनिक मोड़ पर पहुंचाने और उसे आगे ले जाने का प्रयास किया है वे हिन्दी में एक नयी काव्य धारा के प्रवर्त है और उसे निरंतरता प्रदान करके कवि कर्म को एक स्तंभ प्रदान किया है। छायावादी कवियों की श्रेणी में बच्चन एक अनुभूति प्रधान कवि हें कल्पना के स्थान पर अनुभूति परक

कवितायें रची। अनुभूति के क्षेत्र में नारी अधरों में मिलन–विछोह की परिधितक ही सीमित नहीं रखा वरन् जन–सामान्य की मानसिकता के स्तर पर मूर्त कर उसमें भावनात्मक गहनता एवं व्यक्ति परक अन्य बौद्धिक तत्वों का भी समावेश किया।

बच्चन जी का सृजन संसार

बच्चन प्रमुखतया तो कवि हैं उनकी रचनायें काव्य रूप से ही ओतप्रोत हैं काव्य ही उनका जीवन ध्येय है। उनका काव्य, करूणा–मिलन, वेदना–पीड़ा आदि भावों से भरपूर रहस्यात्मक अनुभूति लिये हुए, प्रतीत होता है। हृदय के कोमल भाव लेखनी के माध्यम से साहित्य में फैल गये हैं। अपनी काव्यकृतियों के माध्यम से एक असाधारण माधुर्य एवं सहजभाव का समावेश किया है। काव्य में दो प्रकार की रचनायें होती हैं : प्रथम करियत्री प्रतिभा एवं द्वतीय भावयत्री प्रतिभा। इसी भावयत्री प्रतिभा बच्चन जी के काव्य में यत्र–तत्र दृष्टिगत होती है। 'निशा निमंत्रण' के भाव साहित्य जगत में रचना को अमर कर देते हैं। काव्य के अतिरिक्त बच्चन ने गद्य लेखन में भी अपनी लेखनी चलायी है। अपने साहित्य जीवन के प्रारम्भ में वे कहानियां भी लिखते थे। पत्र, संस्मरण, निबन्ध पर भी उनकी कलम से निकले हैं जहां पद्य में 'मधुशाला' पाठकों के हृदय पर एक भावनामयी पूर्ण गीतकार की छाप अंकित किये थी वहीं गद्य लेखन में आत्मकथा में उनकी गद्यशैली, भाषा का प्रवाह एवं गद्यात्मक तारतम्यता दृष्टिगत होती है। उनकी आत्मकथा को हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे महान् गद्य लेखक ने 'युगों की अविस्मरणीय घटना' तक कह डाला है।

काव्यकृतियां -

तेरा हार, मधुशाला, खैयाम की मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश, निशा निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल अन्तर ये कृतियां बच्चन के साहित्य जीवन के आरम्भ की हैं एवं प्रारम्भिक रचनायें तीन भागों में प्रकाशित हुई है। हलाहल, बंगाल का काल, खादी में फूल, सूत की माला, मिलन यामिनी, सोपान, प्रणय पत्रिका, धार के, आरती और अंगारे, बुद्ध और नाचघर, त्रिभंगिमा, दो चट्टाने, बहुत दिन बीते, उभरते प्रतिमानों के रूप जाल समेटा, नई से नई पुरानी से पुरानी आदि बच्चन की काव्य कृतियां हैं इनकी काव्य कृतियों में अगाध संवेदनशीलंता, बिम्बात्मक रूपायन एवं भाव प्रवणता है।

कहानी

कोई भी कृति स्वयं में एक कहानी कहती है बच्चन की रचनाओं में कहानी जैसी शैली एवं पाठक के लिये जिज्ञासा उत्पन्न करने वाले भाव हैं। आरम्भ में बच्चन में कहानियां भी लिखीं जो तत्कालीन पत्रिका 'हंस' में प्रकाशित हुई थी। आपकी कहानी 'हृदय की आंखें' प्रारम्भिक रचनाओं में, भी बच्चन की कहानियां सम्मिलित है।

निबन्ध

निबन्ध लेखन में कवि की रूचि यत्र तत्र दृष्टिगत होती है किन्तु निबन्ध जैसा एक सार लेखन कवि हृदय के भावों को कैसे समेट सकता है। बच्चन का एक निबन्ध संग्रह 'नये पुराने झरोखे' प्रकाशित हुआ इसके अतिरिक्त 'चार खेमे चौसठ खूंटे', टूटी हुई कड़ियां आदि निबन्ध लिखे हैं।

अनुवाद

'खैयाम की रूबाइयों' का अनुवाद करके बच्चन स्वयं उनमें डूब गये यही रूबाइयां उनके जीवन के महत्वपूर्ण काव्य की नींव सिद्ध हुई। बच्चन ने निम्न कृतियों के अनुवाद हिन्दी में किये – 'नागर गीता, रूसी कवितायें, नेहरू राजनीतिक जीवन चरित्र, भाषा अपनी भाव पराये। ओथोलो किंग लियर, बच्चन ने जिन कृतियों के अनुवाद किये उनके भाव ज्यों की त्यों पाठक के समक्ष प्रस्तुत कर दिये। भाव कहीं भी परिवर्तित नहीं होने पाये हैं।

पत्र

हिन्दी साहित्य में अनेक विद्याओं में पत्र भी एक विधा के रूप में आती है पत्र में व्यक्ति अपने मन के भाव दूसरे व्यक्ति तक स्थानांतरित करता है। बच्चन ने कई पत्रों का संकलन कर सम्पादन किया एवं स्वयं भी पत्र लिखे जो निम्न है – बच्चन के नाम पंत के सौ पत्र, बच्चन के नाम पंत के दो सौ पत्र, बच्चन के पत्र, आदि पत्र हिन्दी साहित्य जगत के लिये धरोहर के रूप में प्रतिष्ठित है।

डायरी

'प्रवास की डायरी' जो उनकी विदेश यात्रा के दौरान लिखी गयी।

आत्मकथा

बच्चन की आत्माभिव्यक्ति की पूर्णता उनकी आत्मकथा से दृष्टिगत होती है। आत्मकथा चार भागों में लिखी गयी है –

क्या भूलूँ क्या याद करूँ
नीड़ का निर्माण फिर
बसेरे से दूर
दशद्वार से सोपान तक

संकलन

'सोपान'
आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि सुमित्रानन्द पन्त – मेरी कविता की आधी सदी।
आठवें दशक की श्रेष्ठ प्रतिनिधि कवितायें मेरी श्रेष्ठ कवितायें।

समीक्षा

एक कवि एवं लेखक के लिये समीक्षक होना अत्यन्त आवश्यक है बच्चन तो कविता में सम्पूर्ण संसार की समीक्षा करते हैं। कवि भावों का समीक्षक होता है। साहित्य में विधा की दृष्टि से समीक्षा बच्चन ने कवि पन्त पर लिखी है यथा –

'कवियों में सौम्य सन्त पन्त'

बच्चन के अन्दर बैठा हुआ समीक्षक उनकी आत्मकथा में अनेक स्थानों पर दृष्टिगत हुआ है।

बाल साहित्य

बाल साहित्य पर निम्न रचनायें लिखी हैं – जन्म दिन की भेंट, नीली चिड़िया, बंदर बांट।

बच्चन की रचनाओं के सम्बन्ध में चन्द्रगुप्त विद्यालंकार ने 'आज के हिन्दी कवि' पुस्तक में लिखा है **'बच्चन जी अपनी रचनाओं की प्रेरणा का स्रोत अपने जीवन की अनुभूतियों को ही स्वीकार करते हैं'**

उपरोक्त रचनाओं द्वारा बच्चन ने साहित्य जगत में एक विशिष्ट स्थान बना रखा है। उनकी रचनाओं पर आलोचक दृष्टियों ने यह आरोप भी लगाया है कि वे आत्मपरक एवं नितांत व्यक्तिगत है। इस आरोप को वे सहर्ष स्वीकार करते हैं एवं जीवन को आत्मानुभव का एक साधन मानते हैं अपनी रचनाओं में अनुभवजनित हृदय एवं मस्तिष्क की सम्मिलित, सांमजस्य पूर्ण भावना का ही भाव उद्घाटित किया है।

साहित्यिक विशेषतायें

बच्चन साहित्य 'हालावादी' के प्रतीकात्मक रूप में हिन्दी जगत में प्रविष्ट हुआ है उनकी कविता में विद्रोह, नवजीवन की भावनाओं का सन्देश लिये हुए है आपने अपनी रचनाओं के द्वारा हिन्दी कविता में असाधारण माधुर्य भाव एवं सहज भाव का समावेश किया है। उनकी हाला विद्रोह एवं नवजीवन का प्रतीक है। किसी साहित्यिक रचना में मुख्य पहलू होते हैं उसके भाव एवं भाषा, कल्पना शक्ति लय एवं तारतम्यता, कला पक्ष बच्चन के साहित्य में दृष्टिगत होते हैं।

बच्चन के साहित्य में विषय व्यापकता प्रर्याप्त रूप से देखी जा सकती है। जीवन–मृत्यु के सम्बन्ध में उन्होंने अनेक काव्य रचनायें की हैं। जीवन के दर्शन को पंक्ति बद्ध करके उसके अर्थ को व्यापक बना दिया है। 'मधुशाला', 'हलाहल' आदि रचनाओं में बच्चन के इसी गुण का परिचय मिलता है। जैसे –

कि जीवन आशा का उल्लास,
कि जीवन आशा का उपहास,
कि जीवन आशामय उद्‌गार,
कि जीवन आशाहीन पुकार।

जीवन शब्द ही अपने आप में व्यापक भाव लिये हुए हैं उसी जीवन की व्याख्या करके बच्चन ने अपने साहित्य में विषय व्यापकता ला दी है। अपने काव्य में 'मदिरा' एवं हलाहल को आधार बना कर समग्र जीवन की विभिन्न दशाओं एवं वृत्तियों का अंकन किया है। आपके साहित्य में संस्कृति, नीति, अध्यात्म, कल्पनाशीलता आदि में जीवन के प्रति दृष्टिकोण निम्न पंक्तियों से परिलक्षित होता है –

क्षीण, क्षुद्र, क्षण भंगुर दुर्बल

मानव मिट्टी का प्याला
भरी हुई है जिसके अन्दर
कटु-मधु जीवन की हाला
मृत्यु बनी है निर्दय साकी
अपने शत-शत कर फैला
काल प्रबल है पीने वाला
संस्कृति है यह मधुशाला।

उपरोक्त पंक्तियों में बच्चन की काव्य प्रतिभा इस तथ्य से दृष्टिगत होती है कि अपनी दो चार पंक्तियों में ही काल, जीवन की क्षणभंगुरता, मृत्यु जैसे व्यापक विषयों को समेट लिया है। बच्चन के साहित्य में अन्यत्र भी तमाम अछूते विषयों पर लेखन दृष्टिगत हुआ है। बच्चन के इस प्रकार के गीतों में अवचेतन में दर्शन एवं आध्यात्मिकता है। किसी भी साहित्य की यह प्रमुख विशेषता मानी जाती है कि जिस काल एवं विषय पर वह रचा गया है उस विषय का साहित्यकार या कवि को व्यापक ज्ञान है। बच्चन ने जीवन सम्बन्धी विषयों को व्यापक अर्थ में अपने काव्य में सम्मिलित किया है। अपनी आत्मकथा में भी बच्चन ने अपनी जीवनी में अतिरिक्त अन्य विषयों पर भी प्रकाश डाला है। वे अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि – **'सम्पूर्ण मरण से मनुष्य इतना घबराता है कि कथित अमरत्व में भी कुछ सान्त्वना का अनुभव करता है। हलाहल का अमरत्व दार्शनिक के नहीं, कलाकार के तर्कों पर आधारित है'।**

भाव प्रवणता

कवि भाव लोक का संरक्षक होती है भावों को अपनी कविता में व्यक्त करके वह अपने हृदय की पिपासा शान्त करता है। बच्चन के साहित्य में भावों का समावेश सर्वत्र हुआ है कविता तो भावना का दूसरा नाम है, यही मानसिक भावना कभी विरह, कभी मिलन, कभी पीड़ा के रूप में कविता में उपजती है। बच्चन की आदि से अब तक की कविताओं में काव्य यही भाव उद्घाटित हुए हैं भाव विदग्धता में अनेक उदाहरण उनके काव्य में देखे जा सकते हैं। 'प्रणय पत्रिका', 'निशा निमंत्रण', सतरंगनी' आदि कवितायें बच्चन के साहित्य में भाव पक्ष को उजागर करती हैं 'भाव की चरमावस्था' की जो भावना रहती हे वह कम ही कवियों में पायी जाती है किन्तु बच्चन की अधिकांश कविताओं में भावों की चरमावस्था के दर्शन होते हैं जिन्हें पाठक आदि से अन्त तक ही पढ़कर छोडता है। वेदना का भाव कवि हृदय में जब

उठता है तो कविता प्रवाहित होती है – यथा –

आज मेरी वेदना दृग
में तुम्हारे छलछलाई,
आह की प्रतिध्वनि तुम्हें दूं
पास मेरे लौट आयी।

आज तो मैंने हृदय की
वेदना साकार पा ली
वेदना का गीत गाकर
वेदना तुम में बंटा ली।

प्रेमी हृदय के वियोग का यह भाव बच्चन के काव्य में प्रायः देखने को मिलता है। भाव साहित्य में कई प्रकार के होते हैं आशा का भाव निराशा का भाव, विरह का भाव प्रफुल्लता का भाव ये ही भाव जब व्यक्ति के मन में मंथन शुरू कर देते हैं और वे बाहर आने कि लिये उतावले हो उठते हैं तभी सृजन होता है साहित्य का। बच्चन के साहित्य में भी भाव बाहुल्य सर्वत्र विद्यमान है यही कारण है कि उनके अनुवादों में भी मूलकृति का भाव ज्यों का त्यों है भाषा परिवर्तित हो गई है एक अनुवाद का शीर्षक ही उन्होंने 'भाषा अपनी भाव पराये' रखा है। सच्चा कवि एवं लेखक वही है जो दूसरों के भाव को भी अनुग्रहीत करे बच्चन के साहित्य में ये गुण विद्यमान हैं चाहे वो 'खैयाम की मधुशाला' हो या शैक्सपियार का 'मैकवैथ' विश्व के महान् कवियों के हृदय से निकले हुए वेदना, प्रफुल्लता करूणा के सब भाव बच्चन ने ग्राह्य किये हैं उनसे प्रेरणा ली है एवं अपनी कृतियों मं उनको स्वीकार भी किया है। यही कारण है कि उनके साहित्य में भावप्रबलता परिपक्वता के साथ समाहित है। 'सतरंगनी' भावों का इन्द्रधनुषी संग्रह है जिसमें व्यक्ति के जीवन के आनेवाले प्रत्येक आशा–निराशा, विजय–उल्लास, लालसा–पिपासा, प्रेम–संघर्ष, अभिसार–मिलन, रहस्य–रोमांच, स्नेह–दाह, कर्त्तव्य–विश्वास आदि भावों का समिश्रण हैं बच्चन के साहित्य में भाव माधुर्य है। शिल्प से ज्यादा भावनाओं पर ही केन्द्रित रचनायें की हैं। यथा –

आज मुझसे दूर दुनियां
भावनाओं से विर्निमित
कल्पनाओं से सुसज्जित,
कर चुकी मेरे हृदय का स्वप्न चकनाचूर दूनियां

आज मूझसे दूर दुनियां।

हृदयगत भावों की अपूर्णता, अभिलाषाओं की विफलता, सौन्दर्य की नश्वरता, मानवीय दुर्बलताओं के प्रति सहानुभूति यही भाव बच्चन के साहित्य में उनकी आत्माभिव्यक्ति करते हैं। 'सतरंगनी' की भूमिका में वे स्वयं लिखते हैं – **'मैं अपने यौवनकाल से अपनी अनुभूतियों और कल्पनाओं को निरंतर मुखरित करता रहा हूँ। .... शायद कविता इसी प्रक्रिया से संस्कारों को बनाने और संवारने में सहायक होती है।**

बच्चन ने अपनी कृतियों में मानव हृदय को देखा है उनकी कविता के विषय मनुष्य का दुख सुख शोभा, विषाद हर्ष विभर्ष, संघर्ष उसके मन प्राणों का मंथन चित्रित किया है। इनके साहित्य में जहां 'हलाहल' में जीवन के प्रति निराशा एवं चर अचर जगत के सम्बन्ध में आध्यात्मिक भाव व्यक्त हुए हैं वहीं 'मधुशाला' में जीवन के विभिन्न क्रियाकलापों जीवन मृत्यु के सम्बन्ध में आशावादी भाव हैं। निशा निमन्त्रण में एक संवेदना, से ओत–प्रोत प्रणयी का भाव है। 'सतरंगनी' पाठकों के बीच आशा उल्लास एवं प्रफुल्लता का भाव लेकर आयी। संयोग का संचारी भाव उनके 'मयूरी' आदि गीतों में दृष्टिगत हुआ है। 'आकुल अतंर' एवं 'एकान्त संगीत' जैसी रचनायें वेदना, निराशा एकाकीपन की पीड़ा का भाव लिये हुए हैं। बच्चन अपने जीवन में जिस परिस्थिति एवं वातावरण से प्रेरित हुए, आहत हुए या प्रसन्न हुए निराश हुए वही उन्होंने साहित्य में अभिव्यक्ति किया है। भावजगत की सुन्दर भूमि में उन्होंने अपने गीतों की रचना की। काव्य को भावप्रवणता प्रदान की। कविताओं में सहज भाव सर्वत्र दिखाई पड़ता है। तत्कालीन वातावरण या घटना पर उनमें जो भाव उमड़े उन्हें लेखनीबद्ध कर दिया जैसे 'बंगाल का काल' 'बापू के प्रति' ये कवितायें, तत्कालीन परिस्थिति से प्रेरित होकर लिखी गयी जहां एक ओर 'बंगाल का काल' में विद्रोह एवं क्षोभ का भाव है वहीं 'बापू के प्रति' में सम्मान एवं उनके आदर्शो के प्रति श्रद्धा का भाव है।

कलापक्ष

बच्चन के साहित्य में भाषा एक लयात्मक तारतम्यता के साथ दृष्टिगोचर होती है। किसी भी साहित्य का प्रमुख अंग उसकी भाषा है। जहां हिन्दी में क्लिष्ट शिल्पगत भाषा का प्रयोग करने वाले कवि एवं विद्वान अपनी कृतियों द्वारा अमर हुए हैं वहीं तुलसी, कबीर की भांति साधारण जनमानस की बोली वाली रचनायें विश्व विख्यात हुई हैं। बच्चन ने स्वयं

स्वीकार किया है कि वह काव्य शास्त्र की दुरूहता से दूर रहे हैं भाव को ही मुख्य स्थान दिया है। गीतों में लय एवं छन्द बद्ध कवितायें लिखी हैं। बच्चन जिस युग में साहित्य सृजन कर रहे थे उस युग में छायावाद का ही जोर अधिक था। सर्वत्र हिन्दी साहित्य में 'छायावादी' कोमल सुर एवं लय से पूर्ण भाषा में रचनायें लिखी जा रही थी। कल्पना की इन्द्रधनुषी मरीचिका में तत्कालीन कवि अपने काव्य को भावानुरूप शुद्ध हिन्दी खड़ी बोली की भाषा में ही अपना रहे थें। वही प्रयोग बच्चन ने किया। 'मधुशाला' की प्रसिद्धि ने यह सिद्ध कर दिया कि एक लय एवं तुकबन्दी में रची गयी रचना जो कि कर्ण प्रिय भी हो सहृदय पाठकों को आर्कषित करती है। बच्चन ने शब्दों की अन्तरात्मा को अपने काव्य में ग्रहण किया है तथा उन्हें पहचान कर उनका प्रयोग किया है।

बच्चन ने अपनी भाषा को प्रचलित एवं व्यवहारिक शब्दों से समृद्ध बनाया है। भाषा में प्रवाह का गुण उनकी अधिकांश रचनाओं में दृष्टिगत होता है। मधुशाला के इन पंक्तियों में भावना भी है और प्रवाह भी है –

मुसल्मान और हिन्दू है दो
एक मगर उनका प्याला
एक मगर उनका मदिरालय
एक मगर उनकी हाला
दोनों रहते एक न जब तक
मस्जिद मंदिर में जाते
बैर बढ़ाते मस्जिद मंदिर
मेल कराती मधुशाला।

बच्चन अपनी भाषा में अलंकरण एवं कृत्रिमता, के मोह में नहीं पड़े हैं। 'मधुशाला' 'हलाहल' आदि काव्य कृतियों की भाषा हिन्दी खड़ी बोली है जिसमें अरबी, उर्दू, फारसी के सरल शब्दों का सार्थक प्रयोग हुआ है। गीतात्मकता का गुण कई रचनाओं में दृष्टिगत होता है। 'सतरंगनी के गीत लयात्मक एवं सुरीले हैं। बच्चन ने शब्दों को एक तारतम्य में प्रस्तुत किया है। एक शब्द की आवृति के द्वारा काव्य को मनोहारी बना दिया है। यथा –

सतरंगनी, सतरंगनी
काले घनों के बीच में,

काले क्षणों के बीच में
उठने गगन में लो लगी।
यह रंग बिरंग बिहंगनी
सतरंगनी,सतरंगनी।

बच्चन ने अपने साहित्य में भाषा का सामंजस्य बनाने हेतू उूर्द, फारसी शब्दों का प्रयोग किया है। 'मधुशाला' चूंकि 'उमर खैयाम की रूबाइयों' से प्रेरित थी अतः उसकी भाषा भी उर्दू हिन्दी मिश्रित है। 'साकी' शब्द उसी से प्रेरित हैं अन्यत्र भी जैसे किस्मत, इन्कार आदि शब्द भी देखने को मिलते हैं। यथा–

रहे मुबारक पीने वाले
खुली रहे यह मधुशाला

एक ही शब्द का प्रयोग अनेक बार करके भाषा को सुन्दर बनाया है। जैसे सतरंगनी मं 'नवल' शब्द की आकृति से ये पंक्तियां प्रवाह एवं नवीनता संयुक्त हुई है।

नवल हास
नवल हास
जीवन की नवल सांस
नवल अंग
नवल रंग
जीवन का नवल संग।

इस प्रकार के गीत बच्चन के काव्य में अधिक दृष्टिगत होते हैं।

गद्य में भी बच्चन की भाषा ओजस्वी एवं सुपाठ्य हे। अपनी अभिव्यक्ति को सरल एवं सुन्दर शब्दों में उन्होंने व्यक्य कर गद्य लेखन में भी महारथ पा लिया है। आत्मकथा में एक उदाहरण इस प्रकार है –

दुःख-सुख, शोक, चिन्तायें प्रत्येक मनुष्य के जीवन में आया करती हैं और वह इन्हें झेलता हुआ टूटता, कुछ बनता है। कलाकार इन्हीं में मानवता के दुःख-सुख, शोक चिन्ताओं को देख लेता है। उन्हें झेलने भोगने की वस्तु से आस्वादन का विषय बन देता है।

उनके भाव एवं शैली के विषय में चन्द्रगुप्त विद्यालकर लिखते हैं – **'भाव की दृष्टि से हिन्दी कविता को बच्चन की देन अत्यन्त महत्वपूर्ण है ही इसके अतिरिक्त शैली की सरलता और माधुर्य की दृष्टि से भी हिन्दी कविता को बच्चन की यह देन निःसन्देह नवीन दिशा देने वाली सिद्ध हुई है।'**

बच्चन ने अपने साहित्य में भिन्न–भिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। प्रतीकात्मक, गवेषणात्मक एवं तथ्यात्मक शैलियों द्वारा साहित्य को ओजस्वी एवं सुपाठ्य बनाया है। माध ुर्य भाव तो उनकी हर कृति में उपस्थित है। भाषा एवं शैली में माधुर्य तभी आता है जब वह शब्दों के उलझाव से तटस्थ रहती है एवं सुन्दर शब्दों को सरल ढंग से पाठक के बीच उपस्थित करना ही अच्छे साहित्य का गुण है यही गुण बच्चन के साहित्य में विद्यमान है। वे क्लिष्ट भाषावली के चक्रव्यूह में नहीं पड़े हैं, अपनी रचनाओं में आत्माभिव्यक्ति को निष्कपट रूप से प्रस्तुत कर दिया है। यही उनकी शैली है आलोचनाओं एवं समीक्षओं में भी वे सहज रूप से व्यक्त हुए हैं काव्य में तो मधुर शब्दों एवं उपमाओं के प्रयोग से काव्य को सुन्दरता प्रदान की है। बिम्बात्मक रूपायन द्वारा भी काव्य को समृद्धशाली किया है। गद्य का एक सुन्दररूपायन उपरोक्त पंक्तियों में दृष्टिगत होता है –

त्वचा के उपर रंगरोगन मांस में दौड़ते स्वस्थ रक्त की जिनती आभा है कविता में उतनी ही कला मुझे सह्य है। जो कवि है यानि भावों का धनी है अनुभूतियों से विदग्ध ा है उसे 'कवित विवेक' की आवश्यकता नहीं'।

बच्चन ने अपने साहित्य को सरल एवं सीधा बनाया है किन्तु उनकी भाषा में शक्ति है जो हृदय तक पहुंचती है काव्य में संवेदना है जो मानसिक तुष्टि प्रदान करती है।

काव्य में प्रतीकों का प्रयोग आदि काल से ही चला आ रहा हैं प्रकृति वर्णन या पशुपक्षी आदि प्रतीकों के रूप में काव्य में प्रयोग किये जाते रहे हैं। मयूर हंस, नागिन आदि प्रतीकों का प्रयोग कर बच्चन ने अपने काव्य को और अधिक सहज बनाया है। प्रतीकात्मक शैली मे रचना का व्यक्त करना प्रेमीजन की पीड़ा का वर्णन ये सारे काव्य गुण बच्चन की कविता में विद्यमान हैं। या यों कहें बच्चन की हर कविता में प्रतीक विद्यमान है। कविता में प्रतीकों का प्रयोग करते समय बच्चन ने एक लक्षण को ध्यान में रखा है 'अजहत्स्वार्थ'। जिसमें 'लक्षक' शब्द अपने वाच्चार्थ न छोड़कर कुछ भिन्न या अतिरिक्त अर्थ भी प्रगट करता है। आपकी कविता–प्याले का परिचय 'मधुशाला, मयुरी' में यह लक्षण अधिक प्रकाश में

आता है। जिसे नारी का प्रतीक माना है। वह मयूरी है –

मयूरी
नाच, मगन-मन नाच
निछावर इन्द्रधनुष तुझ पर
मयूरी, उन्मन-उन्मन नाच
मयूरी, झूम-छनाछन नाच
मयूरी, नाच मगन-मन नाच

हंस का प्रतीक–

व्योम पर छाया हुआ तम तोम
है हिम हंस तू जाता कहाँ है
नील-नीलभ नभ निमंत्रण दे किसी को
तो करे इंकार कैसे
आंख जिनके हो न उनको चांद-सूरज
की किरण से प्यार कैसे।

नागिन का प्रतीक नारी के सन्दर्भ में इस प्रकार प्रयोग किया है कि नारी का रोद्र रूप नागिन है एवं वही माया का रूप है –

तू नाग यानि नागिन नहीं
तू विश्व विमोहक वह माया
जिसके इंगित पर युग-युग से
यह निखिल विश्व नचता आया।

उपरोक्त प्रतीकों के द्वारा बच्चन ने अपने काव्य को मनोहारी बना दिया है प्रतीकों के द्वारा मानव मन की सूक्ष्मता एवं भावों, संवेगों का वर्णन कवि ने भली भांति किया है। वर्णात्मक शैली भी बच्चन के साहित्य में विद्यमान है। गद्य बच्चन के साहित्य में वर्णतम्क शैली का प्रयोग अधिक हुआ है। किसी देश या स्थान का वर्णन करते समय लेखक वर्णात्मक शैली का प्रयोग करता है यह उसकी प्रतिभा पर निर्भर करता है कि वह किस वस्तु, स्थान या व्यक्ति के चरित्र का वर्णन कर रहा है। वह पाठकों के समक्ष, किस तरह प्रस्तुत

होती है। आनी आत्मकथा में बच्चन ने कई स्थानों पर शैली का प्रयोग किया है। बच्चन जी के वर्णन करने का ढ़ंग इतना प्रभावात्मक है कि एक बार पढ़ लेने के बाद तत्सम्बिन्धित विषय एवं व्यक्ति का चित्र ही आंखों के समक्ष उपस्थित हो जाता है। आत्मकथा के प्रथम भाग 'क्या भूलूँ क्या याद करूं' के आरम्भ में उन्होंने अपने वंश एवं अपनी जीवन सम्बन्धी घटनाओं का वर्णन बहुत सुन्दर ढंग से किया है कि पाठक की रूचि उत्पन्न हो जाती है। काव्य में प्रकृति का वर्णन इस सीमा तक किया है कि उन्हें प्रकृति का कवि तक कहा जाने लगा लेकिन वे स्वयं को केवल प्रकृतिचित्रण का ही कवि नहीं मानते हैं। 'बंगाल का काल' कविता में बंगाल की तत्कालीन परिस्थिति एवं वहां का करूण दृश्य अपने काव्य में सचित्र एवं सजीव कर दिया है। रात्रिकाल का वर्णन 'निशा निमंत्रण' में बच्चन कितना सटीक करते हैं कि सन्ध्या का चित्र व्यक्ति के मन में उभर आता है। यथा–

कोई पार नदी के गाता।
भंग निशा की नीरवता कर
इस देहाती गाने का स्वर
ककड़ी के खेतों से उठकर आता जमुना पर
लहराता
कोई पार नदी के गाता।

गद्य लेखन में वर्णात्मक शैली का प्रयोग अधिक किया है। वर्णन करते समय बच्चन मानों उसी स्थान एवं उसी काल में पहुंच जाते हैं स्वयं को भी उसी में आत्मसात् करके ही वे किसी स्थान का वर्णन करते हैं। वर्णन करने का महत्वपूर्ण पहलू भी यही है कि जिस विषय में लेखक पाठक को बनाना चाहता है उससे सम्बन्धित गूढ़ ज्ञान स्वयं उसको भी हो यही ज्ञान एवं जानकारी उसके लेखन में दृष्टिगत हो, बच्चन के साहित्य में या ज्ञान सर्वत्र देखने को मिलता है। यदि किसी ऐतिहासिक शहर का वर्णन वे करते हैं तो उस शहर से सम्बधित घटनायें भी उन्होंने अपनी पुस्तकों में लिखी है।

रूस यात्रा के उपरान्त उन्होंने 'समरकन्द' का ऐतिहासिक वर्णन एवं सांस्कृतिक कलाओं का वर्णन वहां की भाषा संस्कृति का वर्णन निम्न पंक्तियों में कितने सहज एवं प्रभावशाली ढंग से किया है –

'नया समरकन्द किसी आधुनिक नगर जैसा है जिसका निर्माण १६वीं और

२०सवीं शताब्दी में रूसियों द्वारा किया गया है।

समरकन्द एशिया के प्राचीनतम् नगरों में से है .... कहते है कि अपने विश्व विजय के अभियान में सिंकदर ने समरकंद पर भी हमला किया था। जो अब यह बस्ती किसी और नाम से जानी जाती है। मंगोल चंगेज खां ने भी इसे लूटा था। उसपर तुर्क, अरबों, उजबेकियों, फारसियों के हमले भी बराबर होते रहे'।

प्रतीकात्मक, वर्णात्मक शैलियों के अतिरिक्त बच्चन ने सहित्य में ओजपूर्ण शैली गीतशैली, छन्दशैली, पदशैली, लोकगीतशैली आदि का सफल प्रयोग किया है। इन सब शैलियों का प्रयोग तो अन्य कवियों द्वारा भी किया गया लेकिन बच्चन की जो नवीन, शैली स्वयं की थी वह 'हालावादी' शैली। साहित्य में हालावाद का आगमन इन्हीं के साहित्य से हुआ और इसी 'हालावादी मादक शैली' में आपने मदिरा मदिरालय से सम्बन्धित काव्य रचनायें की जो साहित्य जगत में सराही गयी एवं प्राचीन होकर भी सदैव नवीनता में ही परलक्षित होती है।

रस-अलंकार

किसी भी साहित्य की अभिव्यक्ति में अतिरिक्त काव्य के अन्यगुण एवं उपकरण भी सम्मिलित होते हैं यही अन्य उपकरण, रस, छन्द एवं अलंकार है। जैसे 'मधुशाला' ने एक प्रकार का छन्द रूप लिया है ये साहित्य में छन्द बद्ध रचना कहलायेगी। 'हलाहल' एवं 'निशा निमन्त्रण' भी छन्द रूप से लिखी गयी किन्तु अलग प्रकार के छन्दों मे लिखी गयी। अपनी इन रचनाओं में तमाम उपमायें दी गयी है एवं अलंकारिक भाषा का प्रयोग भी बच्चन ने किया है। रसास्वादन की दृष्टि से बच्चन का साहित्य बहुत उत्कृष्ट कोटि का है। 'आकुल अन्तर' 'प्रणय पत्रिका' में संयोग–वियोंग एवं 'सतरंगनी' में संयोग श्रंगार का प्रयोग किया है। 'बंगाल का काल' की कारूणिक विभत्स गाथा लिखते समय करूण रस स्वयंमेव उनकी कविता में आ जाता है।

'सतरंगनी' की 'नागिन' कविता में रौद्र एवं वीभघ्त्स रस का प्रयोग किया है। नारी के रौद्र रूप की तुलना कवि नागिन की भयंकरता से करता है – यथा –

तू लंयकारी कलिका सदृश,
तू भंयकारी रूद्राणी सी,

तू प्रीति, भीति, आसक्ति घृणा
की एक विषय संज्ञा बनकर,
परिवर्तित होने को आई
मेरे आगे क्षण-प्रतिक्षण में'।

जहां वे रौद्र रूप में नागिन का वर्णन करते हैं वही नागिन की तुलना ज्वालामुखी से करते हैं जो ज्वालामुखी की अग्नि के समान दहकना। यह उपमा की चरम सीमा है एवं विरोधाभास भी है – जो हिमशिखर की शीतलता भी है –

शतहिम शिखरों की शीतलता
शतज्वाला मुखियों की दहकन
दोनों आभासित होती हैं,
मुझको तेरे आलिंगन में।'

उपरोक्त पंक्तियों से बच्चन की काव्य प्रतिभा दृष्टिगत होती है अलंकार एवं रस का समन्वय एक साथ दृष्टिगत होता है। संयोग रस एवं 'शतज्वालामुखी', 'शतहिम शिखरों' की उपमा देकर कवि ने यह सिद्ध कर दिया है कि केवल भावों के ही धनी वे नहीं है। अन्य स्थानों पर भी बच्चन ने नवीन उपमायें दी हैं। अलंकारिक भाषा का प्रयोग बच्चन ने अपने साहित्य में पूर्ण रूप से किया है। प्रेम, दया, घृणा, भय ये मानव मन की मूल प्रवृतियां है। साहित्य का रसास्वादन करने पर ये प्रवृतियां भी जागृत होती है कवि या लेखक अपनी कृति में इन्हीं प्रवृतियों के वर्णन के आधार पर किसी विषय वस्तु का वर्णन करता है। घनी अंधयारी रात्रि का वर्णन बच्चन ने 'निशा निमन्त्रण' में इस प्रकार किया है –

मैंने अपने हास चपल से
होड़ कभी ली पी बादल से
किन्तु गगन का गर्जन सुनकर आज धड़कती छातीमेरी
है पावस की रात अंधेरी।

श्रंगार रस के संयोग एवं वियोग दोनो पक्षों का चित्रण बच्चन ने किया है इनके काव्य में प्रेम की अर्न्तमुखिता की प्रधानता होने के कारण वियोग का चित्रण अधिक है। कवि स्वयं अर्न्तमुखी होता है। उसकी मुखरता काव्य में ही मुखर होती है। वियोग के चित्रण में 'आकुल अंतर' एवं 'एकांत संगीत' की कविताएं प्रमुख हैं – वे लिखते हैं –

चांद सितारे मिलकर गाओ
आज अधर से अधर मिले हैं
आज बांह से बांह मिली
आज ह्रदय से ह्रदय मिले हैं
मन से मन की चाह मिली
चांद सितारे मिलकर गाओ।

संयोग श्रंगार का यह भव 'आकुल अन्तर' में व्यक्त किया है। अन्य कविताओं में भी प्रिय–प्रियतमा के मिलन का वर्णन, भावपूर्ण भाषा में किया है। 'हंस हंसिनि' का मिलन। 'मयूरी का नृत्य' ये श्रंगारिक कवितायें बच्चने को एक़ छायावादी श्रंगार रस पूर्ण कवि बना देती है। श्रंगार रस के ही पद्य में लोकधुनों पर आधारित गीत भी बच्चन ने लिखे है। प्रकृति को काव्य में सजीव बनाकर उसका श्रंगारिक वर्णन किया है प्रकृति को सजीव बना दिया है। प्रकृति सौन्दर्य और प्रेम की अत्याधिक व्यंजना आपके साहित्य में दृष्टिगोचर होती है। बच्चन के काव्य में अलंकार के सम्बन्ध में भगवती चरण वर्मा का विचार है–

'बच्चन की कविता अलंकार रहित है। कहीं भी उसमें शब्दों के साथ खिलवाड़ नहीं किया गया है वह विशुद्ध भावना की अभिव्यक्ति है उसमें एक मोहक संगीत है'।

वियोगी मन के भाव जब अभिव्यक्ति होते हैं वे काव्य बन जाते हैं। यही मन की अभिव्यक्ति बच्चन के काव्य में वियोग श्रंगार बनकर अभिव्यक्ति हुई है। स्वयं उन्हीं के शब्दों में -

गीत कवि उर का नहीं उपहार
उसकी विकलता है।

यही विकलता वियोग श्रंगार रस के रूप में बच्चन की कविताओं में सभादिष्ट है। 'आकुल अन्तर' एकांत संगीत वियोग श्रंगार रस का ही काव्य है। बच्चन के अन्तर की सम्पूर्ण वेदना उनके काव्य में मुखरित है। श्रंगार रस का वियोग पंक्ष अत्यन्त सूक्ष्म एवं ह्रदयग्राही है। 'आकुल अन्तर' 'एकांत संगीत' 'वेदना के गीत' पढ़कर पाठक स्वयं को कवि के ह्रदयोदगार के अत्यन्त निकट पाता है। वियोग पक्ष में प्रकृति को चित्रण कर उसे रूपक बनाकर जो रचना की है वह उनके साहित्य का महत्वपूर्ण पहलू है यही गीत उन्हें छायावादी

एवं रहस्यवादी कवियों की श्रेणी में ला खड़ा कर देते हैं। सागर की लहरों को वे उसकी विकलता मानते हैं कोयल की कूक में उन्हें उसकी मनुहार की अपेक्षा विकलता दृष्टिगत होती है। यही उपमायें आदि काल से ही साहित्य में परिभाषित की जा रही है। कालिदास से लेकर पन्त तक 'कवि गण प्रकृति को वियोग श्रंगार में प्रयोग करते रहे हैं। जब प्रेमीजन वियोग में प्रकृति का अवलोकन करते हैं तो सम्पूर्ण प्रकृति उन्हें अपने ह्दय की तरह विरही दृष्टिगत होती है। बच्चन में भी प्रकृति के माध्यम से अपने भाव इस प्रकार व्यक्त किये हैं–

लहर सागर का नहीं श्रंगार,
उसकी विकलता है
अनिल अंबर का नहीं खिलवार
उसकी विकलता है
कूक कोयल की नहीं मनुहार
उसकी विकलता है।

आत्मद्रव

मन की पीड़ा को काव्य में प्रकट कर बच्चन ने वियोगी एवं विरह पूर्ण काव्य की रचना की है अपनी अभिव्यक्ति के ह्दय की गहनता के साथ वेदना से आत्मसात् किया है वे अपनी वेदना को ही संसार की सबसे बड़ी पूंजी मानते हैं। वियोग रूपी धन ही कवि की समस्त जमा पूंजी है। यही उसका आत्म परिचय है –

मैं निज रोदन में राग लिये फिरता हूँ
शीतलवाणी में आग लिये फिरता हूँ
हो जिस पर भूपों के प्रासाद-न्योछावर
मैं वह खंडहर का भाग लिये फिरता हूँ।

इस श्रंगार रस का वियोग और संयग दोनों पक्षों का वर्णन कवि बच्चन ने अपनी कृतियों में किया है वे अलंकृत एवं कृत्रिम भाषा के मोह में नहीं पड़े। उन्होंने सरल एवं प्रणयभाव की कविताओं का सृजन जितनी कुशलता से व्यक्त किया है एवं अन्य गद्य कृतियों में भी अपने कोमल भावों की अभिव्यकित की है उतनी ही कुशलता से गीत अगीत, क्रान्ति एवं विप्लव करूणा के गीत भी रचे हैं एवं विद्रोहात्मक विचार, बुद्धिमता पूर्ण दार्शनिक विचारों की गवेषणा गद्य साहित्य में की है। उन्होंने अपने साहित्य में शब्दों की आत्मा को

समझा है एवं पहचान कर उनका प्रयोग किया है। भाषा सर्वत्र प्रवाहमयी है।

बच्चन के साहित्य की विशेषता है कि उन्होंने अनुभवगम्य सृजनशीलता को अपने साहित्य में भावों को अभिव्यक्ति प्रदान की है उनके काव्य में सूक्ष्ममनोवैज्ञानिकता का आभास होता है। उनके साहित्य में उनकी मानसिक परिस्थितियों का पर्याप्त प्रभाव हे। अनुशीलन चिंतन मंथन किसी न किसी रूप में 'दृष्टिगत होता है। अपनी अद्भूत अनुभूतियों से जो अवचेतन के प्रति सचेत होती है उन्हें काव्य उपकरणों के साथ प्रस्तुत किया है। कहीं–कहीं अनुभूति वैयक्तिक अभिव्यक्ति बन गयी है। भावों की अतिशयता के कारण उनका काव्य साहित्य नितान्त व्यक्तिगत भी है। उन्होंने अपने साहित्य में कला से अधिक भावों को एवं विद्वता से अधिक मानवता को प्रश्रय दिया है।

साहित्य में गद्यात्मक लेखन में बच्चन ने अपने भाव सरल एवं ओजपूर्ण शब्दों में व्यक्त किये हैं आत्मकथा में उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व उभरकर आया है जिसमें एक आलोचक, एक समीक्षक, एक निबंधकार एवं कहानीकार के सारे रूप पाठको के सामने आये हैं। किसी गहन विषय की गवेषणा भी उन्होंने प्रभावशाली शब्दों में की है। कविता में एक कहानीकार के दर्शन होते हैं उनका कहानीकार उनके काव्य में ही आत्मसात् हो गया है। समीक्षक की दृष्टि से उन्होंने कई विषयों पर निष्पक्षता से समीक्षा की है एवं पूर्ण विवेचना की है। उत्कृष्ट कृतियों के अनुवाद के रूप में साहित्य में उन्होंने अपना स्थान बनाया है।

गंभीर विषयों जैसे साहित्य, भाषा काव्य आदि के उपर उन्होंने निबंधशैली में साहित्य रचना एवं सामाजिक जटिलताओं; मान्यताओं एवं परम्पराओं पर अपने विचार व्यक्त किये हैं उनके साहित्य में सहजता है ईमानदारी और सत्यपरायणता है आत्मकथा में इन्हीं गुणों को देखा जा सकता है।

बच्चन के साहित्य में समाज में बढ़ती अनास्था एवं मूल्यहीनता के प्रति आक्रोश है। उनके साहित्य में कहीं–कहीं विद्रोह का स्वर भी सुनायी देता है। 'बंगाल काकाल', 'बुद्ध और नाचघर', 'जाल समेटा' आदि रचनाओं में कहीं पर उन्होंने समाज के प्रति बढ़ती अनास्था पर व्यंग किया है तो कहीं पर उसके प्रति अपने विद्रोहात्मक विचार प्रस्तुत किये हैं। नैतिक मुल्यों के पतन को देखकर वे अपनी लेखनी नहीं रोक पाये हैं, 'बुद्ध और नाचघर' में कविता में वे इसी मूल्यहीनता को इंगित करते हैं कि आधुनिक समाज का चरित्रिक पतन हो चुका है, वह आदर्शो को विस्मृत कर चुका है। वह नाचघर में शोभायमान

बुद्ध प्रतिमा सिर्फ प्रतिमा के ही रूप में शोभित है उनके आदर्शों को नयी पीढ़ी ने नहीं अपनाया है।

बच्चन हिन्दी के उन राष्ट्रीय कवियों में से हैं जिन्होंने देश के कोने–कोने में घूमकर अपनी वाणी से हृदयों को नई धड़कने व प्राणों को नये स्वर दिये हैं। देश की जनता से प्रेम के ही कारण वे अपने साहित्य में वो बात कहने में सफल हैं जो सभी के मन की बात है उनका काव्य अपने स्वाभाविक गुणों के कारण इतना लोकप्रिय हुआ है कि उनके साहित्य में अद्भुत गतिशीलता है। वे अपने जीवन को भी बहती धारा के समान मानते हैं।

बच्चन के साहित्य का परिचय उनके भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति है उनकी रचनाओं में उनकी जीवन की भोगी हुई अनुभूतियां हैं जिन्हें उन्होंने अपने काव्य में, अपने गद्य लेखन में रूपमय एवं रसमय बनाने का प्रयत्न किया है। उनकी एक–एक पंक्ति के पीछे पूरा इतिहास छिपा हुआ है।

बच्चन जी के साहित्य का परिशीलन करना भावनाओं के सहज मधुर अंतस्पर्शी इन्द्रलोक में सूक्ष्म सौन्दर्य वैभव में विचरण करना है। अधिकाश साहित्य में उनकी आत्मकथा के बिखरे पन्ने मिलते हैं। जो कुछ समय के लिये उनकी अनुभूति का अंग बन जाता है। उनकी रचनाओं का सबसे बड़ा गुण है उनकी पंक्तियां द्रुतगति से कौंध कर मन में प्रवेश कर जाती हैं। उनका साहित्य काव्य रंगों ध्वनियों का काव्य है प्राणों को आनन्द विभोर करने का काव्य है। जीवन के प्रति 'निर्भीक दृष्टिकोण' तथा व्यापक अस्पष्ट विश्व दर्शन भी उनके साहित्य में देखने को मिलता है।

बच्चन का विकास छायावाद और प्रगतिवांद के संधिकाल में हुआ पर वह गतिशीलता के साथ अपनी आत्मनिष्ठ भावना के उद्दाम ज्वार पर चढ़ कर अतः सौन्दर्य के अलक्ष्य की ओर बढ़ते गये हैं। उनका काव्य जन साधारण के और निकट आकर सभी के लिये मर्मस्पर्शी है। उन्होंने साहित्य में आर्दश और वास्तविकता को अपने जादू भरे प्रतीकों से अत्यन्त निकट ला दिया है।

बच्चन अपने समान्तर कवियों से भिन्न हैं उनमें जो एकाग्रता, गाम्भीर्य और तल्लीनता है उसने उनके काव्य को तथा उनकी साहित्यक छवि को और ज्यादा संवारा है। भाव प्रवणता उनके साहित्य के हर स्वर में है। बच्चन अपनी पीढ़ी के सबसे लोकप्रिय कवि हैं यह उपलब्धि थोड़ी नहीं है।

उनके साहित्य में युग जीवन के संघर्ष एवं सामाजिक अर्न्तद्वन्दों को अधिक उन्मुक्त तथा मार्मिक अभिव्यक्ति मिली है। वह लोक कवि है और जन मन को अपने युग के प्रति सचेत करने का कर्त्तव्य अपने साहित्य में भली–भांति निभाया है। उनकी उद्‌बुद्ध चेतना जनसाधारण तक पहुंची है।

बच्चन का व्यक्तित्व एवं साहित्य आत्मजयी है जो सदैव प्रेरणाप्रद रहेगा उनका व्यक्तित्व एवं साहित्य दोनों ही अनुशासित है सुव्यवस्थित एवं सुनियोजित है वे अपने द्वारा समझे गये सत्य को संघर्ष साध्य जीवन को कर्मयोगी आदर्श को प्रेम करते हैं वे जहां है महान् हैं उनके साहित्य में अधिक विविधता नहीं है किन्तु इन संक्षिप्त गीतों, कविताओं स्मृतियों में युगों–युगों तक जीवित रहने की क्षमता है। जिस प्रकार हिन्दी साहित्य में 'मीरा के गीत' जयदेव के गीत लोकप्रिय हैं उसी प्रकार बच्चन के गीत भी अमर स्थान प्राप्त किये हुए हैं। जो वे साहित्य को दे चुके हैं वह अमर है, विशुद्ध भावना की अभिव्यक्ति है।

बच्चन के साहित्य के विषय में कई साहित्य विद्वानों ने अपने विचार प्रगट किये हैं वे विचार भी उनका साहित्य में स्थान निर्धारित करते हैं।

सुमित्रानन्नदन पन्त - 'बच्चन का व्यक्तित्व हिन्दी काव्य में अद्‌भुत विशेषता एवं महत्ता रखता है। वह मानव हृदय - मर्मज्ञ, रससिद्ध गायक, भावधनी कवि एवं युग प्रबुद्ध संदेशवाहक हैं उसके कला शिल्प में सादगी, स्वच्छता, संयत तथा अतुल शक्ति है। उनकी अनुभवद्रवित भावनाओं का प्रभाव विद्युत स्पर्शी, मंद सजल शब्द है। संगीत सम्मोहक तथा कल्पना की उड़ान प्राणों की संजीवनी से भरी होती है। बच्चन मुख्यतः मानव-भावना अनुभूत, प्राणों की ज्वाला तथा जीवन संघर्ष के आत्मनिष्ट कवि है। मैंने कभी उनके लिये ठीक ही लिखा था -

अमृत हृदय में गरल कंठ में, मधु अधरों में,
आये तुम वीणा धर कर में जन-मन-मादन

भगवती चरण वर्मा - 'हिन्दी कवियों में जिसे मैं सबसे अधिक निकटस्थ पाता हूं वह बच्चन हैण्ण उसकी कला निष्कप्ट और निश्छल हे। उसकी कला में बौद्धिक सजावट नहीं है और न ही ज्ञान और दर्शन की कोई आरोपित स्थापना है। उसमें भावना का स्वाभाविक आवेग है। और इसलिये वह पढ़ने वाले को तन्मय करती है। वर्तमान हिन्दी कविता को श्रेष्ठतम विश्व साहित्य के समक्ष लाने में जिन कवियों का योगदान हुआ है उनमे बच्चन का विशिष्ठ

स्थान है।

नरेन्द्र शर्मा - बच्चन व्यक्तित्व और कृतित्व प्रयोजन शील और सृजन शील है अपनी क्रियाशीलता में वह आस्थावान और नैष्ठिक हैं। उन्हें आत्मरति नहीं सताती और ना वह अपने उपर तरस खाते हैं'। अतः साहित्य व्यक्तिगत कर्म है इसमें लेखक की प्रतिभा और प्रतिभा के मूल्यांकन की कोई कसौटी नहीं होती । यह प्रतिमा लेखक की भिन्न रचनाओं में विधाओं में दृष्टिगत होती है। यही उसका साहित्यक परिचय होता हे। बच्चन की समस्त रचनायें तो उनका साहित्यक परिचय देता है उन रचनाओं के भाव ही उनके विषय में सब कुछ कहते हैं। उन्हें किसी आलोचक, प्रत्यालोचक या विद्वान की अलंकार पूर्ण भाषा की आवश्यकता नहीं है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि युगीन परिस्थितियों में कवि और साहित्यकार की प्रतिभा को जागृत कर संघर्ष विद्रोह, चेतना, सौन्दर्याभिव्यक्ति एवं काव्याभिव्यक्ति के लिये प्रेरित किया। जीवन की छोटी–छोटी अनुभूतियों को अत्यन्त भाव प्रवणता से चित्रित किया है।

बच्चन अपने रचनाकाल के सम्बन्ध में स्व्यं लिखते हुए अपनी कृतियों का साहित्यिक परिचय देते हैं 'आधुनिक कवि' की भूमिका में उन्होंने लिखा है –

मेरा रचनाकाल लगभग १६३० में आरम्भ हुआ। ३० और ३३ के बीच जो मैंने लिखा वह प्रारम्भिक के रचनायें पहले व दूसरे भाग में संग्रहित हैं। इस समय मैंने अपने आप को इसी राजनीतिक और सांस्कृति संघर्ष के बीच खड़े पाया। तेइस वर्ष का युवक जीवन की उद्‌दाम पिपासा लिये अपने उल्लास प्रेरणा से परिचालित होने का अभिलाषी अपने स्वप्नों और आर्दशों के अनुसार सोचने जीने का इच्छुक और पल-पल पर विरोध पग-पग पर बाधाएं। मैनें अस्फुट स्वर में कई बार संसार को पागल कहा, संसार ने मुझे पागल कहा -

पागल सब संसार कह उठा
स्वर्ग कह उठा ज्ञानी
भाग्य पटल पर विधि ने लिख दी
कवि की जटिल कहानी।

इसी भूमिका में वे आगे लिखते हैं कि – 'तीस वर्ष तक सर्जक का जीवन जीने और लिखने के बाद बाहरी परिवेश से आज मेरा आन्तरिक संघर्ष समाप्त प्राय है। इतने दिनो का चिन्तन मनन यदि मुझे किसी जगह पर सुस्थिर न करता तो उसे व्यर्थ ही कहना चाहिए था। संवेदनशीलता मुझमें आज भी है जिसके कारण जीवन का हर दिन अनेक ऐसे सत्य उपस्थित करता है जिन पर मेरी अपनी विशिष्ट प्रतिक्रिया होती है । पर इन प्रतिक्रियाओं अथवा इनकी अभिव्यक्तियों से अब मेरा आन्तरिक निर्माण नहीं होता। र्निमित होते हुए व्यक्तित्व और र्निमित व्यक्तित्व की अभिव्यक्तियों में अन्तर होना स्वाभाविक है। .... सृजन के लिये निर्मित सुस्थिर व्यक्तित्व में भी इतनी आग होनी चाहिए कि जब उस पर चोट पड़े, चिंगारी फूट पड़े। मा निषाद् प्रतिष्ठा ...... निर्मित होता हुआ, विचलित व्यक्तित्व शायद अपनी ठोकरों से ही चिंगारी उठाता चलता है। कश्चित् कान्ता विरहगरूणा ....।

बच्चन की उपरोक्त पंक्तियों से साहित्य में उनके एक संवेदनशील कवि होने का आभास मिलता है उनका साहित्यिक परिचय उनके यही विचार है ये विचार उनका स्थान निर्धारित करते हैं। हिन्दी साहित्य में काव्य संसार एवं संवेदना के सोपानों पर चढ़कर बच्चन उत्तांग शिखर पर पहुंचे हैं।

बच्चन की आत्माभिव्यक्ति काव्य में

कुछ साहित्यकार बाह्य चक्षुओं के चक्षुओं के निरीक्षण को अभिव्यक्ति देते हैं। बच्चन कवि की दृष्टि से बाह्य जगत की समस्याओं की जड़ में स्थित अर्न्तजगत के स्वरूप को अभिव्यक्त करने में सफल रहे हैं। आन्तरिक जीवन की विस्तृत व्याख्या के साथ परखने का प्रयत्न उन्होंने काव्य में किया है।

जीवन के विविध पक्ष हैं, विविध रंग हैं, विविध रूप हैं, वह परिवर्तनशील है। साहित्य ही इन परिवर्तनों का अध्ययन करके इसकी सम्पूर्ण चेतना की व्याख्या करता है। उसके रूप को अभिव्यक्ति देता है। उसके उज्जवल पक्ष तथा कलुषित पक्ष की संवेदनशील व भावुक व्याख्या करता है यही कवि धर्म बच्चन ने काव्य सृजन में निभाया है। बच्चन का काव्य सिर्फ कल्पना के आधार पर व्यक्तिगत स्वप्नों का ही काव्य नहीं है न ही अर्न्तजगत की अति महत्वाकाक्षाओं का काव्य है वरन् वह तत्कालीन युग, समाज की परिस्थितियों की अभिव्यक्ति भी है। उनकी अनुभूतियां सामान्य भावग्राही जनों की अनुभूतियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनके काव्य में यही काव्याभिव्यक्ति साहित्य जगत की लोकप्रियाता का कारण बनी।

जीवन में सौन्दर्य की स्वाभाविकता की स्थापना करके निर्जीव बाह्य आरोपित श्रंखलाओं को तोड़कर निष्पाप व निश्छल स्वाभाविकता पर बच्चन ने विशेष बल दिया। वे नैर्सगिक सत्ता को अपने साहित्य में सुरक्षित रखने के लिये सदैव प्रयत्नशील रहे। आत्माभिव्यक्ति के इस पथ पर उन्होंने शास्त्रीय पद्धति व शिल्प का साथ न लेकर उसके अस्वाभाविक बंधनों को तोड़कर आत्मानुभूति को प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति दी।

उनके द्वारा रचित काव्य में उनके जीवन से सम्बन्धित रचनाएं निश्चय ही गीतात्मक हैं उनकी भावनाएं उनके विचार व अनुभूतियां सभी काव्योपयोगी हैं उस अभिव्यक्ति में जो भावनात्मक आनन्द का चरमोत्कर्ष देखने को मिलता है वह सराहनीय है यर्थाथ जगत की प्रत्येक वस्तु में इस अर्न्तमुखी कवि ने अपने सौन्दर्य पूरित अर्न्तजगत की प्रतिछाया को निहारा है। व्यक्तिगत सुख व व्यक्तिगत दुख की काव्य में अत्माभिव्यक्ति साहित्य के साथ जगत के प्रत्येक अंग का अवलोकन करती है।

व्यतीत जीवन की सुखद व दुखद स्मृतियों व भविष्य की कल्पनाओं के आधार पर कवि यर्थाथ जीवन को मधुरता प्रदान करता है। बच्चन के काव्य में इन्हीं स्मृतिजनित मधुर कल्पनाओं, भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है। उनके साहित्य के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि सर्वत्र अपनी वास्तविक लौकिक प्रिया, के विरह से पीड़ित हुए तो 'प्रणय पत्रिका''मधुकलश' की रचना कर डाली वही हृदयेश्वरी के दैहिक सौन्दर्य में उस परम (अलौकिक) सौन्दर्य दिव्य दीप्ति का आभस हुआ तो 'सतरंगनी' 'मधुबाला' की रचना की। उनके काव्य में उनकी वेदना का व्यापक व्योम सार्वभौमिक वेदना का आत्माभिव्यक्ति प्रदान करता है।

साहित्य में मानवीय भावनाओं के रहस्यों का उद्घाटन आदिकाल से होता रहा है चाहे वे बाल्मीकि हो या तुलसीदास, कालिदास या आधुनिक कवि पन्त, निराला, महादेवी वर्मा। मनुष्य ही अध्ययन व सृजन का मुख्य विषय रहा है लेकिन पुरूष के हृदय की व्यथा की सुन्दर अभिव्यक्ति इन्हीं दशकों में हुई जिसमें बच्चन का काव्य साहित्य भी सम्मिलित है। तत्कालीन काव्य में उन्होंने अपने हृदय में पनपने वाली प्रणय व विरह की कोमल भावनाओं को प्रिय के वियोग में छटपटाती चेतना को अभिव्यक्ति दी।

बच्चन का काव्य आत्मनिष्ठ है व अर्न्तजगत के गीत गाता है अपने हृदय की व्यथा संसार को सुनाता है। अपनी आत्मा के लोक में लीन रहने वाला काव्य है। इसी में उनकी वेदना की सत्यता है। उनकी करूणा में जीवन का कटु सत्य है तथा अर्न्तजगत को स्पर्श करने वाली शक्ति है। यही व्यक्तिगत आत्म वेदना उनकी आत्माभिव्यक्ति होने की प्रमाणिकाता है। यही कारण है उनके कुछ गीत मन की बात कहते हैं। जिन पर समय–समय पर बच्चन भेंटर्वाताओं व पुस्तकों में अपने विचार प्रगट करते रहे हैं।

बच्चन ने अपनी अर्न्तरात्मा के स्वर को सदैव अभिव्यक्ति दी है। भावना प्रधान होने के कारण भावुक दृष्टि से ही जीवन को देखा है प्रेम भी हृदय में पनपने वाली भावना है, इसी दृष्टि से उनका काव्य हृदय प्रधान काव्य है। उनकी अंतश्चेतना जो कुछ कहती है उसकी को वे वाणी देते हैं बर्हिजगत की परिस्थितियां कैसी भी हों, अपने अन्तर के स्वर को काव्य के माध्यम से अभिव्यक्त करते रहे हैं, जीवन की भावना भरी दृष्टि से देखते हुए वे लिखते हैं –

मैं अपने यौवनकाल से अपनी अनुभूतियों और कल्पनाओं को निरंतर मुखरित

करता रहा हूं, और इस कारण मेरे जीवन और मेरे वाङमय की गति प्रायः समानान्तर चली है मुझे रचनाक्रम में पढ़ना मेरे विकास को सहज समझना, मेरे साथ यदि आप पूरी सहानुभूति दे सकें तो एक-एक विकासक्रम से स्वयं गुजरना है। शायद कविता इसी प्रक्रिया संस्कारों के बनाने और संवारने में सहायक होती है।

उनकी आत्माभिव्यक्ति उनके काव्य में दृष्टिगत होती है जैसे **'ओ पावस के पहले बादल'** कविता में वे अपने जीवन की तुलना सूखे मरूस्थल से करते है जो अतीत में मधुबन तथा प्रकृति एवं जीवन के परिवर्तन को उन्होंने काव्य में व्यक्त किया है – यथा –

यह आशा की लतिकायें थीं
जो बिखरी आकुल सी
यह स्वप्नों की कलिकायें थीं जो खिलने से
पहले झुलसी
यह मधुबन था, जो सुना सा मरूस्थल सा
दिखलाई पड़ता है
इन सूखे किनारों में वे थी एक समय
सरिता तुलसी।

वे सुख व दुख दोनों को जीवन का अभिन्न अंग मानते हैं उसी के निमित्त वे एक छंद से दूसरे छंद की रचना करते हैं जब भी उनकी वाणी से दुख भरे गीतों की रचना होती है उसे भी वे आत्मसात् करते हैं कभी उन पर पश्चाताप नहीं करते अपनी पीड़ा को सदैव गीतों में अभिव्यक्त करने के लिये प्रस्तुत रखा है। साहित्य में आत्माभिव्यक्ति के लिए वे कामना करते हैं कि उनके जीवन में दुख बार–बार आये क्योंकि दुख ही उनके काव्य का स्रोत है। जिससे सहृदय पढ़कर सुख उठाता है वे दूसरों के आनन्द के लिये सुख को अपने दुख पर न्योछावर करना चाहते हैं। निम्न पंक्तियों में यही भाव व्यक्त किये हैं।

सुख की घड़ियों के स्वागत में छन्दों पर
छन्द सजाता हूं
पर अपने दुख के दर्द भरे गीतों पर
कब पछताता हूं
जो औरों का आनन्द बना वह दुख

मुझपर फिर-फिर आये
रस में भीगे दुख के उपर मैं सुख
का स्वर्ग लुटाता हूं।

जो साहित्य के पारखी हैं वे बच्चन की अभिव्यंजना व शैली के विकासक्रम से ही जीवनक्रम की उचित परिकल्पना करके उनकी आत्माभिव्यक्ति को समझ सकते हैं।

काव्य –

काव्य दो प्रकार का होता है एक वह जो सहृदय पाठकों को आनन्द दे जिसका रसपान कर पाठक संतुष्ट हो जायें वह किसी ममन चिन्तन की स्थिति में न रहे दूसरा है जिसमें की हृदय की भावनाओं के साथ मानसिक बुद्धि चिन्तन भी सक्रिय हो वह काव्य पाठक के मन में जिज्ञासायें उत्पन्न करता है वह चिन्तन करता उसकी आलोचना व समालोचना करता है।

लेकिन सच्चे अर्थो में काव्य वही है कवि की परिपूर्ण व्यक्तित्व तल्लीन हैं। बच्चन की बहुत सी काव्य रचनाओं में उनके जन्म तक का अनुभव छिपा हुआ है। जिन अनुभवों को उन्होंने एक मात्र व्यक्तिगत समझा और उनके भाव प्रवण हृदय ने काव्य रचना की। बच्चन ने अपने अनुभवों की सीमा व्यापक रखी है, उसके अन्दर कल्पना को भी स्थान दिया है उसी अनुभवों की प्रक्रिया को अभिव्यक्ति देकर सुख का अनुभव किया है। जीवन के अनुभवों में अनेक दुख, संकट व संघर्षो के होते हुए भी जीवन जीने योग्य है मानव तमाम त्रुटियों, गलतियों और कमियों के होने पर भी प्रेम के योग्य है कवि की वर्तमान विश्रखलतायें, निराशायें भविष्य की विश्वास की दृढ़ नींव होती है। इसी भावना को कविता में गान करने का कार्य बच्चन ने किया है। 'आत्म परिचय' कविता में कवि का रूप दिखलाई पड़ता है–

मैं रोया इसको तुम कहते हो गाना
मैं फूट पड़ा, तुम इसको कहते छन्द बनाना
क्यों कवि कहकर संसार मुझे अपनाये
मैं दुनिया का हूं एक नया दीवाना
दीवानों का वेश लिये फिरता हूं
मादकता नि:शेष लिये फिरता हूं
जिसको सुनकर जग झूम सके

लहराये
मैं मस्ती का संदेश लिये फिरता हूं।

इस पंक्ति में बच्चन का आशय यह है कि कविता जग के , पाठकों व सहृदयों को आनन्द देती है लेकिन वह कवि का आन्तरिक रोदन भी है अन्तर का ज्वार है, जिसको सहृदय की बुद्धि सोचने पर विवश करती है।

बच्चन अपने काव्य में राग का एक दर्शन प्रस्तावित करते हैं। उनकी बहुत सी काव्य रचनायें ऐसी हैं जिनमें एक ही लय में आदि से अन्त तक हैं लेकिन उनमें नीरसता नहीं है वह कहानी की ही तरह रूचिकर है। राग का दर्शन होने पर भी बच्चन का काव्य सृजन वैचारिक व मानसिक स्तर का है उसमें अनुभूति व जैविक प्राणियों की भावना भी समायी हुई है उनके काव्य में कला है, परिष्कार है। निखार तथा सबसे महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति है। जीवन का प्रमाण देने वाली सांसे हैं उनकी काव्यपंक्तियों मे 'मधुशाला'की लय ताल में दौड़ता हुआ रक्त है जीवन स्पंदन है। जिन मानसिक परिस्थितियों ने बच्चन को लिखने पर विवश किया उन्हीं परिस्थितियों ने बच्चन को जीवन से जोड़ा है। उन्होंने जीवन की खुरन्दुराहट को अपनी काव्य कला की मधुरता से तरजीह किया है उनके विचार से जीवन का जीवंत स्वर ही काव्य है नहीं तो कविता अर्थहीन है।

बच्चन के अन्तर में जो दृढ़ कर्मठ व्यक्तित्व बैठा है वह काव्य रचना को जीवन का विलास मात्र समझता है जब वह सक्रिय होता है वह व्यक्तित्व गंभीर हो उठता है तब वह कवि को थोड़ा शान्त कर देता है। उनके अन्दर का वह दृढ़ मानव अपने अंतर की प्रतिध्वनि सुनने लगता है वही अन्तर की प्रतिध्वनि काव्य सुनायी देने लगता है।

बच्चन ने जितनी भी कवितायें लिखीं या काव्य रचा है सबके पीछे एक ठोस जीवनानुभूति है एवं दृढ़ पृष्ठभूमि है व मनोभूमि है यही बात उनके सम्पूर्ण साहित्य पर लागू होती है। इसी आधार पर काव्य में जो अभिव्यक्ति हुई है उसे कोई कविता का उत्कृष्ट साहित्यिक रचना की श्रेणी में रखे या न रखे साहित्यकार को इसका कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि जीवन की सभी अभिव्यक्तियां उसके अन्तर की पूंजी होती हैं। बच्चन की आत्माभिव्यक्ति ऐसे जीवन संघर्षो के मध्य हुई कि जीवन को संवारने में व्यस्त रहे अपने काव्य की अभिव्यंजन कला को उत्कृष्ट शिल्प योजना में नहीं बांध पये वह अपने स्वाभाविक रूप एवं गति से उनकी लेखनी से निकलती चली गई बच्चन को अपने जीवंत दुखों से त्राण

दिलाने में निश्चय ही उनकी कविता कल्पना की महायात्रायें कम सहायक नहीं सिद्ध हुई होंगी – यथा –

हर रात तुम्हारे पास चला आता हूं
समतल भूतल, बत्ती की पांतों के पहरे
में सुप्त नगर,
अंबर को दर्पण दिखलाते सरवर,
सागर, मधुन बंजर,
हिम तरू मंडित, नंगी पर्वत-माला, मरूस्थल
जगल दलदल
सबकी दुंर्गमता के उपर मुसकाता हूं
हर रात तुम्हारे पास चला आता हूं

यह गीत बच्चन की अभिव्यक्ति में काव्य पूर्ण सहयोग दर्शाता है जब मन व्यथित होता है। अकेला, अपनों से दूर है तब वह अपनी भावनाओं व काव्य सृजन के द्वारा अपने आत्मीय तक पहुंचता है वहां भावनाओं की यात्रा की आत्माभिव्यक्ति प्रस्तुत पंक्तियां करती हैं।

सो न सकूंग और न तुझको सोने दूंगा, हे मन बीने।

बच्चन की यह पंक्तियां मन को इंगित कर प्रतीक रूप में प्रेमिका व जीवन संगनी से कवि का वार्तालाप है। आशय यह है कि जो कवि ह्दय है वह संसार के अन्य प्राणियों से भिन्न वह चिन्तनशील है मननशील है बच्चन कहते हैं कि क्या इसीलिये मैंने आत्मा का सम्बंध बनाया है कि यह ह्दय भी अन्य सांसारिक ह्दयों की तरह हर तरह की भावनाओं की उपेक्षा करे और मुख पर केश आच्छादित कर सो जाये। सारी दुनिया जहां सेज सजा कर सुप्त पड़ी है अर्थात् समस्त भावनायें निष्प्राण हो चुकी हैं यह तो कोई तर्क नहीं कि मैं भी उनके जैसा हो जाउं अपनी विषमताओं से मुख मोड़ लूं क्या मुझमें और उनमें कोई फर्क नहीं है। दुनिया स्वार्थ व पापों में खोई है तो क्या हर व्यक्ति वही करे कवि का यह कर्त्तव्य है कि वह मानस चेतना जागृत करे। न वह स्वयं स्वार्थो में खेये न ही किसी को दुष्कर्मो में खोने दे।

बच्चन गीत में आवाह्न करते हैं कि अरे! सुप्त भावनाओं के व्यक्तियों, अभी भी

समय है शायद हमारी इस पुकार से जगहर हो जाये क्या स्वार्थ, आकांक्षा रूपी चोर इस जगहर को सुनकर भाग जायें जो जग चुप्पी बांधकर सारे पाप कर्म दुष्कर्म कर रहा है। मानवता, कोमल भावनाओं मधुर स्वप्नों से बेखबर सो रहा है लेकिन कवि हृदय चुप नहीं रह सकता न ही वह किसी को रहने देता है वह तो चेतना का गीत सदैव गायेगा, विजयगीत गायेगा, पीड़ा की सीमा पर भी वह नहीं रोयेगा न ही रोने देगा। मन में आशा व विश्वास का भावना की यह अभिव्यक्ति बच्चन की इस कविता में दृष्टिगत होती है।

जाग छेड़ दे अभी तराना
दूर अभी है भोर, सहेली
जगहर सुनकर भी अक्सर
भग जाते हैं चोर सहेली,
सधी-बधी सी चुप्पी मारे
जग लेटा है लेकिन चुप मैं तो
हो न सकूंगा और न तुझको होने दूंगा हे,
मन बीने।
सो न सकूंगा और न तुझको सोने दूंगा, हे
मन बीने।

व्यक्ति अपने हर फल के प्रतिफल को कर्मो का फल समझकर नियति से समझौता कर लेता है और कहता है कि हम कर्मो के स्वाधीन है परन्तु इनकी परवशता कितनी ही ज्ञात होती है। अकर्मण्यता को भी नियति का फल मानकर मनुष्य जीवन व्यतीत करता है बच्चन ने अपनी कविता **'इस पार उस पार'** में इसी मानव मन की विवशता को उद्घाटित किया है। मनुष्य तो कर्मो को दोष देकर अपने आप से सन्तुष्ट हो जाता है जबकि उस पार (मरण के बाद) उसने क्या कभी देखा है कि उसका नियति व कर्म पर कितना अधिकार है अर्थात् इस पार ही मधु है (कर्म स्थली) है उस पर तो शंका ही है। मानव को यदि जीवन सुन्दर समुज्जवल बनाना हो तो इसी जीवन में सत्कर्म करना चाहिए उसे भाग्य व नियति के आश्रित नहीं करना चाहिए। बच्चन इस कविता के माध्यम से यह कहना चाहते हैं कि जब नियति इस पार ही इतने क्रूर खेल मानव के साथ खेल रही है तो उस पार अर्थात् मृत्युलोक के उपरान्त उसका क्या विश्वास किया जा सकता है कि उसका व्यवहार कैसा होगा।

उस पार का इतना ही सत्य है कि एक दिन सभी को अपने प्रिय से बिछड़ना है सभी को प्रियतम का शव काल रूपी रात्रि दुख की चादर से अवश्य ढाकेगी और उस पार सभी को एक दिन जाना होगा। दुनिया रोती है वियाेग में वियोगी दुखी होता है ओर एक दिन वह भी उस पार चला जाता है। कवि हृदय इसीलिये उद्विग्न है कि एकाकी जब वह मझधार में जीवन के संकटों के बीच होगा तब क्या होगा। अर्थात् जब तक जीवन है इस पर ही मधुरूपी प्रफुल्लता है विश्वास है, आशा है आकांक्षायें हैं मरण के बाद मुक्ति की कल्पना बेमानी है उस पार सिर्फ अंधकार है उस पार कुछ नहीं है। जीवन में ही मुक्ति है मरण के उपरान्त मुक्ति की भावना मिथ्या है। 'इस पर उस पार की' पंक्तियां बच्चन के आत्म मंथन की प्रबल अभिव्यक्ति है –

इस पार, प्रिय मधु है, तुम हो,
उस पार न जाने क्या होगा

....

सुन काल प्रबल का गुरू गर्जन
निर्झरिणा भूलेगी नर्तन,
निर्झर भूलेगा निज टल बल
सरिता, अपना 'कलकल' गायन,

वह गायक नायक सिंधु कहीं
चुप हो छिप जाना चाहेगा।
मुंह खोल खड़े रह जायेगें
गन्धर्व, अप्सरा, किन्नरगण।

संगीत सजीव हुआ जिनमें,
जब मौन वही हो जायेगी
तब प्राण तुम्हारी तन्त्री का
जड़ तार न जाने क्या होगा।
इस पार, प्रिये ....

मेरा तो होता मन डग-मग
तट पर के ही हलकोरों से
जब मैं एकाकी पहुंचूंगा
मंझधार, न जाने क्या होगा।

इस पार, पिये ....

उपरोक्त पंक्तियों से यों प्रतीत होता है कि ये बच्चन की आत्मा से निकले हुए स्वर हैं जो काव्य में अभिव्यक्ति बन गये हैं अपने उद्गारों को वे यों व्यक्त करते हैं –

जब इतनी रसमय ध्वनियों का
अवसान प्रिये हो जायेगा
तब शुष्क हमारे कण्ठों का
उद्गार न जाने क्या होगा।
इस पार प्रिये, मधु है, तुम हो,
उस पार न जाने क्या होगा।

काव्य ही बच्चन की आत्मा -

काव्य को अभिव्यक्ति देते समय कवि की आत्मा उसमें विराजमान रहती है। बच्चन ने अपने सम्पूर्ण काव्य में आत्मा की गहनता से सृष्टि की है। उनकी कविता में आत्म विश्वास है काव्य शक्ति का सिद्धान्त है एवं इस प्रकार की कलाशैली है कि पाठक की सम्पूर्ण जिज्ञासाओं को शान्त करती है एवं बहुत कुछ उनके जीवन के प्रति दृष्टिकोण, युग एवं समाज की परिस्थियों, समस्याओं एवं उनकी आकांक्षाओं के प्रति अभिव्यक्ति बच्चन के काव्य में दृष्टिगत है। उनका काव्य उनमें सर्जक जीवन के आन्तरिक संघर्ष, एवं चिंतन मनन का दर्पण हैं अपनी संवेदनशीलता से अपने काव्य में जीवन के ऐसे सत्यों को उद्घाटित किया है जिनसे उनकी आन्तरिक अभिव्यक्तियां उनका आन्तरिक निर्माण करती हैं। उनके सृजन में वह अग्नि है कि पाठक का सुस्थिर, निर्मित व्यक्तित्व भी करूण क्रन्दन से प्रज्जवलित हो उठता है। साहित्य में सर्जक को इसी अग्नि की संवेदनशीलता को अभिव्यक्ति कहते हैं। अभिव्यक्ति का यह ताप उनकी रचनाओं में उभरा है। उनके हृदय के उद्गार ही उनकी अभिव्यक्ति है यथा – वे कहते हैं –

'मेरा हृदय सदैव भावना द्रवित रहा है। अपने और दूसरों के भी सुख-दुख, हर्ष-विषाद को मैंने अपने हृदय के अन्दर देखा और लिखा है। दूसरों के हृदय से देखने का मेरे पास एक ही साधन है वह है मेरा अपना हृदय। मुझे यह जानकर संतोष होता है कि मैं भावनाओं का कवि हूं। जैसा मैं अनुभव करता हूं ऐसा दूसरे भी करते होंगे . ...

अनुभवों की प्रतिक्रिया के समान कल्पना की प्रतिक्रिया भी असह्य होती है और अभिव्यक्ति में सुख का अनुभव होता है एक तरह की राहत मिलती है। अनुभवों में डूबकर अभिव्यक्ति के माध्यम पर यथा संभव अधिकार प्राप्त करके मैंने अपने आपको प्रेरणा पर छोड़ दिया है'।

बच्चन जी के काव्य का परिशीलन करना भावनाओं के सहजमधुर अन्तःकरण को स्पर्श करने वाले इन्द्रलोक के सूक्ष्मसौन्दर्य वैभव में विचरण करना हैं। जहां एक और उनके काव्य में कल्पना के छायापथ में आनन्दमय जीवन यौवन की हाला अपनी रश्मि इंगित बाहों में दिव्य प्रेम के सुनहरे अमरलोक को उठाती है वहीं दूसरी और मानव चेतना के यर्थाथ सत्य विषाद, निराशा तथा अंधकार एवं जीवन संघर्ष का उद्दाम स्वर सुनाई देता है।

जहां उनके मधुकाव्य में मानव हृदय की भावनात्मक धन मादकता है वहीं जीवन की अदम्य प्रेरणा एवं आकांक्षा सिन्धु लहराता प्रतीत होता है। उन्होंने अपने काव्य में तत्कालीन छायावादियों की तरह विश्वचेतना य अधिमन से प्ररेणा ग्रहण न कर अपनी स्वयं की रागात्मक भावना व अस्मिता को अपनी रचनाओं में प्रधानत दी है। अनुभूति के क्षेत्र में रखकर उसमें भावनात्मक गहनता वैयक्तिक मोड़ के तत्वों का समावेश किया है जिसके कारण उनका काव्य अधिक मर्मस्पर्शी है। इस प्रकार उन्होंने अपने काव्य में आदर्श वास्तवीकता के जीवन को प्रिय बनाकर सामान्य मानव मन की अभिव्यक्ति की है।

बच्चन के काव्य में कवि का शिल्प एवं अति रंजना नहीं स्वयं की सांसों के तार एवं हृदय की व्यथा दिखाई देती है। वही व्यथा जो दूसरों के हृदयों को संवेदना के तारों से झंकृत कर दे। उन्होंने दुख के मूक सौन्दर्य को पहचाना उसकी ऊष्ण गहराइयों को अनुभव कर उसकी सर्वव्यापकता की परीक्षा अपने काव्य में विभिन्न रूपों – वेदना, निराशा, पूर्वस्मृति, अंतरदाह, हीन भाग्य की भावना, गहन अवसाद, एकाकीपन के भावों की अभिव्यक्ति की है। वेदना में उनके साधारण भाव भी गीत बन गये हैं अपनी व्यथा के माध्यम से मानव हृदय की अंतःस्पर्शी व्यथा तथा युग के शंकाविषाद और निराशा के सिन्धु को मथ कर गरल को अमृत बना दिया है।

बच्चन के काव्य की भाषा में परम्परा का सौष्ठव है वह साहित्यिक होते हुए भी बोलचाल की भाषा के निकट है। उनकी तमाम रचनाओं में उनमें अपरोजय व्यक्तित्व की झलक मिलती है जो मग्न हृदय होकर भी जीवन पथ पर अडिग है। ये वे भावना लोक के

अपने ढंग के एकाकी पथिक है। तथा काव्य के इस पथ को उन्होंने गम्भीरता तल्लीनता से प्रशस्त किया है। उनकी भाव व्यंजना सूक्ष्म संश्लिष्ट तथा गहन है। उनकी काव्य चेतना का विकास व्यापक, गम्भीर है तथा नयी कविता अनेक अनगढ़ स्तरों को स्पर्श कर उन्हें भाव वैभव विचार, गौरव, शिल्पसंयम तथा अभिव्यंजनात्मक है। इनमें व्यथा क्लांत, भावना से भिन्न मुक्त सजीव स्फूर्तिप्रद, जीवनमूर्त एवं अभिनव कवित्व पूर्ण है। इनमें समाजिक महाप्रयाणहता व्यंग, देश, वैचारिकक्रान्ति तथा व्यापक मानवीय संवेदना को कवि ने आध ुनिक कला के स्पर्श से सफल अभिव्यक्ति दी है।

युग जीवन के सामाजिक संघर्षो को उन्मुक्त तथ मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है युग की विषमताओं एवं असंगति पर अपनी लेखनी से व्यंय कर आघात किया है। उनकी रचनाओं में प्रायः सभी स्थलों में मर्मभेदी अनुभूति तथा बौद्धिक संदेश है। बच्चन ने अपने मधुकाव्य की तरह बौद्धिक काव्य में उद्बुद्ध चेतनाओं को जन साधारण तक पहुंचाया है।

रचना करते समय बच्चन का मुख्य उद्देश्य यह रहा है कि भाव-विचारों की अभिव्यक्ति हो। शब्दों की अभिव्यंजना व नये-नये प्रयोगों से व तटस्थ रहे हैं जीवन के प्रयोग की अवस्था में अभिव्यक्ति के प्रयोग कि अवस्था उनके काव्य में स्वाभाविक है। काव्य एवं जीवन के प्रति वे अत्यन्त संवेदनशील हैं छोटी-छोटी बातों में बड़ी-बड़ी प्रतिक्रियाओं को काव्य में समेटा है। जब जीवन ने जो अनुभूति उन्हें दी उसे काव्य में बद्ध किया उसे किसी दर्शन में नहीं बांधा। इसी वजह से बच्चन का काव्य अनुभूतियों का पुंज है। बच्चन के काव्य का निर्माण विरोधी कणों से हुआ है कहीं आस्था के गीत हें कहीं घोर परजय निराशा के गीत हैं। उनकी रचनाओं में आत्मदान है। उनका काव्य निष्कपट है। उनके बौद्धिक सजावट नहीं है जो उनका निजी है वह उन्होंने साहित्य को प्रदान कर दिया है।

बच्चन का अपना निजी दर्शन है जो आशावाद से युक्त कर्मवाद का प्रतीक है निराशा से दूर। सृष्टा भोक्ता के फलस्वरूप बच्चन का काव्य सृजन अपनी एक-एक अनुभूति को ईमानदारी से अभिव्यक्ति देने का रहा है। उनकी अनुभूतयां अनूठी हैं जब वे काव्य के माध्यम से दूसरों के प्रकाश में आयी तो सबकी अनुभूतियां बनी। उनकी कविता भोगे हुए जीवनवाद पर आधारित है।

कला अनुभूतियों का किसी इन्द्रियग्राह माध्यम में रूपांतरण है। यही वह जादू

है जो अनुभूतियों को मस्तिष्क के उपर उठकर हृदयगत भावों को अभिव्यक्ति देता है। भोगने झेलने की अस्थिर कटुता एक शब्द में हर मानवीय अनुभव की अपूर्णता काव्य के माध्यम से पूर्णता प्राप्त करती है। शोक की अनुभूति में शोक रचना करके उससे आनन्द संतोष व शांति की उपलब्धि होती है। जो विष को भी मधुर न बना दे यही काव्य का चमत्कारी रूप है। जिसे बच्चन ने अपने मधुकाव्य में व्यक्त किया है। जहां धर्म और दर्शन प्रायः उपर उठने की शिक्षा देते हैं वहीं काव्य उनके साथ चलने की शिक्षा देता है। उनकी जीवन अनुभूतियों का दुखद पहलू काव्य में सौन्दर्य कल्पना में बदल कर उसकी सार्थकता सिद्ध करना है। बच्चन अपने काव्य के लक्ष्य को यही मानते हैं कि जो व्यक्तिगत हैं, सीमित है, आत्मभोगी है उसे सर्वगत, सार्वभौम, सर्वभोगी बनाना। जो कुछ उन्होंने लिखा है उसका तात्पयार्य इतना ही है कि उनका जो भी काव्य है वह उसका स्रोत ठोस जीवन की धरती में है, वायावी, आकाशी, अतिमानसी स्रोत उनके लिये नहीं खुले यही उन्होंने जानना चाहा **'मेरी सीमायें बतला दो'** तथा **'दुनिया भर की ठोकर खाकर पाई मैंने मधुशाला'** उनकी सारी मानसिक अमूर्त, सूक्ष्म सारी भावनायें यर्थाथ के ठोस धरातल पर है। बच्चन ने **'रचनावली'** में रूपांतरित शब्द शीर्षक में स्वयं कविता की अभिव्यक्ति की है –

भावनायें
किसी विवशता में
अभिव्यक्ति की शरण जाती हैं।
अभिव्यक्तियां
किसी विवशता में
ध्वनियों में गूंज उठती हैं
ध्वनियां
किसी विवशता में
शब्दों का रूप लेती हैं।

काव्य में बच्चन की अभिव्यक्ति में आत्मा तत्व, शिल्प तत्व से अधिक है की अपेक्षा इसी परिपेक्ष्य में भगवती चरण वर्मा ने बच्चन के काव्य पर अपने विचार प्रगट किये हैं कि–

बच्चन कल्पना जगत पर विश्वास नहीं करता जो उसके सामने है उसी पर उसे आस्था है, विश्वास है। वह पूर्ण रूप से पार्थिवता का कवि है - कहीं भी अपार्थिवकता के दर्शन उसमें नहीं होते। सम्भवतः इसका कारण यह भी हो कि बच्चन पर उर्दू संस्कृति

का प्रभाव काफी अधिक है। उसकी कविता में शरीर-तत्व की अपेक्षा आत्मा-तत्व अधिक है।

समय के साथ मानव शरीर भी अपनी अवस्थाओं को पार करता हुआ परिवर्तन की तरफ बढ़ता जाता है कवि के विचार व भावनाएं उके काव्य में उन्हीं परिवर्तनो के साथ परिवर्तित हो जाती हैं। शारीरिक दुर्बलताओं के साथ व्यक्ति में जो मानसिक दुर्बलता भी आ जाती है उन्हीं भावों की अभिव्यक्ति बच्चन ने अपनी बाद की कविताओं में की है जीवन के संबंध में जो शंकाएं उठीं उन्हीं का प्रतिबिम्ब चार खूंटे की कई कविताओं में मिलता है जो उनकी विशिष्ट मनः स्थिति परिचायक है मृत्यु के पद्चाप जब पास ही सुनायी दें तो मानव मन की विचित्र प्रतिक्रिया होती है। वह विश्वास करता है कि वह पूर्णतया नहीं मरेगा उसकी आत्मा व जीवरूप में वह जीता जायेगा। उस समय वह अपनी असमर्थता के बोध से प्रभु की शरण में जाने की कामना करेगा।

निम्न पंक्तियां यही मनःस्थिति को दर्शाती हैं –

जग के कीचड़ कांटो से लथपथ-मटमैली
काल कंटकित - झंखोड़ों में अटकी - झटखी
चिप-चिरबत्ती
जीवन के श्रम-ताप-स्वेद से बसी किचैली
चादर का अब मोह निवारो।

..

सबल जब दिवसांत काले
वेणु बन से घर मुझे लौआलना हो
जब गले में डालकर प्रश्वास - पाश कठोर
मुझको खींचना मना
लौटती लहर सागर को
अगम, गंभीर क्षण है
शांति रक्खो
मौन धारो।

इस कविता के सम्बन्ध में बच्चन ने लिखा है –

'इसे किसी अर्थ में आप मेरी विशिष्ट मनः स्थिति कह सकते हैं पर पचमन वर्ष पर किसी गंभीर बीमारी के बाद मृत्यु की निकटता का आभास होना अस्वभाविक नहीं कहा जा सकता। ये तो सब जानते हैं कि मौत तो आके रहेगी और वह किसी दिन किसी वक्त आ सकती है।

.... 'चार खेमे' की कुछ अंतिम कविताओं में मेरी इस अनुभूति की अभिव्यक्ति स्पष्ट है। मेरी सामान्य मनःस्थिति जानने के लिये, 'चार खेमे' की शेष कविताएं देखनी होगी। त्रिभंगिमा के समान इन कविताओं में भी मैं साफ देखता हूं कि कभी तो मेरी प्रेरणाएं आभ्यांतरिक, वैयक्तिक हैं, और कभी देश-काल समाज की स्थितियां मेरी अभिव्यक्ति के लिये प्रेरक बनती है - वहां भी कहीं मेरी दृष्टि आशावादी है, कहीं आर्दशात्मक, कहीं उत्साहवर्धक और कहीं विक्षुब्ध, व्यंगात्मक और कहीं निराश हताश'।

इन शब्दों में बच्चन ने अपनी कविताओं के सम्बन्ध में संपूर्ण आत्माभिव्यक्ति कर दी है।

सोऽहं हंसः -

'सोऽहं हंसः' हंस प्रतीक से रचित गीतों का संकलन है। ये गीत एक भावनात्मक कथा सूत्र में पिरोये हैं। जिनकी अनुभूति अतःकरण द्वारा की जा सकती है। हंस का प्रतीक काव्य जगत में बहुत प्राचीन है। हंस हंसिनि का जोड़ा तो जग प्रसिद्ध है। प्रेम एवं भावनाओं का प्रतीक हंस, शांति का प्रतीक हंस, कवियों ने अपने काव्य में इसे प्रयुक्त किया है। हंस के माध्यम से कवि अपनी सारी व्यथा कथा कहता है। और अन्त में वह कहता है कि मैं वही हंस हूं। कवि ने ये कविता प्रवासी के मन के भाव हंस के माध्यम से व्यक्त करने के लिये लिखी हैं किस तरह अपना देश स्थान छोड़कर दूसरे स्थान जाकर अपनी जन्मभूमि को स्मरण करता है। अपनी प्रेयसि को वह अकेला छोड़ आया है। प्रवासी को अपना देश याद आता है कहीं वह अन्दर ही अन्दर आशंकित है कि दूसरे देश की चकाचौंध में वह लिप्त न होकर रह जावे अतः हंस के द्वारा कवि मन के भाव व्यक्त करता हुआ कह उठता है–

और तुम अपना अमर वह देश तजकर
किसलिए परदेश में आये हुए हो

घूमती जो स्वर्ण हंसिनियां यहां हैं
क्या उन्हीं को देख पगलाये हुए हो।

इस कविता संग्रह के शीर्षक 'आरती और अंगारे' से लिये हैं। 'हंस की मौत' के लेखक याकोव पोलोस्की हैं जिनका बच्चन ने अनुवाद किया है भावों को हिन्दी में व्यक्त किया है। 'सोऽहं हंस' के निम्न शीर्षक 'हंस का प्रयाण', 'हंस का प्रवास', 'हंस की चेतावनी', 'हंस की प्रतीक्षा', 'हंस की मनुहार', 'हंस की विदा', 'हंस का पुनरागमन', 'हंस का मोहभंग', 'हंस का घाव', 'हंस की मौत' है। जिनमें जीवन का उतार–चढ़ाव, मिथ्या, मोह का वर्णन है। सुमित्रानन्दन का विचार है – **'प्रणय पत्रिका में जहां अनेक सरस गीत हैं, वहां हंस-मिथुन से सम्बद्ध कवि के गीत अपने भाव वैभव, रचना-सौष्ठव एवं कल्पना सौन्दर्य के कारण तारापुंज में सप्तर्षियों की तरह विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करते हैं। इन गीतों में कवि के विदेश की प्रवासी - भावना की (संभवतः जीवन की भी) एक प्रच्छन्न कला गुंफित है जो कवि के मन के स्वप्न - संवेदनों को शिल्प की सूक्ष्मता से अंकित करती है'।**

निशा निमंत्रण -

'निशा निमंत्रण' बच्चन जी की पंक्तिबद्ध गीतों की रचना है। रात्रि होते ही मनुष्य हो या जीव सभी अपने–अपने आश्रय स्थल लौटने लगते हैं। पथिक जो सारे दिन चलता है वह भी जल्दी ही अपना मार्ग रात्रि के भय से तय करता है क्योंकि वह गन्तव्य स्थान पर पहुंच जाना चाहता है। सूर्य अपनी रश्मियों को समेटने के लिये अस्ताचल की ओर जाता है वहीं चिड़िया भी अपने घोंसले की ओर बढ़ती है। सूर्य और रात्रि आलिंगन करते हैं। गृहणी अपने पति की प्रतीक्षा में है। नौकायें तट पर आने लगी हैं।

'निशा निमंत्रण' में कवि ने प्रकृति के रूप का चित्रण किया है। जीवन के भिन्न रूपों में पशु पक्षी जड़ चेतना में निशा किस तरह का परिवर्तन लाती है। कवि ने यही चित्रण किया है। बच्चे पथ पर बना घरौंदा छोड़ अपने घरों में जाते हैं। पक्षी नीड़ खोजते हैं। आकाश में तारे निशा का आवाह्न करते हैं कब वे द्युतिमान हों। अंधकार की सत्ता आ जाती है। प्रेमी जनों के हृदय का अंधकार भी निशा के अन्धकार के साथ बढ़ता जाता है। कवि ने ऋतुओं के बदलने पर निशा में किस तरह परिवर्तन होता है चित्रित किया है। पतझड़ में कोयल भी शरमाने लगती है। पावस शीत ऋतु में ऋुओं में किस रूप में दृष्टिगत होती है। रात्रि होते ही जग निद्रा की गोद में सपनों के सुन्दर संसार में विलीन होने के लिये,

कल्पनाओं के इन्द्रधुनष में झूलने के लिये स्वप्न की उन्मादी तरंगो में लिप्त होने के लिये मानव को निमन्त्रण देती हैं। यही निशा का निमंत्रण है भूत तो जल मग्न हो चुका है। अर्थात् समाप्त हो चुका है और भविष्य सिर्फ कल्पना है। सपनों के संसार में प्राणी को ले जाने वाली निशा यह बतलाती है कि स्वप्न भी छल है जागरण भी छल है। कवि कल्पना करता है कि मेरे नयन ही मेरे प्रिय का नीड़ है। निशा के आते ही प्रिय नयनों में बसेरा करने के लिये आ जाता है। रात्रि की नीरवता भंग करते हुए नदी के तट पर देहाती गायन स्वर सुनायी देता है। कवि एकाकी सा इसको सुनता है।

काव्य व्यक्ति की अभिव्यक्ति का एक माध्यम है बच्चन की अभिव्यक्ति उनकी कविताओं एवं गीतों में हुई है दुख और सुख के स्वरों में निशा निमंत्रण की भूमिका के उमड़ रहे विचारों की अभिव्यक्ति मानते हैं। निशा निमंत्रण की भूमिका में बच्चन ने स्वयं लिखा है –

१६३७ के अन्त में मेरी परीक्षा निकट आने लगी और इधर मेरे भीतर कुछ विवश करने लगा कि मैं अपने को अभिव्यक्त कर दूं। यह 'निशा निमंत्रण' के गीतों की पृष्ठभूमि है।'

.... कविता की पूजा दो प्रकार की होती है एक वह जो कविता को बौद्धिक संवेदना देती है, दूसरी वह जो हार्दिक सह+अनुभूति देती है।'

प्रकृति का सूक्ष्म चित्रण कवि ने चित्रित किया ही है बल्कि कवि की भावनायें स्वयं उन प्रकृतिक दृश्यों में स्थूल रूप पा गयी हैं। सूर्यास्त के साथ कवि की आशाओं का तार छिन्न–भिन्न हो जाता हैं। रात्रि के अंधकार में कवि का शोधक गहन हो उठता है तथा प्रभात की अरूणिमा के साथ ही कवि निकट भविष्य की आशाओं के साथ विदा लेते हैं

निशा निमंत्रण के गीतों से कविता में संसार मे नया गीत शुरू होता है। १३–१३ पंक्तियों में लिखे गये गीत विचारों की एकता एवं गठन में भावनाओं की सुन्दर अभिव्यक्ति करते हैं। स्वयं बच्चन अपनी अभिव्यक्ति के विषय में लिखते है – **'निशा निमंत्रण' अगर मेरे दुख की कथा है तो आप उसमें क्यों पड़ें, आप कुछ उसमें अपना भी तो पाते होंगे।**

निशा निमंत्रण के गीतों में अवसाद है, अतीत की परछाइयां है निराशा है, निराशा का परिणाम होता है कि यह आदमी को संकुचिक करती है किन्तु निशा निमंत्रण के गीतों

में कवि की सोंचे आकांक्षाओं के रूप में अभिव्यक्त हुई हैं। बच्चन ने स्वयं अपनी आत्मकथा में कहा है **'इससे अधिक सहासी व स्वाभिमानी आकांक्षा की अभिव्यक्ति मैंने नहीं जानी है।'** निशा निमंत्रण के सम्बन्ध में गिरिजा कुमार माथुर ने अपनी किताब, नई कविता – 'सीमायें और संभावनायें' में विचार इस प्रकार व्यक्त किया है।

'बच्चन के लोकप्रिय संग्रह 'निशा निमंत्रण' और एकांत संगीत के गीतों में मरण भावना का प्राबल्य है। उसके व्यक्तिगत कारण हैं किन्तु मृत्यु उपासना को यहां एक दर्शन के रूप में स्वीकार किया है।'

इस प्रकार 'निशा निमंत्रण' बच्चन के साहित्य की एक महत्वपूर्ण रचना है जिसमें उनकी भावों की अभिव्यक्ति आंकांक्षा, निराशा, आशा अवसाद, प्रफुल्लता के तमाम भावों के घरातल पर हुई है। भावों में जीवन का सम्पूर्ण दर्शन दृष्टिगत होता है।

जो लोग मेरे 'निशा निमंत्रण', 'एकांत संगीत', 'आकुल अंतर' से परिचति है वे जानते होंगे ये मेरे उस काल की अभिव्यक्तियां है जब मेरे जीवन की दुर्दम परिस्थितियों ने मुझे पीड़ा वेदना, निराशा, अवसाद, विषाद अंधकर एकाकीपन, जीवन की लक्ष्यहीनता को प्राणों की तरह अपनाने को विवश कर दिया था।

जनता यह भी नहीं मन
कौन मेरी थाम गर्दन
है विवश करता कि कह दूं, व्यर्थ जीवन भी मरण भी
स्वप्न भी छल, जागरण भी।

बच्चन की पीड़ा उनके काव्य में साहित्यिक आस्था के रूप में विद्यमान है। 'निशा निमंत्रण' के गीत उनकी इसी आस्था की व्यक्त परिकल्पना है। यह रचना बच्चन ने उस समय की जब उनका ह्रदय दुःखों से परिपूर्ण था। संसार को देने के लिये उनके पास पीड़ा की ही पुंजी थी उसी पूंजी को वे नियति की धरोहर समझ कर जतन से रखे हुए हैं उन्हें डर है कि काव्य कहीं ये दुःख भी उनसे छीनकर न ले जाये। वे दुःख के बदले में चिरसुख की कल्पना भी नहीं करना चाहते क्योंकि यह दुःख प्रिय की निशानी है, लेकिन कवि इतना निराशावादी हो उठा है कि वह समझता है कि सभी की तरह यह दुःख भी उसका साथ छोड़कर चला जायेगा।

साथी, साथ न देगा दुख भी
काल छीनने दुख आता है
जब दुख भी प्रिय हो जाता है
नहीं चाहते जब हम दुख के बदले में लेना चिर सुख भी
साथी, साथ न देगा दुख भी।
जिस परवशता का कर अनुभव
अश्रु बहाना पड़ता नीरव,
उसी विवशता को दुनिया में होना पड़ता है हंसमुख भी
साथी साथ न देगा दुख भी।

दिवस के अवसान पर संसार का नियम है कि हर पक्षी नीड़ पर पहुंचता है उसके आत्मीय उसकी प्रतीक्षा करते हैं बच्चे प्रतीक्षा करते हैं नीड़ों से झांकते है इसी ध्यान में एक पक्षी के परो में भी उत्साह व चंचलता आ जाती और वह दिवस के अवसान पर अपने नीड़ पर पहुंचने की प्रफुल्लता में गति तेज करके उड़ने लगता है। क्योंकि वह जानता है कि किसी को उसका इन्तजार हे। लेकिन जिसका जीवन ही दुखी है उसका कोई आत्मीय नहीं है। कोई उसके नीड़ से उसकी बाट जोहने वाला नहीं है। वह किसके लिये अपनी गति तेज करे, उड़ान भरे। कवि ने 'निशा निमंत्रण में अपने मन की वही विह्वलता व्यक्त की है क्योंकि वह नितान्त एकाकी है दिन निकलने व ढलने की उसमें कोई चंचलता नहीं रह गई है। यही प्रश्न उसके हृदय को शिथिल कर देता है पगों में निष्क्रियता ला देता है कि कौन है उस पार जो उसकी बाट जोहे उसके हृदय में सिर्फ विह्वलता का वास है वह तो अज्ञात दिशा की ओर ही बढ़ा चला जाता है उसके मन का तूफान ये पंछी, लतायें, कुसुम कैसे समझ सकते हैं। जिस उपवन को जीवन में तूफानों ने नष्ट कर दिया है बच्चन ने 'निशा निमंत्रण' की पंक्तियों में पक्षी व वृक्षों को प्रतीक मानकर अपने पीड़ा व्यक्त की है। यह उनकी कृति उनकी आत्मा के सूनेपन के समय की साक्षी है जब वे जीवन का तूफान सहकर अपनी पीड़ा अपनी कविता में सजा रहे थे, जिस काव्य या रचना में दुख या पीड़ा होती है वह उतनी ही मधुर पाठकों के लिये हो जाती है – क्योंकि –

जिन नग्मों में शापर अपना गम रोते हैं
वे उनके सबसे मीठे नग्में होते हैं।

निशा निमंत्रण की ये पंक्तियां क्या उनकी आत्मा की पुकार नहीं लगती।

मुझसे मिलने को कौन विकल
मैं होउं किसके हित चंचल
यह प्रश्न शिथिल करता पद को, भरता उर में विहवलता है
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।

संसार यह कहता है कि तारे गाते हैं जो खुश हैं प्रसन्न हैं। उसको तारों का गायन सुनाई दता है लेकिन कवि को तो उसमें वही आंसू दिखाई देते हैं जो वसुधा पर ओस की बूंद के रूप में गिरते हैं। स्वर्ग में सभी सुख, प्रसन्नता है। वहीं देवता तारों का गायन सुनते हैं आनन्द उठाते हैं पृथ्वी पर दुख है, पीड़ा है संताप है, मानव को उनका रोदन ही सुनाई देता है राग तो उपर उठता है जो स्वर्ग तक पहुंच जाता है तल पर तो मानव के आंसू नीचे झरते हुए दिखायी देते हैं।

प्रकृति कवि के हृदय के अनुरूप परिवर्तित होती है जहां खुशी में प्रकृति हरी–भरी लगती है। हर कुसुम प्रफुल्लित लगता है, तारे गाने लगते हैं। अम्बर नीला सुन्दर लगता है वहीं पीड़ा में कवि हृदय सभी कुछ शोकाकुल रूप में देखता है। जो अन्तर में है वहीं उसे बाहर दिखता है। आदि हर रात्रि में होता है लेकिन अन्त अज्ञात है तारों को उगते हुए चमकते हुए सभी रात्रि में देखते हैं लेकिन उनका विलीन होना कोई नहीं देख पाता है यहां बच्चन तारों की उपमा मनुष्य की खुशी व पीड़ा से करते हैं। क्योंकि जब मनुष्य खुश होता है सारा जग उसको देखता है व्यक्ति सबके साथ मिलकर हंसता है लेकिन रोदन अज्ञात होता है रोदन में कोई साथी नहीं होता। तारों की तरह मनुष्य का रोना भी कोई नहीं देखता – यथा–

कहते हैं तारे गाते हैं।
स्वर्ग सुना करता यह गाना
पृथ्वी ने तो बस यह जाना
अगणित ओस कणों में तारों के नीरव आंसू आते हैं।

'निशा निमंत्रण' में 'क्या भूलूं क्या याद करूं' शीर्षक में बच्चन अपने एकान्त के समय में वे अगणित उन्मादों के क्षण याद करते हैं जे कभी उनके सुख के साथी थे, कभी दुख के साथी थे। उनकी इस स्मृति कोष में अनेकों क्षण यौवन के उन्माद के हैं, अनेक

क्षण अवसाद के हैं क्या–क्या भूलें या क्या स्मरण करें! स्मृतियों के बाहुपाश से किस तरह से मानव को अपने आप को मुक्त कर सकता है। ये पंक्तियां बच्चन के काव्य की अमूल्य पंक्तियां हैं इस गीत में उनकी अभिव्यक्ति है, राग है, रौदन है, गायन है।

> **क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं**
> **अगणित उन्मादों के क्षण हैं**
> **अगणित अवसादों के क्षण हैं,**
> **रजनी की सूनी घड़ियों को किन-किन से आबाद करूँ मैं!**
> **क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं।**

बंगाल का काल -

देश में १९४३ में बंगाल प्रान्त में भारी अकाल पड़ा। जिसने अनके हृदयों को द्रवित किया, करूणामयी अभिव्यक्ति के लिये बच्चन की लेखनी भी चल पड़ी। बंगाल के काल में बच्चन ने देश काल की परिस्थितियों का वर्णन कविता 'बंगाल का काल' के द्वारा किया। जिसका अनुवाद भी बंगला में किया गया। 'बंगाल का काल' की पूरी कविता १००० पंक्तियों में हैं, बच्चन जी उसकी भूमिका में स्वयं लिखते हैं कि अनवरत परिश्रम करके लिखी।

'बंगाल का काल' में बच्चन जी की अभिव्यक्ति कारूणिक न हो कर विद्रोही के रूप में हुई है। जिस समय बंगाल में अकाल पड़ा बूढ़े बच्चे जवान सभी काल के गाल में समा गये। भूख का तांडव हुआ सरकार मौन रही। बच्चन अपनी कविता में ये प्रश्न करना चाहते थे कि व्यक्ति इतना नपुंसक कैसे हो गया। सरकार के खिलाफ रोटी पाने के लिये वह उठ खड़ा क्यों नहीं हुआ यही अभिव्यक्ति अन्य कविताओं से हट कर है।

मुक्त छन्द में लिखी गयी ये कविता बच्चन जी के काव्य कृतियों की एक महत्वपूर्ण रचना है। विनय सरकार ने उसी सन्दर्भ में लिखा है – **'प्रथम तो यह पुस्तक हिन्दी का अनुवाद है, दूसरा अनुवाद हिन्दी कविता का है'।**

बच्चन ने 'बंगाल का काल' में एक विचार धारा को नया आयाम दिया है। गरीबों की विचारधारा विद्रोह का स्वर जिसमें कहीं–कहीं भाव–संवाद सर्वहारा वर्ग का पुट भी शामिल है। **'अपनी रोटी अपना राज'** का नारा गरीब दीन हीन जनता का नारा है। रोटी

के हक की लड़ाई व्यक्ति को स्वयं लड़नी है, वहां न ईश्वर होगा और न ही भाग्य। जब देश में अकाल पीड़ितों के लिये चन्दा इक्टठा किया जा रहा था लेकिन 'बंगाल का काल' में बच्चन एक सवाल करते हैं कि आखिर चन्दे से ही व्यक्ति कब तक जिन्दा रह सकता है उसको तो जीने के लिये एक शक्ति चाहिए प्रेरणा चाहिए, अपना अधिकार प्राप्त करने का विश्वास मन में उत्पन्न होना चाहिए तभी वह भूख, गरीबी से लड़ेगा। कवि की वाणी में वही प्रेरणा है वहीं विश्वास है। बंगाल का काल कविता को बच्चन अपनी यही प्रेरणामयी वाणी के द्वारा चन्दे की पूंजी के रूपये भेंट करना चाहते हैं। यही उनकी मदद है। किसी की दया पर जीवन क्या व्यतीत करना वो तो पशु–पक्षी भी करते हैं। जीवन आत्मसम्मान का नाम है बंग वासियों को अपना आत्म सम्मान चाहिए परनिर्भर न होकर आत्म निर्भर बनना चाहिए। जिस बंगाल ने देश को इतने बलिदानी दिये एवं महापुरूष दिये वही बंगाल का वासी आज सारे देश के लिये दया का पात्र क्यों बना हुआ है। जहां की सरस्वती पूरे विश्व में अपनी वीणा बजाती रही वह सरस्वती की वाणी अपनी ही भूमि वासियों के लिये मौन धारण क्यों किये हुए है। ये तत्कालीन प्रश्न कवि ने 'बंगाल का काल' कविता में बंगवासियों से पूछे हैं। जिसका उत्तर स्वयं उनका अपना विश्वास एवं साहस देगा।

'कालेर कबले बंगला' की भूमिका में विनय सरकार लिखते हैं – **'आज बच्चन बंगाल के दुख से दुखी हैं बंगाली जनता हिन्दी साहित्य द्वारा अटूट श्रद्धा और सहानुभूति प्राप्त करेगी साथ ही साथ यह भी स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य में ज्वार-भाटा उठ आया है। बंग-प्रेम, बंग-सेवा, बंग-प्रचार बच्चन क एक मात्र लक्ष्य है। जो वायरन के लिये यूनान था वही बच्चन के लिये बंगाल है। हिन्दी साहित्य की जय'।**

वायरन अंग्रेजी कवि थे एवं यूनान की परतन्त्रता से दुखी हो कर उन्होंने रचना की थी। बच्चन की तुलना वायरन कवि से करना ही अपने आपमें साहित्य जगत के लिये बड़ी उपलब्धि है। 'बंगाल का काल' की उत्कृष्टता इसी से आंकी जा सकती है।

दुख से कविता की उत्पत्ति हुई है। आत्म अभिव्यक्ति की पूर्णता कवि अपनी लेखनी से ही करता है और बंगाल का दुख बच्चन की आत्माभिव्यक्ति कविता के रूप में बह निकली जो हिन्दी साहित्य के लिये धरोहर हो गयी।

करूणा की अभिव्यक्ति भी क्या इतनी करूण हो सकती है –

नहीं जबानों पर, मुंह पर भी

पड़े हुए प्राणों के लाले

बरस-बरस के पोसे पाले

भूख-भूख कर

सूख-सूख कर

दारूण दुख सह

लेकिन चुप रह

जाते हैं मर

जाते हैं झर।

कवि का कार्य है समाज के समक्ष तत्कालीन परिस्थितियों को लाना वही बच्चन ने इस रचना में किया है। प्रेरणा दी है कमजोर की आवाज को बुलन्द बनाये रखने का आवाह्न किया अपने अधिकारों को कैसे उपयोग किया जाये किस प्रकार अर्न्तशक्ति द्वारा मनुष्य विश्व विजय कर सकता है यही प्रेरणामयी वाणी इस रचना में मुखरित हुई है। 'बंगाल का काल' तत्कालीन परिस्थितियों की एक सशक्त रचना है जो दर्पण के रूप में बंगवासियों के समक्ष प्रस्तुत हुई। जिसने यह सिखाया की देश की आजादी के साथ–साथ आवश्यक है व्यक्ति स्वयं की आजादी उसके अधिकार की उसकी रोटी की आजादी जिसके लिये संघर्ष उसे स्वयं करना हैं, स्वयं पाना है कर्मनिष्ठ होकर जीवन रण में लड़ना है, किसी अदृश्य शक्ति के चमत्कार की आशा तो कायर पुरूष करते हैं जिन्हें अपने पर विश्वास न हो इस प्रकर की विद्रोहात्मक कवितायें पढ़कर भारतीय जनमानस नये समाज के निर्माण के लिये प्रेरणा ग्रहण करता है।

बंगाल का काल लिखते समय बच्चन की जो मनोदशा थी उसकी अभिव्यक्ति स्वयं उन्होंने की है कि – **'१६४२ में बंगाल के अकाल के प्रति मेरे मन में जो प्रतिक्रिया हुई वह सहसा छंदों का बांध तोड़कर मुक्त छन्द में प्रवाहित हुई। मैं समझता हूं यदि मैं 'बंगाल का काल' छंदमय भाषा में लिखत तो शायद इतनी सबल रचना न होती।'**

सतरंगनी -

नाम से विदित अपने अनके इन्द्रधनुषी रंगों के साथ 'सतरंगनी' बच्चन की प्रेम और यौवन के पूर्ण गीतों का संग्रह है। सौन्दर्य की दुर्दभ आसक्ति पंक्ति–पंक्ति में छायी हुई है। प्रेम के प्रति अडिग विश्वास की अभिव्यक्ति ही 'सतरंगनी' है। जीवन की मूल्यताओं

को सहज ही स्वीकार न करने वाले कवि बच्चन अपनी भावनाओं द्वार उसका मूल्य देकर कविताओं में मुखरित हुए हैं सतरंगनी में बच्चन ने प्रकृति के सात रंगों का वर्णन किया तथा उन्हीं रंगों के अन्दर ही वे समस्त प्रकृति के दर्शन करते हैं। वियोग, प्रेम, इच्छा, आकांक्षा, आदि भावों को प्रकृति की सूक्ष्म आंख से देखते हैं। इन्द्र धनुषी छाया में उषा की अंगड़ाई लेना रवि के रथ पर चढ़कर आना कवि के हृदय को उन्मादित करता है। सूनी अंधेरी रात्रि में इन्द्रधनुष की छाया में कवि का गायन फूट पड़ता है। उसी गायन में स्वरों से एक–एक रंग बिखरने लगते हैं।

'सतरंगनी' को बच्चन ने सात भागों में बांटा है। सात भागों में शीर्षक प्रकृति के रूपों पशुपक्षियों, कोयल–पपीहे की वाणी से प्रेरित है। प्रथम पंक्तियों में वर्षा, समीर, कोयल पपीहा, जगनू, नागिन एवं मयूरी के रूपक लिये है। जिनमें मयूरी के नृत्य के सम्बन्ध में हिन्दी जगत मे काफी विवाद भी रहा है। आलोचकों ने यह आपत्ति उठायी है कि नृत्य मयूर ही करता है मयूरी नहीं लेकिन बच्चन ने इसका स्पष्टीकरण भी किया था। तमाम आलोचनाओं के होते हुए भी मयूरी गीत बच्चन के गीत काव्य क एक सुन्दर गीत है।

मयूरी
नाच, मगन-मन नाच।
गगन में सावन घन छायें
न क्यों सुधि साजन की आये
मयूरी आंगन आंगन नाच।

दूसरा रंग सतरंगनी में जीवन की यर्थाथता का है प्रकृति एवं स्पनों के साथ जीता हुआ मानव वास्तविकता को कैसे नकार सकता है। सोती हुई दुनियां सदैव स्वर्ग का ही स्वप्न देखा करती है लेकिन कवि के मन में तो अभावों की रागिनी है वही उसकी संगनी है। मनुष्य को आशाओं का संग नहीं छोड़ना चाहता है। रात्रि भले ही अंधकारमय हो लेकिन व्यक्ति आशा के दीपक को अवश्य जलाता हैं प्रकृति का नियम है परिवर्तन। जो उजड़ गया है उसको फिर से स्थापित करना कहां मना है। इन पंक्तियों में कवि का जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण है। निरन्तर चलते रहना ही जीवन का नाम है। जब तक श्वांस है इस जीवन यात्रा में यात्री को चलते रहना है। इस यात्रा में अपने पक्ष की पहचान करना आवश्यक है। स्वयं अपना निर्णायक बनना है स्वयं अपने स्वप्न देखना है लेकिन सत्य का स्वप्न ही देखना है। व्यर्थ के स्वप्नों में जीवन नहीं व्यतीत करना है। बच्चन का यह

आवाह्न गीत सतरंगनी की अपनी ही पहचान है जो एक संदेश देता है भविष्य को आने वाले युग को कि स्वर्ग का भी स्वपन मनुष्य देख सकता है। लेकिन उसे धरातल नहीं छोड़ना है।

आंख में हो स्वर्ग लेकिन
पांव पृथ्वी पर टिके हैं
कंटकों की इस अनोखी
सीख का सम्मान कर ले।

सतरंगनी में चौथा रंग दो नयन एवं जादू, तूफान, मृगतृष्णा, प्यार और संघर्ष आदि शीर्षकों के साथ उद्‌भाषित किया गया है। प्रेम संघर्ष मृगतृष्णा इन्हीं सब रंगों से जीवन बना है। यही रंग बच्चन के काव्य को सतरंगी बनाते हैं। व्यक्ति दुख को भुलाना चाहता है चिर सुख की कामना करता है। अतीत के गर्भ में समाये जीवन के विद्रय रंग कवि भुला देना चाहता है दुख का राग भुलाना चाहता है नवीन वीणा नये तार की झंकार से वह भविष्य का आवाह्न करता है ये रंग खुशी का, स्वप्निल संसार का, जो कवि पाना चाहता हैं यही सतरंगनी की वीणा है झनकार है, कवि के प्रफुल्लित ह्रदय के उद्‌गार है।

पांचवा रंग आशा का रंग है। शीर्षक 'मुझे पुकार लो' कवि अपने जीवन पथ पर खड़ा है कि नयी खुशियां, उसे पुकारेगी नयी उमंगे उसके ह्रदय को आवाह्न करेगी। उम्मीद की किरण लिये वह प्रतीक्षा करता रहा है कि प्रकृति उसे एक दिन अवश्य पुकारेगी तभी उसका जीवन साकार हो उठेगा।

छठा रंग नये वर्ष के रूप में सतरंगनी में दृष्टिगत हुआ है। नववर्ष सभी के मन में आने वाले युगों की लालसा दृष्टिगत करवाता है जब नवीन उल्लास हर्ष, नवीन प्रवाह हर वस्तु नवीन दिखाई देती है। एक ही दर्शन होता है एक ही आह, एक ही दाह सभी एक होते हैं। छटे रंग के साथ ही कवि अपनी प्रिय के साथ एकाकार होता है उनकी कामनायें एक है स्नेह एक मन की एक ललक है। जब दो मन एकाकार हो उठते हैं, तभी नूतन सृष्टि का निर्माण होता हैं।

सतरंगनी का सबसे सुन्दर रंग सातवां रंग है प्रेम, बच्चन ने सातवें रंग में प्रेम, जीवन, जग, काल, कर्त्तव्य सभी को इसी रंग में मिश्रित किया है। इन्हीं रंगो से मिलकर बनी है सतरंगनी। साधना, विश्वास स्नेह आदि भावनायें ही जीवन को रंगमय बना देती है।

इस जीवन को सुखमय ही तभी बनाया जा सकता है जब इसमे तप कर मनुष्य अपने व्यक्तित्व को तेजोमय बनाये। कर्त्तव्य भी आवश्यक है कवि का मानना है कि स्वप्नमय संसार ही नहीं इसे और सुन्दर बनाना है कर्म द्वारा। उस लोक का भी भय मन में नहीं है क्योंकि दो नयन प्रतीक्षा में खड़े हैं जो सदैव मेरे साथ रहेगे। मृत्युपथ पर भी गुनगुनाता हुआ जाउंगा।

अंत यौवन, अंत जीवन का

मरण क्या

दो नयन मेरी प्रतीक्षा में खड़े हैं।

सतरंगनी में विशेष तथ्य यह है कि कवि ने रूप को प्रयोग कर अपने भावों को अभिव्यक्ति दी है। जैसे मयूरी का नर्तन। मयूरी नारी का प्रतीक है वहीं 'नागिन' भी नारी का ही प्रतीक है। विश्रंखलता से सामंजस्य की ओर अग्रसर करने में एक सही नारी की खोज है और यह नारी का सही रूप है मयूरी। स्वयं कवि ने सतरंगनी के चौथे संस्करण में यह स्पष्ट किया है **'सही नारी की खोज में मैंने परंपरा का अंधानुकरण भी किया है, जीवन मेरे लिये प्रयोग है'।**

इसी प्रकार नागिन भी नारी का ही रूपक है मयूरी आती तो नागिन भाग जाती है वह उसे परास्त करती है पकड़ती और खा जाती है। अर्थात् नारी का विकृत उन्मादित अभिमानी रूप नागिन का और कोमल तेज स्परूप मयूरी का है।

मयूरी एवं नागिन के रूपकों का प्रयोग नया नहीं है। दिनकर की 'उर्वशी' में नारी का वर्णन किया है। उर्वशी आध्यात्म सिद्धि चाहती है वह प्ररूरवा की आत्मा की अनुभूति काया को आभास द्वारा कराती है। इस प्रकार उर्वशी एवं सतरंगनी की 'नागिन' जैसे एक दूसरे की ध्वनियां प्रतिध्वनियां है। काव्य जगत में मयूरी के रूपक का प्रयोग अन्य स्थानों पर भी हुआ है –

वन्य गजों की क्रीड़ा के साथ

कहीं - कहीं

मयूरी नृत्य भी देखना तुम

पंक्तियां गिर रही शाखों से

या बहाती है डालियां आंसू

नाच भूली है गम से मोरनियां

तर्क चरना किया है हिरनों ने

सतरंगनी की भूमिका में बच्चन अभिव्यक्ति करते हैं कि 'सतरंगनी तम भरे, गम-मरे बादलों के ऊपर इन्द्र धनुष रचने का प्रयास है। अवसाद और अंधकार में से प्रसन्नता की रंगच्छटा में आने का'।

संक्षेप में सतरंगनी अंधकार के ऊपर प्रकाश, विध्वंस के उपर निर्माण, निराशा के ऊपर आशा और मरण के ऊपर जीवन की, जीत का गीत हें यह कोई सस्ता आशावाद नहीं। यह अश्रु, स्वेद, रक्त का मूल्य चुकाकर उपलब्ध किया गया है।

इसने मेरा स्वर ही नहीं बदला, इसने मेरा जीवन बदला। जीवन लिखने का ध्येय तो इन गीतों में नहीं रहा, पर उसकी तीव्रतम स्थितियों के संकेत-बिन्दु जहां तहां है, जिन्हे अपनी कल्पना से जोड़कर एक सूत्रबद्ध कहानी गढ़ लेना भाव प्रवण पाठक के लिये कठिन नहीं है। ....

सतरंगनी मेरे काव्य जीवन में एक नया मोड़ उपस्थित करती है .... उस मोड़ के प्रति मेरे मन में कोई अपराध भावना काम कर रही है इसे मैं नहीं मानता। सतरंगनी के गीतों के द्वारा मैं 'निशा निमंत्रण', 'एकांत संगीत' और 'आकुल अन्तर' का अंधकार और अवसाद पूर्ण परिस्थिति से उपर उठा हूं। अपने दुख शोक की अभिव्यक्ति तक तो ठीक और शायद स्वाभाविक भी है, पर मैं उन्हें दुलारने लगता जिसका खतरा भी था, तो मेरी भावना आत्मदया में बदल जाती और आत्मदया को मैं सबसे बड़ा अपराध मानता हूं। ....

जब मेरी जिजीवषा अंधकार से प्रकाश की ओर गई तब मेरे कवि ने 'सतरंगनी' के गीतों में मुझे संभाला, मुझे बल दिया, मुझे प्रोत्साहन दिया। मैं 'सतरंगनी' के गीतों को अपने सबसे अधिक स्वस्थ गीतों में समझता हूं'।

आकुल अन्तर -

'आकुल अन्तर' बच्चन की आन्तरिक भावनाओं की अभिव्यक्ति है। १९४० में लिखा हुआ 'आकुल अन्तर' ७१ गीतों का संग्रह है। जिसमें कवि ने अपनी आन्तरिक अशांति को व्यक्त करके बाह्य एवं आंतरिक विक्षुब्धता को वाणी देने का यत्न किया है।

भावों की विभिन्न अवस्थाओं से होता हुआ कवि का व्यथित ह्रदय अपनी आन्तरिक पीड़ा व्यक्त करता है। 'आकुल अन्तर' के गीत छन्द एवं तुक के बन्धनों से मुक्त हैं लय में लिखित है जो हिन्दी के लिये नये प्रयोग सिद्ध हुए हैं।

'आकुल अन्तर' का सबसे महत्वपूर्ण गीत **'क्या करूं संवेदना लेकर तुम्हारी'** हिन्दी गीत काव्य के क्षेत्र में एक लोक प्रिय गीत के रूप में जाना जाता है। मानसिक संवेगों आवेगों की अभिव्यक्ति ही गीत एवं कविता के रूप में प्रस्फुटित होती है यही वेदना का स्वर बच्चन को इस रचना में सुनाई देता है। बच्चन ने अपनी आत्मकथा में भी इस गीत के विषय पर प्रकाश डाला है। नारी उनके जीवन में भिन्न–भिन्न रंग लेकर आयी थी वही उनके काव्य में मुखरित हुआ। आकुल अन्तर में उनकी वेदना, निराशा का भाव ज्यादा दृष्टिगत हुआ है इसी निराशा को एक ह्रदय में शूल को उन्होंने 'सिनिकल मूड' कहा है। ईसापूर्व यूनान के दार्शनिकों के एक पंथ ने अपने को 'सिनिक' कहा जो सभ्यता के विकास को आशंका की दृष्टि से देखते थे। एक तरह की ह्रदयहीनता जो दूसरे की संवेदना को अनुभव नहीं कर सकती। बच्चन ने अपनी आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण' में स्वयं व्यक्त किया है –

सिनिसज्म के कटु खुरदरे पल्लवों की छाया 'आकुल अन्तर' के कई गीतों में देखी जा सकती है। 'क्य करूं संवेदना लेकर तुम्हारी, वाला गीत भी इसी छाया से मुक्त नहीं है'।

उस नयन में बह सकी कब
इस नयन की अश्रुधारा।

'आकुल अन्तर' में कवि को सम्पूर्ण सृष्टि एवं प्रकृति के समस्त पहलुओं में विकलता दृष्टिगत होती है। समस्त प्रकृति को कवि अपने ह्रदय के समान ही दग्ध पाता है। अन्तर की विकलता एवं विह्वलता में संसार की समस्त जीवन जड़ विकल दिखते हैं।

सागर की लहरें सागर का श्रंगार कहलायी जाती हैं लेकिन कवि की दृष्टि में वह सागर का विकल ह्दय है सागर के ह्रदय में जो दुख का ज्वार है वही लहरों के रूप में फूट पड़ता है। कली जब खिलती है उसकी महक सर्वत्र व्याप्त हो जाती है वह उसकी विकलता है। कोयल की कोमल वाणी में भी मनुहार नहीं है। उसकी तड़प है उसकी अकुलाहट है। वीणा का झंकार भी उसका विरह राग है।

विरह की इस चरम सीमा को बच्चन ने 'आकुल अन्तर' में प्रकट किया है। सम्पूर्ण प्रकृति में वे अपने अन्तर के भाव निहित पाते हैं। कवि के गीत उसके उद्‌गार नहीं उसकी विकल भावना है। उसके हृदय का खालीपन हे जो काव्य से वह भरता है।

अन्य पंक्तियों में व्यक्त करते हैं कि 'मृत्तिका पिण्ड' को भगवान बना करउसकी आराधना की जाये यदि मन में पूजा भाव उमड़े। सब कुछ जानते हुए भी सत्य को एक बार नकार दे कल्पना को ही रूप प्रदान कर सभी मनुष्य जानते हैं कि मृत्तिका पिण्ड है लेकिन भाव पूजा का रखते हैं उसकी कल्पना करते हैं। यह संसार हृदय की अग्नि का सिर्फ उपहास बनायेगा। अपने दुख को स्वयं आत्मसात् कर लो अपनी हृदय ज्वाला को स्वयं में ही समेट लो क्योंकि यह उपहास का कारण बन जायेगी। अन्तर की अकुलाहट को कठोर बन स्वयं में समाहित करके अपने हृदय को पाषाण बना लें।

कवि हृदय प्रेम की अग्नि में इतना तप्त हे कि वह स्वयं पर भी अविश्वास करता है। वह विरह के पथ पर इतना आगे बढ़ चुका है कि मार्ग में यदि उसका प्रियतम भी भेंट देने लगे तो वह विश्वास नहीं करेगां उसके चितवन में वह अश्रु देखत है उसके चुम्बन में आह महसूस करता है। आकाश की उंचाइयों का सूनापन वह अपने हृदय में पाता है।

जब इस पृथ्वी पर प्रिय एवं प्रियतम का मिलन होता है चांद सितारे गीत गाते हैं कवि उसी का आवाह्नन करता है आज हृदय से मिले हैं सम्पूर्ण प्रकृति प्रफुल्लित हो लेकिन यही प्रकृति अश्रुबहाती है जब वियोग होता है। कितनी बार प्रियतम का अभिसार, प्रणय मिलन होता है ये मिलकर गाते हैं आज वही चांद सितारे रो रहे हैं। जब अधर से अधर विलग है, बांह से बाहं विलग है, अरस प्रणय में बंधन जब टूटते हैं, यहीं चांद सितारें मिलकर रोदन करते हैं।

अर्थात् ये प्रकृति ही मनुष्य की संगनी है जो सुख एवं दुख की साथी है उसके मिलन पर यही प्रफुल्लित होती है उसके विरह पर उसके साथ – साथ अश्रु बहाती है। कवि व्याकुल हृदय प्रकृति को अपने समीप पाता है।

एकांत संगीत -

जहां 'निशा निमंत्रण' के शोक भरे हुए गीतों ने कवि की पीड़ा को व्यक्त किया है वहीं पीड़ा 'आकुल अन्तर' व एकांत संगीत' में आकर कवि आधार स्तम्भ बन गयी है। वह

पीड़ा से जड़ हो कर , दृढ और व तटस्थ पाषाण की तरह अग्नि हो जाता है उसे अब कोई दुख या सुख विचलित नहीं कर सकता है। अपनी पीड़ा से अपनी उर्जा को समेट कर कवि ने उक्त पंक्तियां 'एकांत संगीत' में लिख डाली।

दुनिया अब क्या मुझे छलेगी
बदली जीवन की प्रत्याशा
बदली सुख-दुख की परिभाषा
जग के प्रलोभन की मुझसे अब क्या दाल गलेगी
दुनिया अब क्या मुझे छलेगी।

....

चार कदम उठकर मरने पर मेरी लाश चलेगी
दुनिया अब क्या मुझे छलेगी।

उपरोक्त पंक्तियां कवि की स्थिरता व दृढता की द्योतक है वह पीड़ा में टूटते नहीं और जुड़ जाते हैं दृढ़ व्यक्तित्व का निर्माण वे अपनी पीड़ा के साथ जाकर करते हैं न ही संसार का कोई प्रलोभन उनके अडिग मार्ग को अवरूद्ध कर सकता है न ही कोई भावनाओं को छल सकता है क्योंकि मरण से ही जीवन का स्त्रोत फूट पड़ा है इस जीवन में तन भी संयती है मन भी संयमी है। एक पाषाण, चट्टान के समान दृढ़ शक्ति पिण्ड है जिसके ऊपर तूफानों का कोई प्रभाव नहीं है।

अपनी दृढ़ता की गर्माहट में कवि अग्निपथ पर भी चल सकता है कोई ज्वाला उसको भस्म नहीं कर सकती क्योंकि उसका जन्म ही दुख की ज्वाला से हुआ है वह अपने अग्निपथ पर चलता हुआ एक पत्र पेड़ की छाया की भी प्रार्थना नहीं करता इस गीत में बच्चन ने जो आवाह्न किया है वह एक टूटे हुए मनुष्य को जीवन की कठिन से कठिन राह पर चलने के लिये प्रेरणा स्रोत है। वे आवाह्न करते हैं कि तू कभी नहीं थकेगा, कभी नहीं थमेगा यही प्रतिज्ञा कर मनुष्य अपने जीवनरूपी अग्निपथ पर चला चला।

संघर्ष, पीड़ा, शोक, सन्ताप ये देव लोक में नहीं है उनसे लड़कर संघर्ष करने का यह दृश्य पृथ्वीलोक में ही है कि मनुष्य अश्रु स्वेद रक्त से (पीड़ा के सफेद आंसू रूपी रक्त) से लथपथ होता हुआ अपने गंतव्य की ओर बढ़ा चला जा रहा है।

'अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ !

वृक्ष हो भले खड़ें
हो धने हो बड़े
एक पत्र छांह भी मांग मत, मांग मत, मांग मत !
'अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ !

बच्चन परयह आरोप लगता है कि उनकी कवितायें, मधुकाल या मदिरा सम्बन्धी काव्य पाठकों की चिर दमित यौन भावनाओं को सहलाता है – गुदगुदाता है। वह समूह का काव्य है। इस सम्बन्ध में बच्चन ने 'दशद्वारा से सोपान तक', 'बसेरे से दूर' (आत्मकथा) में अपनी व देवेन्द्र नाथ शर्मा की बातचीत का कुछ अंश दिया है। उसमें उन्होंने इन आरोपों का यथोचित उत्तर दिया है कि उनकी अभिव्यक्तियां क्यां हैं –

'कविता का संबध यदि जीवन जीने-भोगने से है (मेरे 'भोगने' की परिभाषा में त्यागने के लिये भी स्थान है, तो यौन-भावना अथवा भक्ति-भावना से कवित्व का उद्भव क्यों गलत समझा जाये। दुनिया की तीन-चौथाई कविता तो यौन-भावना से ओत-प्रोत होगी, और फायडीप मत मानें तो समस्त कविता किसी न किसी रूप में यौन भावना की ही प्रतिमूर्ति है।'

.... मैं न छायावाद से बंधा हूं न ईटस से, न कविता से, मैं अपने आप से बंधा हूं।

मैं नहीं समझता मेरे सर्जक मेरे अतिरिक्त किसी दूसरी ओर देखता है, मैं सच्चाई से कहता हूं कि ये मेरे सर्जक की सीमा नहीं, हां यह मेरे व्यक्तित्व की ही सीमा हो तो मैं नहीं कह सकता। मैं अपने को अद्वितीय असाधारण नहीं समझता। अभी कविताओं के भावों को ग्रहण करने के लिये उनके कुछ विशिष्ट काव्य संग्रहों का अवलोकन करना होगा जिनमें उन्होंने अपने मनोभावों की झांकी प्रस्तुत की है।

एकांत संगीत -

'एकांत संगीत' 'निशा निमंत्रण' की शैली में लिखा गया है। १६३८–३६ में लिखा हुआ यह १०० गीतों का संग्रह है। एकांत संगीत के गीत स्वर, पंक्ति तुक आदि से मुक्त हैं, उनमें एकरूपता में विभिन्नता है।

कवि ने जो एकाकीपन का अनुभव किया उसकी चरम सीमा को एकांत संगीत में

व्यक्त किया है। जहां पर उनका कल्पित साथी भी साथ नहीं है कवि एक दम अकेला है। वेदना इतनी घनीभूत हो गयी है कि उसको व्यक्त करने के लिये वातावरण का आश्रय लेने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती है। जीवन के एक मोड़ पर प्रत्येक व्यक्ति अपने को एकाकी अनुभव करता है वहीं वह स्वयं को साक्षात्कार करता है। उसी साक्षात्कार को कवि बच्चन ने व्यक्तिगत अनुभवों को कला के धरातल पर ला कर सार्वजनिक बना दिया है जो एकांत संगीत हर पाठक के हृदय की अपनी भावनाओं का गीत बन गया है।

एकांत संगीत में कवि अपने आपको सम्पूर्ण अकेला, निःसग, असंग और एकाकी अनुभव करता है। वही कविता में व्यक्त करता है। कवि मानसिक तनावों से गुजरता हुआ भावनाओं, कल्पनाओं स्थापनाओं से कविता को साधना चाहता है कवि के मनन चिंतन की प्रक्रिया का क्रमानुसार लेखा–जोखा 'एकांत संगीत' में देखने को मिलता है – यथा –

हर जगह जीवन विकल है
तृषित मरूस्थल की कहानी
हो चुकी जग में पुरानी
किन्तु वारिधि के हृदय की प्यास उतनी ही अटल है
हर जगह जीवन विकल है।

बच्चन की भावातिशयता की यह काव्यात्मक अभिव्यक्ति है। उनके काव्य को भावनापूर्ण बनाती है। अपनी आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' में बच्चन लिखते हैं – **'भाव प्रवण मन के लिये, कवि के लिये, भाव भीगे कवि के लिये, घटित और अनुमानित की आत्मानुभूति में कोइ खास अन्तर नहीं रहता, उसे देखना, समझना जो भोग सकना एकांत संगी के आस्वादन का सबसे महत्वपूर्ण अंग है'।**

एकांत संगीत में कवि की भावनाओं की सहज स्वाभाविक वक्र वर्तुल एवं अग्रगामी गति की अभिव्यक्ति है। इसमें कविं ने अपने एकांत हृदय का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। जिसमें कवि की निराशा इतनी करूण हो गई है कि उसने एक सुन्दर स्वप्न एवं संवेदनशील सत्य को उद्घाटित किया है। सूनेपन में कवि एक स्वप्न देखता है –

मेरा जोर नहीं चलता है
स्वप्नों की देखी निष्ठुरता

स्वप्नों की देखी भंगुरता
फिर भी बार-बार आकर के स्वप्न मुझे निशि-दिन छलता है।

एकांत संगीत की पंक्तियों में कवि इस सीमा तक निराश एवं एकाकी हो गया है कि वह ईश्वर की सत्ता को भी नकारना चाहता है वह मंदिर–मस्जिद को मनुष्य की पराजय का प्रतीक मानता है जहां व्यक्ति हाथ जोड़ नतमस्तक हो अकर्मण्य बन जाता है वह कहता है कि प्रार्थना करना कायरता है प्रार्थना मत करो, करना ही है तो स्वयं उद्यम करो अपने भाग्य विधाता स्वयं बनो कवि के इस एकाकी जीवन में ईश्वर को भी प्रवेश नहीं हो पाता है।

बच्चन की काव्य में आत्माभिव्यक्ति की प्रक्रिया बहुत गूढ व जटिल और रहस्य पूर्ण है। कवि का प्यार करना उसका मरण है जो व्यापक अर्थ में है कवि सर्वस्व न्योछावर करके प्रेम करता है प्रेम उसके लिये करूणा है, प्यार अपरिपक्व मन देता है। करूणा भी परिपक्व मन की अभिव्यक्ति है प्रेम की निष्ठुरता को आत्मभोगी स्थिति में ही पहचाना जा सकता है। एकान्त संगीत की इन पंक्तियों में कवि का प्रेमिका को सम्बोधन अधिक आत्मबोध है।

मुझको प्यार न करो, डरो
जो भी मैं था, अब रहा कहां हूं
प्रेत बना निज घूम रहा हूं
बाहर से ही देख न आंखों पर विश्वास करें
मुर्दे साथ सो चुके मेरे
देकर जड़ बाहों के फेरे
अपने बाहुपाश में मुझको सोच-विचार भरो
जी वन के सुख सपने लेकर
तुम आओगी मेरे पथ पर
है मालूम कहूंगा क्या मैं ? मेरे साथ मरो!

एकान्त संगीत के गीत बच्चन के सूने–पन के साक्षी हैं जब उन्होंने एकाकीपन सिर उपर उठाकर एक सपना देखा जो उनके एकाकीपन से अधिक सुन्दर था। जिसके समक्ष उनका कवि मन चंचल–दुर्बल हो उठता है। जिसके प्रति मन में ममता जगी थी –

ममता – जिसे कुचल कर देवत्व के आसन पर पांव धरने के बजाये उसे ह्रदय में स्थान दे अंकिचन मानव बनने, बने रहने में बच्चन अधिक गर्व अनुभव करते हैं वह सपना शायद प्रकृति से लज्जालुता भी हो सकती है या निष्ठुरता भी – निकट तो साकार न हो सका पर उसने जो ममता जाग्रत की थी वह निराशा में करूण क्रन्दन बन गई उसने एक दिन सुन्दर स्वस्थ संवेदनशील सत्य को ही अपनी ओर आर्कषित कर लिया स्वप्न और सत्य का जो सन्दर्भ है वह इस गीत से प्रतीत होता है –

मेरा जोर नहीं चलता है।
स्वप्नों की देखी निष्ठुरता
स्वप्नों की देखी भंगुरता
फिर भी बार-बार आकर के स्वप्न मुझे
निशिदिन छलता है
सूनेपन के सुन्दर पल को
कैसे दृढ़ करवा दूं मन को
उतनी शक्ति नहीं है मुझमें जितनी मन में
चंचलता है
ममता यदि मन में मिटपाती
देवों की गद्दी हिल जाती।
प्यार हाय, मानव जीवन की सबसे भारी
दुर्बलता है
मेरा जोर नहीं चलता है।

जाल समेटा -

'जाल समेटा' १६७३ में लिखी गयी कवितायें है। जिसका प्रथम संस्करण १६७३ द्वितीय १६८५ में प्रकाशित हुआ है। 'जाल समेटा' की कविताओं में बच्चन ने नयी कविता के रूप में कवितायें लिखी हैं क्योंकि इस समय प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद की कवितायें हिन्दी साहित्य में खूब लिखी जा रही थीं उसी श्रंखला में 'जाल समेटा' संग्रह की रचना बच्चन ने की है।

कविताओं की शैली में नयापन तो दृष्टिगत होता है, लेकिन इन कविताओं को

'अकविता' की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। भावों से ओत–प्रोत है। 'जाल' जिसके मोह के प्रतीक है। देश एवं विश्व की तत्कालीन घटनाओं के ऊपर ही इस संग्रह की कवितायें लिखी गयी है। वास्तवीकता के धरातल पर ये कवितायें लिखी हैं। 'रक्त की लिखत' चक आत्मदाही' रावण, कंस मध्यस्थ, पानी पत्थर आदि छोटी–छोटी कवितायें बड़ी ही सटीक हैं। 'दिल्ली की मुसीबत' आदि कवितायें वर्तमान राजनीति एवं राजनेताओं पर एक करारा व्यंग है जहां देश की जनता के पास रहने के मकान नहीं है वहीं अमर हो गये पूर्व राजनेताओं एवं प्रधानमंत्रियों के लिए कई–कई वर्गमील जमीन उनके स्मारक एवं समाधि के रूप में छोड़ना कहां तक तर्क संगत है।

दिल्ली बेचारी इतनी जमीन कहां से
लायेगी।
बदकिस्मत आखिर को
समाधि ओर स्मारकों की नगरी बन के
रह जायेगी

इन कवितओं में बच्चन ने जो व्यक्त किया है उससे यह दृष्टिगत होता है कि वर्तमान शसन व्यवस्था, मानवीय मूल्यों एवं शिक्षा की त्रृटिपूर्ण प्रणाली के प्रति उनके मन में आक्रोश उमड़ता है। प्रश्नचिन्ह लगता है उसी को अभिव्यक्ति दी है। कवि के काव्य जगत की आखरी पड़ाव है 'जाल समेटा'। सुन्दर कल्पनाओं, आशाओं विरह–वियोग एवं प्रकृति–प्रेम की भावनाओं से ओत–प्रोत कवितायें लिखने के बाद कवि ने अपने काव्य की पूर्णता प्राप्त कर ली है और एक बूढ़े किसान के माध्यम से वह अपने जीवन के प्रति पूर्णता के भाव व्यक्त करते हैं।

अब न खुरपी, न हंसिया,
न पुखट, न लढ़िया
....
खलियान का खलिहान पाटा
अब मौत क्या ले जयेगी तेरी मिट्टी से
ढेंगा।

अर्थात् कि बूढ़ा किसान अपने श्रम का प्रतिफल पा चुका। खेत खलिहान में वह

सब कुछ बो चुका, काट चुका अब वह जीवन की परम शांति में दिन व्यतीत कर रहा है। जीवन के प्रति संतोष है मृत्यु से कोई भय नहीं है मृत्यु के स्वागत हेतु वह तैयार है। इसी प्रकार कवि भी जीवन से पूर्णरूप से संतुष्ट है न अतीत का कोई खेद है न भविष्य की आकांक्षा। जीवन के आखरी पहर में उसके प्रति संतोष एवं पूर्णता के भावों की इससे उत्कृष्ट अभिव्यक्ति और क्या हो सकती है। जाल समेटा कविता के शीर्षक का सम्पूर्ण भाव यही है व्यक्ति इस संसार में आता है। एक मछुआरे की तरह जीवन सागर में वह अपना जाल फैलाता है। एवं उसी में कुछ पाने खोने के संघर्ष में रत रहता है और शाम होते ही व्यक्ति अपनी तमाम आकांशाओं, आशाओं एवं भावनाओं को अपने में ही समेट लेता है।

दो चट्टानें -

दो चट्टानें शीर्षक प्रतीकात्मक है। ये बच्चन की एक प्रतीकात्मक कविता है जो कि प्रीत प्राचीन दन्त कथाओं से लिये हैं। 'दो चट्टानें' कविता के संग्रह में अन्य कवितायें भी शामिल हैं किन्तु मुख्य कविता 'दो चट्टानें'। कवि ने भावों विचारों में परिवर्तन के आधार पर प्रतीकों को परिवर्तित किया है। सिसिफस – हनुमान। हनुमान का प्रतीक तो प्रसिद्ध है। सिसिफस – यूनानी दंत कथाओं से लिया गया है जिसको दण्ड दिया गया है या वह एक चट्टान को ठेलकर धरती पर लुढ़काये और फिर पर्वत पर जाये यह क्रिया अनवरत करता रहे।

इससे हनुमान का – अपने हाथ में एक पहाड़ लिये संजीवनी लाने हेतु। दोनों ही प्रतीक मानव सेवा के लिये चट्टान को धारण करते हैं। सिसिफस स्वर्ग से मृत्युलोक के लिए आग चुराता है। कवि ने अपने भावों की अभिव्यक्ति में लिखा है –

चार कदम उठकर मरने पर,
मेरी लाश चलेगी।

कवि को सारा संसार सिसिफस के दण्ड भोगने जैसा प्रतीक होता है क्योंकि जीवन मूल्यों का विघटन हो चुका है। मानवता अपना मूल्य खो चुकी है। सभी एक प्रकार का निरर्थक जीवन चट्टान ढोने जैसा जी रहे हैं वहीं कवि को दूसरा प्रतीक दिखायी देता है हनुमान, का संजीवनी लाने के लिये। संजीवनी – को शांति का प्रतीक माना है जिसके लिये मनुष्य हरदम तरसता रहता है जिसको पाना आसान कार्य नहीं है क्योंकि हर मनुष्य शांति से नहीं जी सकता शांति खोजना तो पर्वत से संजीवनी लाने जैसा ही कार्य है जिसे

हनुमान जैसा जितेन्द्रिय युग पुरुष ही ला सकता है।

जिस तरह सिसिफस एक ही चट्टान को निरंतर ढोता जाता उपर की ओर व नीचे ओर उसी तरह पीढ़िया ढोती हैं। पूर्व पीढ़ियों के कर्मों का फल, उसे और कुछ सृजन करती है और कुछ हनन् करती हैं। लेकिन युग वहीं रहता है चट्टान की तरह उपर नीचे होता जाता है। अपने–अपने युग का अहम् सभी दिखाते हैं लेकिन सिसिफस की निस्वार्थ भावना नहीं दिखती है यदि चट्टान का प्रयोग अपने स्वार्थ हेतु उपयोग लाता यहां कवि ताज की तुलना करता है कल्पना करता है कि यदि सिसिफस भी अपनी प्रेमिका के लिये चट्टान का ताज बनवाता तो। उसी तरह हनुमान सा आत्मदानी, आत्मत्यागी क्या मानव बन पाया है। अपने गुण का ढोल तो सभी पीटते हैं, कवि आशा करता है कि काश! हनुमान की आत्म त्याग की भावना मानवों को संयत रख पाती। हनुमान का चरित्र एवं कार्य तो सर्व विदित है लेकिन बच्चन ने उनके चरित्र एवं उनके जीवन को अपने श्रद्धा भावों के अनुसार अभिव्यक्ति दी है उनके देवत्व को मानवता, निःस्वार्थ सवो, वीरता की कसौटी पर खरा पाया है इसी करण वे उनको देव मानते हैं, युग पुरुष मानते हैं। जिस प्रकार राम की शक्ति पूजा की निराला राम के चरित्र को देवत्व की उंचाई पर रखते हैं वहीं बच्चन ने भी हनुमान के चरित्र को उद्घाटित किया है।

'दो चट्टानें' का प्रारम्भिक भाग सामयिक विषयों की कविताओं पर आधारित है। देशकाल की स्थिति, समस्यायें व्यक्ति की सोचें वक्त के साथ बदलते आयाम इन्हीं विषयों पर बच्चन ने स्वयं को अभिव्यक्ति दी है। 'गांधी', युग पंक, दयनीयता, संघर्ष, ईर्ष्या आदि कवितायें पाठकों को विचार करने पर मजबूर करती हैं। इनके माध्यम से बच्चन ने समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं सफेदपोशों के उपर करारा व्यंग किया है। जहां कल्पना के प्रेम नाजुक गीतों में बच्चन ने अपनी आन्तरिक पीड़ा व्यक्त की है वहीं वे अपनी आन्तरिक पीड़ा व्यक्त की है वहीं वे अपनी इन कविताअें पर अपनी मानसिक पीड़ा भी नहीं छुपा सके हैं जिसे उन्होंने निःसंकोच अभिव्यक्ति दी है। व्यक्ति का एक दोष अहंकार है यहां इसी अहम् को गैंडे का रूपक बनाकर कवि परोक्ष रूप से इसका नकारने की शिक्षा दी है।

'गैंडे की गवेषणा' शीर्षक की कविता का भाव, बच्चन ने राहुल के सरहपाद 'दोहा कोश' से लिये हैं उसी में उपर उन्होंने अपने विचारों की अभिव्यक्ति दी है कि अभिमानी पुरुष का यही मिथ्याभिमान होता है कि संसार उसी से चलता है यथा –

चन्द्र दर्शन के समय
मैं छिप जाता हूं सिकुड़कर
कि मेरे सींग की खाकर टक्कर
कहीं गिर न पड़े वह भू पर।

दोहा कोश मे इस प्रकार है –

चन्द्र दर्शन में समय गैंड़ा सिकुड़ छिपे।

'दो चट्टाने' को १६६५ में 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार भी दिया गया है।

बच्चन स्वयं कहते है कि मैं धर्म मे निहित कविता की पूजा करता हूं। एक साक्षात्कार में उन्होंने अपने विचार व्यक्त किये हैं –

मैं हिन्दू धर्म को एक बड़ा काव्यात्मक धर्म मानता हूं, जहां सब कुछ कल्पना के बूते हैं , कि ये शिव, वे गणेश, ये हनुमान। पर प्रत्येकों में भी बड़ी ताकत होती है आप इनका ध्यान कीजिये हां वे आपका जीवन ही बदल देंगे। तो इस परिकल्पना में जो कविता निहित होती है में उसकी पूजा करता हूं। कल्पना तो अनंत है अमर है, से वे देवता भी अनंत अमर, संदेश ज्ञान की परिधि से परे हुए।

'दो चट्टाने' में कवि ने अपने अन्दर का यही काव्यात्मक धर्म निभाया है।

बुद्ध और नाचघर -

'बुद्ध और नाचघर' नयी कविता की श्रंखला की कृति हैं। इसमें बच्चन ने समस्त मानव समाज को महात्मा बुद्ध के आदर्शो को एक बार फिर स्मरण करवाया है। जो समाज किसी भी महापुरुष को भगवान की श्रेणी में रखकर उनके ही नाम से तमाम अनैतिक कार्यो में लिप्त रहता है। कवि ने इस कविता में यह संदेश दिया है कि हम व्यक्ति की पूजा करने के ढ़ोंग को छोड़कर उसके बताये हुए आदर्शो एवं उसकी मान्यताओं जीवन में अमल करे तभी उसके प्रति किया गया सम्मान सार्थक है।

आधुनिकता में भगवान, महापुरुष भी एक सजावट की वस्तु बनकर रह गये हैं जीवन में इतनी विसंगतियां आ गई हैं कि हम आधुनिकता की दौड़ में नैतिक मानवीय मूल्यों को खो चुके हैं। भगवान बुद्ध ने जिन–जिन अनाचारों का विरोध किया, पाखंड के विरूद्ध

स्वर उठाया हम उनकी प्रतिमा एवं व्यक्तित्व के माध्यम से उन्हीं अनाचारों एवं पाखंड में लिप्त हैं।

तथाकथित उच्च्य कहा जाने वाला सामाजिक वर्ग भगवान को भी अपनी शान शौकत का अंग समझता है। अभिजात्यवर्ग के भव्य घरों एवं ड्राइंगरूमों की शोभा बढ़ाने की वस्तु मात्र बुद्ध की प्रतिमा रह गयी है। जिस मूर्ति पूजा का विरोध उन्होंने किया था समाज उन्हीं की प्रतिमाओं का क्रय–विक्रय कर मूर्ति पूजने लगा।

भगवान बुद्ध की तपस्या का लीनावस्था में उनके सिर में जो झाड़फानूस था उसको कला की वस्तु मानकर उनकी प्रतिमा में बालों को घुंघराला रूप प्रदान कर कला को बेचा जाता है सत्पूर्ण विश्व में उनकी मूर्तियां विद्यमान हैं। 'मद्य निषेध' का आवाह्न उन्होंने अपने उपदेशों में किया है। यह समाज उसी प्रतिमा के समक्ष मांस भक्षण एवं मद्यपान में लिप्त है। नाचघर में बुद्ध की प्रतिमा की उपस्थिति को देखकर अनायास ये विचार कवि के ह्रदय में उठते हैं और वे 'नाचघर' एवं बुद्ध के आदर्शों एवं उपदेशों के विरोधाभास को अनुभव करते हैं। जिस भोग विलास के बीच रहकर उसको एक दिन त्यागकर तपस्या में लीन हो गये थे, बुद्ध। यह संसार एक समय उन्हीं के पगचिन्हों पर चलने लगा था। सारे विश्व जापान, मगोलियां, जावा, सुमात्रा आदि देशों में जिनका धर्म प्रसारित हुआ सभी 'धम्म शरणं गच्छामि' के नारे पर पंक्तिबद्ध हो खड़े होगये कुछ दिन उपरान्त यह संसार फिर वही पुरानी चाल चलने लगा है। कितने ही महात्माओं, पीरों पैगम्बरों को कुछ दिन ग्राह कर यह दुनिया फिर अपनी ही चाल में चलती है। सब कुछ वहीं रहता है किसी के वेद वाक्य उपदेशें को यह सांसारिक श्रवण करता है अमल करना उसके वश की बात नहीं है। यथा –

कुछ दिन चलता है तेज
हर नया प्रवाह
मनुष्य उठा चौंक, हो गया आगाह
वाह री मानवता
तू भी करती है कमाल।

'बुद्ध और नाचघर' भावों की दृष्टि से एक उत्कृष्ट कविता है। नाचघर में बुद्ध प्रतिमा कवि को व्यथित करती है। जीवन के मूल्यों की आस्था पर सोचने पर बाध्य करती है। बाह्रय आडम्बर का यह संसार किसी भी मानवीय मूल्यों को अपने कुकर्मो द्वारा नकार

देता है। कवि यह संदेश देता है कि स्वयं का ईश्वर के आदर्शों के समीप होना चाहिए न कि उसके स्थूल रूप की अराधना की जानी चाहिये। बुद्ध का जो महान् लक्ष्य था समाज को उच्च शिखर पर ले जाने में वह कहां विलीन हो गया है यह समाज उन्हीं की संस्थाओं में उन्हीं की मान्यताओं का मखौल बनाये हुए है। किसी के सत्कर्मों का अनुकरण करना ही उसके प्रति सच्ची आस्था है न कि उसके सत्कर्मों का गुणगान करना या उसका बाह्य आडम्बर करना।

'बुद्ध और नाचघर' देश की वर्तमान दशा पर जीता जागता चुभता व्यंग है जिसमें कवि ने आधुनिक युग जीवन की अभिव्यक्ति की हैं। यह नयी आधुनिक शैली में कविता की देन है।

लोक गीत -

लोक साहित्य में अर्न्तगत लोक गीतों का स्थान प्रमुख होता है। इन्हीं गीतों में लोकजन की उनके परिवेश व परिस्थिति की समय एवं स्थल की कर्म, संस्कारों की लययुक्त अभिव्यक्ति होती है। बच्चन के कुछ लोकगीत इसकी साक्षात् मिसाल हैं। बच्चन के लोकगीतों में सीधी सरल भाषा, स्वाभाविक चित्रण लय और गति का अद्वितीय समिश्रण है सुन्दर उपमायें अत्यन्त सटीक कहावतों का प्रयोग कुछ गीतों की मधुर अभिव्यक्ति में चार चांद लगा देते हैं।

बच्चन स्वयं ऐसे वातावरण व परिवेश में बड़े हुए जहां लोकधुनों व लोक गीतों से उनका सम्पर्क था वह उन गीतों को उन्होंने अपने मन में अनुभव किया था। उसकी स्निग्धता, व सरलता से प्रभावित थे यही कारण है कि अपने काव्य में वे लोकगीतों को स्थान देते हैं वे इस पर आत्मकथा में लिखते हैं कि – **'संभवतः मुझे अनुभूति हो गई है कि लोकगीतों को अपनाने से कवि लोकधुनों के लोक यानि ग्रामीण वातावरण में बरबस खिंच जाता है। गीतों का भाव क्षेत्र वैसे भी सीमित है। सामान्य कविता के लिये लोकधुनें शायद ही सहायक सिद्ध हो सकें। ये धुनें ऐसे समय की देन हैं जो शांत, स्निग्ध, सरल था। शोरगुल संघर्ष तनाव के युग की दूसरी धुनें होगी शायद कोई भविष्य का कवि उनकी खोज करे।'**

बच्चन ने अपने साहित्य में अपनी भावनाओं को हर वर्ग के सम्बन्ध में व्यक्त किया हैं जहां उन्होंने बुद्धिजीवी समुदाय के लिये बौद्धिक, चिन्तन मनन सम्बन्धी रचनायें

की कल्पना एवं बुद्धि की उच्च कोटि की रचनायें की वहीं वे काव्य में समाज के मध्यम निम्न वर्ग एवं ग्रामवासियों के स्वर को अपनी लेखनी से खींच लायें हैं। भारत का एक बहुत बड़ा वर्ग ग्रामीण सभ्यता, संस्कारों एवं परम्पराओं का प्रतिनिधित्व करता है। ग्राम्य जीवन आदि से ही कवियो को आर्कषित करता रहा है। पन्त ने ग्रामबालाओं पर रचनायें की वहीं बच्चन लोकगीतों की रचना करके मल्लाह एवं मांझी के माध्यम से अपनी बात कहते हैं।

उत्तर प्रदेश की गंगायमुनी संस्कृति से ओतप्रोत लोकधुन पर आधारित उन्होंने लोकगीत लिखे हैं इन लोकगीतों की भाषा एवं तारतम्यता भी उतनी ही संगीतमय है जितना नदी का प्रवाह पूर्ण जल। इन लोकगीतों की भाषा प्रान्तीय है एवं इनकी रचना भी वहां के प्रान्तीय परिवेश के आधार पर की गई है किन्तु भाव कवि के हृदय के हैं। अभिव्यक्ति के लिये लोकगीतों का धरातल कवि ने चुना है और वे उसकी अभिव्यक्ति में सफल भी रहे हैं।

अपने कुछ काव्य संग्रहों में उन्होंने लोक गीतों को सम्मिलित किया है – त्रिभंगिमा में पगला मल्लाह शीर्षक का गीत मल्लाह के मन की उमंगों एवं तरंगों को व्यक्त करता है। मांझी के मन की पीड़ा में कवि स्वयं हृदय की पीड़ा व्यक्त करता है। सभी उसकी नौका पर नदी पार करते हैं कोई पनघट जाता है कोई मरघट लेकिन उसके मन की पीड़ा नहीं जानता है जलकी अथाह गहराइयों में उसकी जादुई तसवीर खो चुकी है – यथा –

इस तट, उस
पनघट, मरघट
बाना, अटपट,
हाय किसी ने कभी न जानी मांझी मन की पीर
डोंगा ढोले।

एक अन्य लोकगीत 'माटी की महक' में कवि निजदेश एवं जन्मभूमि से प्रेम का संदेश देता है। जन्म स्थान एवं अपने देश की सोंघी मिट्टी की महक हर व्यक्ति को प्रिय होती है। लेकिन यदि कोई ऐसा स्वार्थी इंसान है जिसे अपनी मिट्टी की महक नहीं अच्छी लगती उसको जीने का हक नहीं ' जिस मिट्टीमें हम बड़े हुए लोटपोट कर खड़े हुए हैं वही मिट्टी यदि हम आधुनिकता एवं पश्चिमी चमकाचौंध में भूल जाते हैं ऐसा जीवन व्यर्थ है। यही धूल आकाश में छायी है जो सबकी सांसों में गतिमान है। जिसे बरखा की फुहार में भीगना नहीं आता वह जीवन व्यर्थ है। जिसके हृदय में कसक नहीं है वह जीवन व्यर्थ

है। अर्थात् इस गीत के माध्यम से कवि यह कहना चाहता है कि यदि हम भौतिक जीवन व्यतीत करते–करते कोमल भावनाओं को अनुभव नहीं करते तो वह जीवन पाषाण तुल्य है। हंसी, रूदन, घुटन इन सभी को जो बराबर अनुभव करता है उसके साथ भावनायें निहित है जो सुन्दर कल्पनाओं एवं मानसिक संवेगों के साथ जीता वही मानव है।

बच्चन के लोकगीतों में अधिक स्वाभावितकाता एवं वैचित्र्य देखने को मिलता है। इन गीतों में सहज स्वर संगीत प्रवाहित होता है। जिससे उनकी नमनीयता सिद्ध होती हैं 'हरियाने की लली' छिट बन की औट 'आगाही, जामून चूती है, आदि लोकगीत सहज रस पूर्ण तथा वातावरण के रंग में भीगकर अत्यन्त सजीव बन पड़े हैं।

लोकगीतों में बच्चन ने छायावाद के अतीन्द्रिय भावबोध से हटकर जीवन में व्याप्त रागात्मक तत्वों को गीतों की मधुरिमा से अखाद्य बनाया है। लोकगीतों के सम्बन्ध में बच्चन 'क्या भूलँ क्या याद करूँ' में लिखते हैं –

लोकगीतों में शब्दों से जितना कहा जाता है, लय, ध्वनियों में उससे कहीं अधिक व्यंजनार्थ भीउसमें कितने गहरे और मार्मिक होते हैं'।

बच्चन के लोकगीतों में ध्वनात्यमकता एवं भाव प्रखरता है लोक गीतों द्वारा बच्चन ने साहित्य में नया ही वातावरण प्रस्तुत किया है आधुनिक समाज नगर ग्राम की दुलर्भ दूरी को गीतों के झंकृत पुल से बांध दिया है। नगरों के शुष्क मरूस्थली आंगन में हिन्दी लोकगीतों द्वारा सहज विश्वास का रस प्लावित बिरवा रोपने का प्रयत्न किया है। लोकगीतों में भावो की अभिव्यक्ति से हिन्दी को समस्त जनपद के द्वार तक पहुंचा दिया है। बच्चन के गीतों में एक जादू भरी संवेदना की आत्माभिव्यक्ति है। गावों की सहज आस्थाओं, परम्पराओं से प्रतिध्वनित पृष्ठभूमि परं सुख–दुख के रहस्यवादी दर्शन की धारा प्रवाहित की है। जो अत्यन्त मर्मस्पर्शी व स्वाभाविक हैं। डोगा डोले नित गंग–जमुन के तीर' में जैसे अनंतकाल की लहरों की थपकियों में मानवमन की मांझी की करूणा का डोंगा डालता रहता है। उनमें प्रमुख गीत 'पागल मल्लाह' 'सौन मछरी', 'धीमट की धरनी', 'आंगन का बिरवा', 'नील परी', 'खोजे गुजरिया' प्रमुख हैं।

इन गीतों में उनकी स्वस्थ रूचि का परिचय मिलता है। जिसे वे लोकधुन में गुनगुनाते हैं एवं मांझी, मछरी , गुजरिया के माध्यम से अपनी आत्माभिव्यक्ति करते हैं।

आत्माभिव्यक्ति प्रतीकात्मक रूप में -

काव्य में बच्चन अपनी आत्माभिव्यक्ति प्रतीकों का प्रयोग करके भी करते हैं उनकी बहुत सी कवितायें इस प्रकार हैं जिनमें उन्होंनें किसी प्रतीक को रखकर अपनी बात कही है क्योंकि उनका मानना है कि प्रतीकों का प्रयोग कवि तभी करता है जब किसी सूक्ष्म भाव विचारको स्थूलता प्रदान करनी हो साहित्य में प्रतीक द्वारा वह अपने विचारों को अत्यन्त सहज रूप से प्रस्तुत कर सकता है। जो साधारण जन मानस को भी ग्राह्य हो। पौराणिक प्रतीकों को लेकर अनेक साहित्यकारों ने साहित्य रचना की उन भाव विचारों के आधार पर प्रतीकों में परिवर्तन भी किया क्योंकि सर्जक को यह अधिकार है।

'दो चट्टाने' कविता में बच्चन हनुमान जी का प्रतीक सिसिफस बरक्स को मानते है जो यूनानी दंतकथाओं में विदित है जो मानस के मन का प्रतीक है।

अपनी आत्मा का संघर्ष व सृजन दोनों का समन्वय कर आत्माभिव्यक्ति की संजीवनी प्राप्त होती है शांति ओर संजीवनी जिसके लिये मनुष्य आकुल रहता है जो आवश्यक है वह हनुमान के पास है उसी हनुमान को प्रतीक मानकर बच्चन निखते हैं –

एक हाथ में वज्र गदाधर
मृत्युदायनी
मूल-सजीवन धारी द्रोणाचल
घर अपने एक हाथ पर
सिसिफस के हाथों पर तो चट्टान मात्र थी
वज्र देह मूधराकार संतुलित बनाकर
लांगूल रख बात- अनाहत-दीप-शिखा सम
समाधिस्य, योगस्थ खड़े हैं।

बच्चन इन प्रतीकों के साथ जीकर सीमित अर्थो में अभिव्यक्ति 'दो चट्टाने' में की है और अपनी अनुभूतियां जो उनकी निजी पूंजी है वे किसी रूप में भी है को प्रक्षिप्त करने का प्रयास किया है। बच्चन जो अनुभव करते हैं जिन पलों को वे व्यतीत करते है उस पल

की सम्पूर्ण भावनायें वे अपनी कविता में डाल देते हैं उसे तर्क व बौद्धिकता के आधार पर भी व्यक्त करते हैं व भावनात्मक कल्पना के आधार पर भी व्यक्त करते हैं। सृजन करते समय उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व क्रियाशील हो जाता है उसी व्यक्तित्व की क्रियाशीलता की सम्पूर्ण आहूति अपनी कविता में डाल कर अपने अस्तित्व को उसी में आत्मसात कर लेते हैं। फिर नयी क्रियाशीलता जन्म लेती है। नई रचना एवं सृजन करने के लिये यह आत्माभिव्यक्ति का क्रम उनकी हर रचना के साथ चलता है। उनकी कुछ कृतियों की सफलता जो पाठकों ने पहचानी वह यही है। वे पाठकों से पुकार–पुकार कर कहते हैं कि –

जो है सामने है
सुनो, जो कुछ कह रहा हूं
सुनो, समझो
औ, मुझे संवेदना दो।

....

शब्द मेरे
क्या तुम्हारी शोध चिंता ही
नहीं अभिव्यक्त करते ?
आज मानव मनस
इतना खिन्न, खंडित, विश्रंखल है।

कवि शब्दों द्वारा प्रतीकों में अपने भावों को व्यक्त करता हैं उन अर्थो को व्यापकता प्रदान करता है। पाठक रचना पढ़कर उसी में लीन होकर उन्हीं प्रतीको में अपना रूप ढूढने लगे। यही किसी साहित्याकर की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है। 'सोऽहं हंसः' संकलन में बच्चन हंस को प्रतीक मानकर सृजन करते हैं। हंस के माध्यम से जीवन के प्रति आत्म विश्वास व संघर्ष करके जीने की प्रबल इच्छा का उदघाटन बच्चन करते हैं–

पंख टूटा है, मगर यह खैरियत है
पांव जो टूटा नहीं है
जल तरंगों से चपल संबध मेरा
जो अभी छूटा नहीं है
रक्त बहता जाये, कहता जाये जीवन
की पिपासा की कहानी,

जान लो यह, मुक्ति अपनी मांगने
आया नहीं हूं मैं मरण में।

ईश्वर प्रदत्त जीवन की जीवनेच्छा की यह प्रबल आत्माभिव्यक्ति और क्या होगी कि रक्त रंजित हंस जो घायल है लेकिन पांव संघर्ष व पीड़ा होने पर भी वह मरण की कामना नहीं करता मरण होते हुए भी मुक्ति की कामना नहीं करता क्योंकि बच्चन यह मानते हैं कि मरण के उपरान्त फिर जीवन ही उनकी आत्मेच्छा है। मुक्ति तो पलायन है और वे इस संसार के दुख व संघर्षों में पलायन नहीं करना चाहते बार–बार जन्म लेकर उनका सामना करना चाहते हैं। बच्चन का कथन है कि **मैं जीवन की समस्त अनुभूतियों को कविता का विषय मानता हूं लेकिन मेरी अनुभूति में कल्पना और जीवन में मरण सम्मिलित है।**

'दो चट्टाने' कविता संग्रह मे बच्चन माली की सांझ शीर्षक में माली की क्रियाकलापों को प्रतीक मानकर अपनी भावना प्रगट करते हैं – वे अपनी तुलना उस माली से करते हैं जो निष्प्रभ भाव से दूसरे के ही जमीन पर पौधा लगाता है सींचता है स्वेद व श्रम खर्च करता है लेकिन प्रतिदान में कुछ भी नहीं मांगता। वे ऐसे व्यक्तियों का सम्मान करते हैं जो अपने अनुदान से विरत रहते है अहं से परे रहते हैं जिसप्रकार माली अपने लगाये वृक्षों के प्रभाव से तटस्थ रहता है ताड़ बट, कदम्ब, अंब महुए सभी जग को जीवन प्रदान करते हैं लेकिन उसे इसका गर्व नहीं है कि वह इनका संरक्षक है उनका पालन हार है। जीवन भर वह इसी वृक्षों के लिये अपने श्रम खर्च करता है तब उसका तन जरूर श्रोत हो थका है लेकिन मन शांत है कि उसने दिन भर बहुत कुछ कर लिया। माली के माध्यम् से कवि की जीवन के यह उक्ति –

मुझे जो जमीन मिली
पसंद कर किसने ली?
उसे मैंने गोड़ा
खाद डाली, बीज डाले, सींचा
भविष्य के सपनों का
नक्शा खींचा,
....
न कुछ अर्जित हुआ

न कुछ अर्पित हुआ

न दुआ सुनो, न शुक्रिया

न गर्व ने छेड़ा

न संतोष ने छुआ

और अब आई खड़ी जीवन की सांझ है।

बच्चन के मधुकाव्य के प्रतीकों को कुछ आलोचकों ने इस बात की उपेक्षा करते हुए कि प्रतीकों के माध्यम से क्या कहना चाह रहे हैं प्रतीकों पर ही आक्रमण किया। 'मधु कलश' की कविताओं द्वारा बच्चन ने इसका प्रत्युत्तर भी दिया है।

गुलाब जीवन सुन्दरता का द्योतक है लेकिन एक दिन वह भी जरावस्था को प्राप्त होता है बच्चन गुलाब के प्रीतक से जीवन को जोड़ते है बाल्यावस्था व युवावस्था का जीवन एक ताता गुलाब का फूल है वही जीवन जरावस्था आते ही पंखुड़ी–पंखुड़ी बिखरता जाता है और एक दिन समाप्त प्राय हो जाता है वह बदरंग हो जाता है, झुक जाता है सिकुड़ जाता है बच्चन गुलाब के फूल को देखकर जीवन की तुलना करते हैं कि वह अन्त में कितना डरावना हो जाता है मनुष्य भी गुलाब की ही तरह घर रूपी गुलदस्तें में सजता है अपनी सुवासित गंध यश सम्मान आदर संसार में बिखेरता है और गुलाब पंखुड़ी की परतों में अमरत्व समेटे सर्वस्व सुवासित करता है लेकिन प्रकृति मे हवा के झोंके के साथ झरकर बिखर जाता है इस प्रकार प्रकृति में मृत्यु भी है और सुन्दरता भी। 'ड्राइंगरूप में मरता हुआ गुलाब' शीर्षक की कविता में यही विचार है –

गुलाब

तू बदरंग हो गया है

बदरूप हो गया है

झुक गया है

....

हवा के झोंके से झरता

पंखुड़ी-पंखुड़ी बिखरता

धरती पर संवरता

प्रकृति में मृत्यु भी है सुंदरता।

जीवन एक परीक्षा है विद्यार्थी जीवन परीक्षा कवि को मौत की माता प्रतीत हुई व परीक्षक काल सा प्रतीत हुआ था। वही जीवन व्यतीत करते हुए कवि को यह अनुभव हुआ कि सम्पूर्ण जीवन व्यक्ति का एक परीक्षा भवन है जहां परीक्षक भी है, जहां परीक्षा भवन है वहां परीक्षक भी है, जहां परीक्षा देते – देते उमर कट जाती है जीवन पर्यन्त तमाम उतार चढ़ावों से गुजरते हुए व्यक्ति हर समय एक परीक्षा देता रहता है। सफलता विफलता पल–पल साथ रहती है। यह क्रम अनवरत् चलता रहता है लेकिन अंतिम परीक्षा कौन सी है जिसको देने में यह शरीर ही मिट जायेगा और परिणाम फिर भी अनभिज्ञ रहेगा। भविष्य की पीढ़ियां भी क्या इस परीक्षा के परिणाम जान पायेगी। या हमसे पहले जो परीक्षा देगये उनमें परिणामों का रहस्य हमने कभी जान पाया है।

परीक्षा और परीक्षक सब जहां है
जिन्दगी तो इम्तहां - दर इम्तहां है

....

वह परीक्षा कौन जिसकी
सब परीक्षायें तैयारी
और देने में जिसे मिट
जायेगी काया विचारी?
जिन्दगी तो इम्तहां-दर इम्तहां है।

काव्य में प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के सम्बन्ध में बच्चन स्वयं मानते हैं कि उन्होंने अपनी कविता में प्रतीकों का उपयोग करने में एक लक्षक का भी ध्यान रखा है। जिसे अजहत्स्वार्था कहते हैं। इसमें लक्षक शब्द अपने वाच्यार्थ को व छोड़ कर कुछ भिन्न तथा अतिरिक्त अर्थ प्रगट करता है। यही उनके काव्य का एवं प्रतीकों के प्रयोग का मुख्य मंत्र है। सतरंगनी में मयूरी का प्रतीक वर्णन किया है। उनके द्वारा काव्य में उपयोग किये गये प्रतीकों का विवादित व गलत अर्थ भी लिया गया इस सम्बन्ध में स्वयं कहते हैं –

मधुशाला समझ कर कुछ लोग मुझे पियक्कड़ समझते रहे, और मयूरी पढ़कर कुछ वैसे ही लोग मुझे प्रकृति का कवि समझते हैं। 'अजहत्स्वार्था' लक्षण के प्रयोग का एक बड़ा खतरा भी है। इसमें प्राय: ऐसा होता है कि या तो वाच्यार्थ अधिक हो जाता है या संकेतार्थ - दोनों के बीच संतुलित स्थिति में कविता अपनी पूर्णता प्राप्त करती है। यह भावक अथवा रसिक की दोनों प्रकृतियों को एक साथ प्रभावित करने की कला है,

मस्तिष्क संबधी और ह्रदय संबधी बुद्धि को भी, भावना को भी एक को प्रतीक के वाच्यार्थ से दूसरे को प्रतीक के संकेतार्थ से। परिपूर्ण कवितायें बड़े कवि भी कितनी लिख पाते हैं। मेरी पुरानी कविताओं में 'प्याले क परिचय' संभवतः वह संतुलन सबसे अधिक आ सका है - एक स्थूल, धरातल पर, सूक्ष्म धरातल पर शायद 'प्रणय पत्रिका' की इस कविता में - 'कौन हंसनिया लुभाये है तुझे ऐसा कि तुझको मानसर भूला हुआ है' - प्याला, प्याले के अतिरिक्त भी कुछ है, हंस, हंस के अतिरिक्त भी कुछ है। मयूरी, मयूरी के अरिक्ति भी कुछ है - धरातल उसका भी कम सूक्ष्म नहीं। शायद मेरे कुछ संकेत इसे स्पष्ट कर सकें।'

इस तरह बच्चन के प्रतीकों को जब पाठकों ने उनकी रचनाओं में पढ़ा है तब उन्हें अलग–अलग प्रस्तुत अभिव्यक्तियों किसी विशेष परिवेश, वातावरण, काल एवं भावना, धारा से आबद्ध एवं सम्बद्ध प्रतीत हुई।

उन्होंने मानव ह्रदय का अवलोकन किया है उसे समझा है उनके काव्य का विषय मनुष्य के दुःख, पीड़ा, शोक विषाद, हर्ष, विमर्ष, संघर्ष एवं उसकी मनःस्थिति प्राणों का मंथन है प्रकृति का प्रतीक जहां उनके काव्य में आया है वहां रूपक बन कर आया है उपकरण के रूप में आयी है काव्य में साधन है साध्य नहीं,

प्रतीकों को अभिव्यक्ति के रंगमंच के रूप में इस्तेमाल किया है अभिनेता स्वयं मनुष्य है एवं उसकी नियति है अतः बच्चन के साहितय में उनके द्वारा इंगित किये गये प्रतीकों की भाषा व भाव स्वयं मानव की आत्मा के भाव हैं उनके अन्दर बैठे, मनुष्य के भाव हैं। जैसे 'सतरंगनी' में 'मयूरी' का प्रतीक सिर्फ मयूरी के नृत्य वर्णन का ही भाव नहीं है। उसका प्रेमी भी प्रतीक है एवं नाचना भी प्रतीक है।

बच्चन की कविता के प्रतीकों ने यर्थात् को बहुत संवारा है उनकी यह धारणा है कि किसी भी प्रतीक की अपनी कविता में कल्पना तभी सजीव व सबल होती है जब उसका आधार यर्थाथ हो, वह बाहरी मात्र नहीं बल्कि जो अनुभूति का अंग बनकर भीतरी बन गया हो उनके काव्य के तमाम प्रतीक उनकी अनुभूति का अंग हैं। अपनी आत्मकथा में उन्होंने उल्लेख किया है कि किस प्रकार वे डबलिन के हार्स–शो में घोड़ों से प्रभावित हुए व साहित्य में प्रतीक रूप में उन्हें प्रस्तुत किया है – इस संस्मरण में उन्होंने लिखा है –

अश्व प्रर्दशनी की छाप - मेरे दुख मंजे मन पर पड़ी, वह मेरे अगले तीन जन्मों

तक भी मिटाई न जा सकेगी। 'अमृतोभ्व उच्चैःश्रवा' के वंशजों का ऐसा चुस्त, दुरुस्त, स्वस्थ, सुन्दर जीवंत रूप न मैंने पहले कभी देखा या न बाद को ही देखा। कोलीनों के सम्मोहन में तो मैं न पड़ा, पर घोड़ों के सम्मोहन से मैं अपनी रक्षा न कर सका। वे मुझे पीठ पर चढ़ा साहित्य क्षेत्र के न जाने कितने घोड़ों से मेरा परिचय करा लाये। ईट्स ने तो एक बादल से दूसरे बादल पर छलांग मारने वाले घोड़ों से लेकर उबड़-खाबड़ सड़कों पर गाड़ी खींचने वाले, घोड़ों तक का जिक्र किया है। ऐपीटॉफ में जिस 'हार्स मैन' को उन्होंने संबोधित किया है उसका घोड़ा कितना थका है। 'न' होते घोड़े पर हार्समैन का दीर्घस्वर भार वह तो बीतती उम्र का प्रतीक है - घुड़सवार जीवात्मा याद आया गालिब ने भी घोड़े को उम्र का प्रतीक माना है, पर वह किस तेजी से उम्र को काट रहा है, और घुड़सवार का कोई बस उस पर नहीं चलता ,

सैं में है उम्रे हस्य कहां देखिये थमे
नै बाग हाथ में है न पर है रकाब पर।

शैक्सपियर के घोड़ो पर तो प्रस्तुति लिखी जा सकती है एन्टनी के प्रेम में पड़ी क्लियौपैट्रा उस घोड़े से ईर्ष्या करती है जिसे अपनी पुथुल जाघों से दबाकर एन्टनी दौड़ता है ....

अश्व पदर्शनी से अश्व काव्य प्रतीकरूप में शायद मेरे दिमाग में भी पैठा। इससे पहले घोड़े को प्रतीक रूप में अपनी कविता में संभवतः मैं कभी नहीं लाया था। इसके बाद तो कई बार लाया हूं। 'आरती और अंगार' 'जाल समेटा' तक अगर मेरे घोड़ों में कोई दम-खम, कोई सजीवता हो तो मैं चाहूंगा उसका श्रेय आप डबलिन के हार्स-शो को दें।

पुष्प दिन में खिलकर अपनी प्रसन्नता, प्रफुल्लता प्रगट कर देते हैं हर कोई उससे आनन्द उठाता है रश्मिया उसकी गोद में नृत्य करती है पवन उनको झुलाता है अर्थात् पुष्प को तो सभी का प्रेम, स्नेह दुलार प्राप्त हो हाता है क्योंकि वह दिवस में खिलता है किन्तु कैक्टस क्यों सबकी वक्र दृष्टि का ही भागी होता है। क्योंकि वह रात्रि मे खिलता है। वह अपना आनन्द प्रगट नहीं करता कोई उसका सुयशगान नहीं करता क्योंकि वह इसका इच्छित नहीं है उसका दुख व सुख सिर्फ उसका अपना है। 'कैक्टस' के माध्यम से बच्चन ने व्यक्त किया है कि संसार में अनजाना रह जाना कोई अपराध नहीं है कैक्टस का खिलना

उसकी विवशता है वह अपने गान सुनने का आकांक्षी जरा भी नहीं है। कैक्टस को प्रीतक रूप मानकर बच्चन अपनी अभिव्यक्ति इस प्रकार व्यक्त करते हैं –

रात
एकाएक टूटी नीद
तो क्या देखता हूं
गगन से जैसे उतर कर
एक तारा
कैक्टस की झाड़ियों में आ गिरा है
निकट जाकर देखता हूं
एक अद्‌भूत फूल कांटों में खिला है

....

धैर्य से सुन बात मेरी
कैक्टस ने कहा धीमे से
किसी विवशता से खिलता हूं
खुलने की साध तो नहीं है
जग में अनजाना रह जाना
कोई अपराध तो नहीं है।

आत्मकथा में बच्चन ने इस कविता के सम्बन्ध में प्रतीकों से प्रेरणा की बात कही है। वे लिखते हैं – **'कैक्टस बढ़े तो जाड़े की रातों में फूलते। कैक्टस का फूल मेरी एक बढ़िया कविता के लिए प्रेरणा बना था'।**

आत्माभिव्यक्ति अनुदित काव्य में -

किसी कृति को अपने भाव एवं भाषा प्रदान करना भी एक सृजनात्मक कार्य है। साहित्य सृजन के अर्न्तगत अनुवाद भी एक अंग है। भाषा को उसके दूसरे रूप में प्रस्तुत कर भावों के माध्यक से पाठको के समक्ष लाना अनुवाद है। बच्चन ने महान् कवियों की कृतियों का अनुवाद कवि करके हिन्दी साहित्य को पाठकों के समक्ष पठनीय बनाया।

बच्चन अनुवाद को भी बौद्धिक चिन्तन कल्पना शक्ति एवं शब्द सार्मथ्य से पूर्ण कार्य मानते हैं। एक किसी बड़ी रचना का उच्चकोटि अनुवाद करना मौलिक सृजन से कम नहीं है क्योंकि पाठक मूलकृति से काफी परिचित रहत है ऐसे में अनुवादक की स्थिति संवेदनशील हो जाती है छोटी–से छोटी त्रुटि भी पाठक के समक्ष मे आती है।

अनुवादक के लिये यह आवश्यक है कि वह अनुदित रचना को भी उसी प्रकारसृजन करे जिससे मूल रचना का भाव भी न खोने पाये एवं पात्रों, कथानक, चरित्रों की मौलिकता भी बनी रहे।

बच्चन ने कई कृतियों पर अनुवाद कार्य किया है जिनमें उनकी भाषा पर पकड़ एवं बौद्धिक कुशलता व्यक्त होती है। जैसे शैक्सपियर के नाटकों को पद्य में रूपान्तरित कर इस प्रकार अनुवाद किया जिससे वह मंचन एवं कथोपकथन के अनुरूप हो अनुवादकार्य को बच्चन ने एक साहित्य साधना के रूप में ही लिया है। अनुवाद करते समय उन्होंने उस कृति को मानसिक रूप में अपने हृदय में स्थापित कर उसको अविकल हिन्दी का रूप प्रदान किया है तथा मूलकृति को हिन्दी भाषी पाठकों के समक्ष भावजगत का साम्य रखते हुऐ प्रस्तुत किया है।

अनुवाद कार्य में भी उन्होंने अपने कवित्व की रक्षा की है एवं काव्यमयी वाणी में मैकवैथ, ओथोलो, जनगीतों, उमर खैयाम की रूबाइयां व चौसठ रूसी कवितायें आदि महान्कृतियों का अनुवाद किया है।

नाटकों के अनुवाद में उन्होंने भाषा एवं छंदो, को इस प्रकार से बांधा है कि वह अपने लचीलेपन से जीवन के प्रत्येक भावों, विचारों एवं अनुभूतियों को साधारण बोलचाल के लहजे में उन्मुक्तता के साथ अभिव्यक्त किया जा सके जिसमें उनके पद्य में संयम शक्ति

इस प्रकार है जिससे गद्य की स्वच्छंदता भी सामना नहीं कर सकती।

हिन्दी में पद्य नाटकों के प्रयोग की परम्परा की शुरूआत भी बच्चन ने अनुवाद कार्य से की। बच्चन ने आत्मकथा में अपने अनुवाद के सम्बन्ध में व्यक्त किया है कि अनुवाद कार्य उनके लिये सृजन ही था जिसमें उन्होंने सृजन का सुख, सृजन का संतोष एवं सृजन की शांति अनुभव की। अनुवाद में नाटकों के पात्रों की त्रासदी हृदय से अनुभव किया एवं उनका शुद्ध, सरस व कवित्वपूर्ण, अभिनेय अनुवाद कियां अनुवाद के काव्यात्मक रूप के विषय में बच्चन कहते हैं – कविता में अर्थ और शब्द इतने सम्प्रक्त होते हैं – 'गिरा अर्थ जल वीचि सम' कि उसके अर्थ को अलग कर, उसे दूसरे शब्दों दूसरी भाषा के शब्दों, का बाना पहनाना बहुत कठिन है। कुछ लोग तो यहां तक कहते हैं कि कविता का अनुवाद हो ही नहीं सकता। पर असंभव मनुष्य के लिये बहुत बड़ी चुनौती और बहुत बड़ा आकर्षण है –

जो असंभव है उसी पर आंख मेरी
चाहती होना अमरमृत राख मेरी

हिन्दी साहित्य में बहुत सी कविताओं, पद्य, गद्य आदि विधाओं का अनुवाद होता रहा है जिसमें अनुवादक की श्रम शक्ति, मनः शक्ति काव्य शक्ति दृष्टिगत हुई। बच्चन के भी अनुवादों में इसी तरह की तन्मयता मिलती है जहां उनकी अनुवादक योग्यता, सृजनशीलता व क्षमता, समझदारी के लक्षण मिलते हैं।

जहां कभी–कभी अनुवाद करने पर मूलकृति के भाव निष्फल एवं शिथिल होने लगते हैं वहीं बच्चन की अनुदित रचनाओं में यह स्थिति नहीं आयी है उन्होंने मूल कृति के भावों को व विचारों को वांछित लयों के आधार पर अधिक सजीव बनाया है। उनकी दृष्टि सदैव रचना के भावों पर रही है मूलकृति की अभिव्यक्ति पर रही है तथा अनुवाद की मौलिकता भी बनी रही। अनुवाद के लिये यह आवश्यक है कि वह स्वयं मौलिक सर्जक हो तभी वह अनुवाद में भी मौलिकता ला सकेगा। बच्चन ने अनुवाद के सम्बन्ध में अपनी अभिव्यक्ति रचनाओं की भूमिका भी भली–भांति की है। वे अनुवाद को भी एक सृजनात्मक लेखन मानते हैं यही कारण है कि संसार के बड़े–बड़े सर्जक, साहित्यकार अनुवाद की ओर झुके हैं एवं सफल अनुवाद करके एक भाषा का दूसरी भाषा एवं संस्कृति के साथ विचारों का आदान प्रदान किया है।

मैकवैथ में डंकन की हत्या की भीषण रात्रि में घोड़े एक दूसरे को खाने को उद्यत हो जाते हैं उस हिसां के वर्णन का अनुवाद बच्चन अपने शब्दों में यूं करते हैं –

औ यह जितना अद्‌भुत है, उतना ही सच है,
डंकन के घोड़े मस्ताने, तेज तुखारी
ताजी तड़पे, तोड़ अस्तबल बाहर झपटे
बंधे न बांधे, जैसे वे विरूद्ध मानव के
युद्ध छेड़ने को उद्यत हों
और यह सुना
गया, उन्होंने एक दूसरे को खा डाला।

इसी प्रकार ईट्स की एक कविता को उन्होंने यो व्यक्त किया है –

कवि का पथ अनंत सर्प सा
जो है मुख में पूंछ दबाये
अैर मनीषी तीर सरीखी
सीधी अपनी लीक बनाये।

काव्य के दर्शन के प्रतीक सर्प और तीर भी कब्बाला के प्रतीक हैं। विलियम ईट्स पर एक आंग्ल कवियत्री की कविता का अनुवाद करके ईट्स के जीवन चरित्र पर प्रकाश डालते हुए बच्चन लिखते हैं उन कवियत्री के ईट्स के जीवन के समीप होने के विषय पर अपने भाव उनकी ही कविता के शब्दों से लेकर व्यक्त करते हैं उनकी कविता की अनुवाद वे इस प्रकार करते हैं – जो ईट्स के चारित्रक व जीवनी पर आधारित है –

शिक्षा उसने ली चित्रकारी की
लिखता रहा वह कविता
पैदा हुआ प्रोटेस्टेंटों के घर
पूजता रहा कैथोलिक सन्तों को
प्रेम करता रहा मांड गान से
पतित्व निभाता रहा जार्ज से
(जार्ज ईट्स की पत्नी का नाम था)
जवानी में बूढे होने की कल्पना करता था,

बुढ़ापे में जवान होने की।

बच्चन के काव्य पर ईट्स का काफी प्रभाव रहा है उन्होंने उनके विचारों को आत्मसात् किया तदुपरान्त व्यक्त किया ईट्स के विचारों के सन्तुलन की अनुभूति बच्चन उनके साहित्य को पढ़कर अनुवाद में कर लेते हैं तभी तो वह ईट्स की इन पंक्तियों का अनुवाद कितने सशक्त हिन्दी शब्दों में करते हैं –

एक दृष्टि निरपेक्ष
डालता हूं जीवन पर और मरण पर
औ घोड़े को ऐड़ लगता
विदा विधाता

इसी तरह कवि सात्र के नोबेल पुरस्कार ठुकराने पर ब्लनेड सालकेल्ड की कविता को अनुदित कर वे इस प्रकार सात्र के पुरस्कार ठुकराने पर व्यक्त करते हैं –

आइरिश कवि की लिखी
यह पंक्ति
स्मृति में कौंध जाती
The King are never more royal
then when abdicating.
राजसी लगता अधिकतम
जबकि राजा
राज सिंहसन स्वयं ही त्याग देता।

जनगीता -

गीता का अनुवाद जनगीता में किया। जनगीता लिखने की प्रेरणा को बच्चन एक दिव्य अनुभूति मानते हैं इन अनुभूतियों का वर्णन उन्होंने जनगीतों की भूमिका में किया है। जन गीता लिखते समय उन्होंने गीता, बाल्मीकि रामायण, श्रीमद्भागवद् एवं प्रमुख उपनिषदों का गहनता से स्वाध्याय किया उसी ज्ञान की प्रेरणा से जनगीता लिखने में वे सफल हुए।

जनगीता कीएक यह विशेषता है कि इसका अनुवाद बच्चन ने मानस की अवधी भाषा एवं दोहा चौपाई में किया है। गीता को ऐसी भाषा में प्रस्तुत किया, जिससे उसका

'गीता' नाम सार्थक हो अर्थात् 'गीता' के श्लोकें को हिन्दी अवधी के पद्य छन्दों चौपाई में बांधकर उसमें गीतात्मकता प्रदान की। 'जनगीता' का परिचय हिन्दी गीत काव्य परम्परा में ही मिलता है। गीता के सूक्ष्म दर्शन एवं सिद्धान्त को रसमय रागात्3मकता में सिंचित किया। उदाहरणार्थ –

गीता का मूल पाठ -

धर्म क्षेत्रे करूक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः
भामका पाण्डवश्चैव किम कुर्वत संजय।

जनगीता की चौपाई -

धर्मखेत कुरूखेत कहावा, जहं कौरव पांडव दल आवा
काह करेन्हि तहं दोऊ समुदाई। संजय मौहि कहहुं समुझाई।

तथा अन्यत्र

गीता का मूल पाठ -

यत्र योगेश्वरः कृष्णों यत्र पार्थी धनुर्धरः
तत्र श्री विजयों मूर्ति ध्रुवी नीतिर्मतिमर्म।

जनगीता की चौपाई -

जहां कृष्ण्न जोगेस्वर, जहों धुनसजि, अरजुन राजहिं
तहं रहई श्री, वैभव, विजय, ध्रुवनीति मम संगीत सही।

जनगीता के अनुवाद कार्य के मध्य बच्चन को कई चमत्कारी एवं दिव्य अनुभव भी हुए जिन्हें उन्होंने स्वयं तक सीमित रखा है। गीता को 'मानस' की बोली में 'जनगीता' रचकर बच्चन ने गीता के उपदेशों एवं भागवद् की कथाओं को हिन्दी साहित्य की रसानुभूति प्रदान की हैं। बच्चन की 'जनगीता' के सम्बन्ध में प्रयाग सम्मेलन पत्रिका ने भी लिखा था कि –

गीता और रामायण भारतीय जन जीवन के ऐसे प्राणदायी स्रोत हैं , जिनसे हमारा राष्ट्र और समाज ही नहीं बल्कि विश्व साहित्य भी प्राणवान बन गया है। गीता के अनेक भाष्य और टीका ग्रन्थ मिलते हैं, किन्तु डा. बच्चन के 'जनगीता' ने पूरक स्थान प्राप्त किया है। अवधी भाषा में रामचरित्र मानस के ढंग पर गीता का सही अर्थो में

रूपान्तरण किया गया है। मूल से अनुवाद भी पूर्ण संगति है। कविता में वहीं सौष्ठव है जो मानस में मिलता है। गीता जैसे आध्यात्मिक ग्रन्थ को दौहों, चौपाइयों और छन्दों में रूपान्तरित करने के लिये केवल कवि सामर्थ्य ही नहीं दैवशक्ति भी अपेक्षित है - जो डा० बच्चन जैसे सौभाग्यशाली जनकवि को सहज उपलब्ध हुई है। जनगीता पढ़ते समय गीता और रामचरित्र मानस दोनों ग्रन्थों का आनन्द एक साथ मिलता है।

जनगीता का अनुवाद भी किसी अज्ञात अगोचर प्रेरणा का संकेत हैं जनगीता के अनुवाद के सम्बन्ध में सुमित्रानन्दन पन्त ने बच्चन का व्यक्तित्व तथा काव्य में लिखा है –

एक ओर गीता का अनुवाद अवधी में जनगीता के रूप में किसी अज्ञात अगोचर की प्रेरणा के संकेत से प्रस्तुत किया है, तो दूसरी ओर शैक्सपीयर की चमत्कार पूर्ण महती प्रतिभा को उपयुक्त कवित्व कला, छंद भाषा शिल्प तथा नाटकीय रंग कौशल के साथ हिन्दी में उतार कर वह जैसे अपनी सृजन शक्ति की भुजाओं पर संजीवनी पर्वत को ही उठाकर ले आया है।

इस प्रकार गीता की प्रेरणा से 'जनगीता' में गीता की आध्यात्मिकता, गीता का दर्शन एवं उसकी गरिमा अक्षुण्ण बनी रही है।

उमर ख्य्याम की मधुशाला -

बच्चन के अनुवादों में 'उमर खय्याम की मधुशाला' एक विशेष स्थान रखती हे। उमर खय्याम की रूप रंग, रस की नई दुनिया ने बच्चन के मन में भावना कल्पना के नये आयाम खोल दिये जिनसे प्रेरित हो उन्होंने उसका अनुवाद किया। जगत और नियति व प्रकृति से साक्षात्कार बच्चन ने इसी अनुवाद में किया। खय्याम के प्रतीकों ने बच्चन के काव्य को व्यक्त करने को एक वाणी दी, जिससे प्रेरित हो उन्होंने 'मधु काव्य' लिखे। जिस उन्मुक्तता से खय्याम की मधुशाला का अनुवाद बच्चन ने किया है वह अद्वितीय है। उमर की मदिरा व बच्चन की मदिरा दोनों ही मदिरा की चैतन्य ज्वाला है। उमर की मदिरा की जीवन स्मृति को अनुवाद कर बच्चन ने मृत्यु के पार के तात्विक सत्य को प्रकाशित किया है। जैसा कि अभी खय्याम की मधुशाला की पंक्तियों से उद्धृत है –

नहीं है क्या तुमको मालुम
खड़ी जीवन तरणी क्षण चार

बहुत सम्भव है जो उस पार न फिर यह
आ पाये इस पार
जीर्ण जगती है एक सराये
....
होंठ से होंठ लगा यह बोल उठी
जब तक जीकर मधुपान
कौन आया फिर जग में लौट किया जिसने
जग से प्रस्थान।

(खय्याम की मधुशाला)

खय्याम की मधुशाला में जीवन की बाह्य क्षण भंगुरता व नैराश्य को बच्चन ने खड़ी बोली हिन्दी काव्य में अनुदित किया है। बच्चन के हाथों में खय्याम की मिट्टी का प्याला हाला, मधुबाला के रूपान्तरित हो नवीन आनन्द जीवन चेतना, नवयुग सौन्दर्यबोध के प्रतीकों के रूप में परिणित होता है। बच्चन ने खय्याम की मधुशाला को अपने शब्द इस प्रकार दिये कि वे पाठक उन्हें आनन्द विभोर होकर पढ़ता है उसे जीवन के रंग दिये, ध्वनि काव्य बनाया।

खय्याम की मधुशाला के अनुवाद के विषय में सुमित्रानन्दन पन्त लिखते हैं – **'बच्चन का प्रेरणास्रोत उमर खैयाम को पढ़ कर ही पहले पहल हुआ उनके मधुकाव्य को पढ़ते समय मुझे लगा कि खैयाम से बच्चन ने हाला, प्याला, और मधुबाला (साकी) के प्रतीक भले ही लिये हों पर भावना कल्पना और विचारों में उमर का प्रभाव अधिक दृष्टिगोचर नहीं हुआ।**

बच्चन इस अनुवाद में एक शब्द के स्थान पर दूसरा रखने के फेर में नहीं पड़े हैं उन्होंने उमर खय्याम के भावों को ही प्रधानता दी है।

बच्चन के अनुवाद के सम्बन्ध में जनवरी ३६ के 'हंस' में प्रेमचन्द जी ने लिखा था कि **'बच्चन ने उमर खैयाम की रूबाइयों का अनुवाद नहीं किया, उसी रंग में डूब गये हैं'।**

इलाहाबाद के एक पत्र 'लीडर' ने लिखा था –

Bachchan has a great advantage over many translators in that he himself feels, for a all we know, very much like th poet astronomer of Nishapur.

खय्याम की रूबाइयों का अनुवाद गुलाब के पौधों के माध्यम से प्रस्तुत भावना व्यक्त होती है –

वही होते अति लाल गुलाब
जड़े जिनकी कर जाती पान
गड़े अपनी पतियों का खून
देख यह आता मुझको ध्यान
हाथ बन की हर सुम्बुल बेलि
रही जो हिल-खिल आज समोद,
किसी सुमुखी की कुतंलराशि
पड़ी जो गिर उपवन की गोद।

बच्चन के साहित्य व जीवन में 'उमर खैयाम' की रूबाइयों और उसके अनुवाद का विशेष स्थान है उसका अनुवाद करना जैसे वे अपने जीवन की मांग मानते हैं। इस अनुवाद के विषय में स्वयं लिखते हैं –

मेरे जीवन और मेरे काव्य दोनों के विकास में रूबाइयात उमर खैयाम और उसके मेरे अनुवाद का विशेष स्थान है। जिन परिस्थितियों में 'रूबाइयात' मेरे प्राणों की पुकार बनी उसकी चर्चा मैं विस्तार से 'खैयाम की मधुबाला' की भूमिका में कर चुका हूं। यह अनुवाद मैंने १६३३ की गर्मियों में किया। जो बातें मैं पहले कह चुका हूं उनको दोहराना बेकार होगा। यहां सिर्फ इस पर जोर डालना चाहता हूं यह अनुवाद मैंने किसी साहित्यिक अभ्यास के रूप में नहीं किया था जैसे मैं जीवन की बहुत सी विवशताएं जी रहा था वैसे ही यह अनुवाद करना मेरी जीवन की एक मांग, मेरे जीवन की एक विवशता थी। इतना इस अनुवाद ने अवश्य किया कि जो कुछ अपना भोगा, सहा, जिया कई वर्षो से मेरे अन्दर घुमड़ रहा था, इसने इसे व्यक्त करने का एक प्रतीक एक मुहावरा दिय। उमर खैयाम के प्रति मैंने अपना ऋण एक कविता में स्वीकार किया है पर बिना अपनी पूंजी के 'मधुशाला का प्रासाद' नहीं खड़ा किया जा सकता था। अपने उपर्युक्त रूबक बन्दूक का प्रयोग करूं तो मुझे कहना होगा कि बन्दूक मेरी भरी थी, बड़ी ही जीवन्त

सशक्त और लक्ष्य भेदी गालियों से। उमर खैयाम से जो मैंने सीखा वह केवल घोड़ा दबाना था। घोड़े दबाने की कला कोई छोटी कला नहीं है। बहुत सी दुनिया की भरी बन्दूकें इसके अभाव में भरी की भरी ही पड़ी रह जाती है गोलियों जाम हो जाती है और आदमी भूल जाता है कि कभी उसके पास इतना मजबूत हथियार था। पर बिना भरी बन्दूक के सिर्फ घोड़ा दबाने वाले शायद अधिक उपहासास्पद हैं।

बच्चन की उपरोक्त टिप्पणी से यह प्रतीत होता है वे अनुवादों को सृजन व आत्मा की अभिव्यक्ति का ही रूप मानते हैं। खैयाम की रूबाइयात को 'भरी बंदूक' की संज्ञा देकर उन्होंने अनुवाद के विषय में अपनी अभिव्यक्ति को और अधिक स्पष्ट किया है। वे यह इंगित करना चाहते हैं कि उनके इस अनुवाद संग्रह को पाठक बच्चन के जीवन की अभिव्यक्ति के रूप स्वीकार करें।

चौंसठ रूसी कवितायें -

बच्चन की 'चौसठ रूसी कवितायें' पुस्तक रूस में महान् कवियो का हिन्दी पद्य में अनुवाद है। अनुवाद कार्य को शब्द साधना के लिये इसमें सुखद अभ्यास को बच्चन ने बहुत पहले ही अपना लिया था। रूसी कविताओं के अंग्रेजी रूपान्तर को पढ़कर बच्चन ने उसका हिन्दी अनुवाद किया है। यह कविताओं का संकलन बच्चन ने इसी वजह से अनुदित किया जिससे आम भारतीय व हिन्दी प्रेमी लोग इसको पढ़ कर रूसी काव्य के वैभव के प्रति अपने संवेदनात्मक व रागात्मक संबध बनायें।

रूसी एक शक्तिशाली भाषा है, उसकी कोई समता पश्चिमी भाषाओं से नहीं है सिर्फ यूनानी, संस्कृति भाषाओं से थोड़ा साम्य है ऐसा बच्चन का मानना है बच्चन की ये रूसी कवितायें इलाहाबाद, आकाशवाणी केन्द्र से भी प्रसारित की जाती थी साथ ही साथ कविताओं पर आवश्यकतानुसार टिप्पणी भी की गई थी। रूसी कवि पुश्किन की कविताओं का पाठ करके उसका अनुवाद बच्चन ने हिन्दी में किया था। डा. सुरेश सेन गुप्ता प्रोफेसर (इलाहाबाद विश्व विद्यालय) ने उनके इस अनुवाद को रूसी भूल के बहुत निकट बताया है।

विदेशी भाषा संस्कृति एवं काव्य के सम्बन्ध में बच्चन ने इंन कविताओं की भूमिकाओं में लिखा है कि यदि किसी जाति के जीवन अमृत का अंश पाना चाहते हो तो उसके कवियों के पास जाओ।

चौसठ 'रूसी कवितायें' में चौबीस रूसी कवियों की कविताओं को अनुदित किया है। जब रूस अपने क्रान्तिकारी परिवर्तनों से होकर व्यवस्थित करने में लगा हुआ था तब साहित्यिक आन्दोलन हुआ। इसी काल में जो शासन व्यवस्था का परिवर्तन हुआ एवं कृषक प्रजा के बंधन ढीले हुए व जनता की अपनी अधिकार एवं चेतना जागी उसी चेतना के सूत्रधार कवियों ने अपनी कविताओं द्वारा साहित्य को समृद्ध किया। जिनमें प्रमुख कवि हैं– पुश्किन, व्यूतशेव, लेरंमे–तोव, कोलसोव, खोम्याकोन। इन कवियों की कविताओं को बच्चन ने चौसठ रूसी कविताओं में उद्धृत किया है।

पुश्किन की कविता को 'पैगम्बर' शीर्षक देकर बच्चन ने उनके भाव व्यक्ति किये हैं यथा –

दैवी दीप्ति प्राप्त करने की अमर तृषा लेकर मन में
पागल सा मैं घूम रहा था मरूस्थलों में, निर्जन में।

इसमें बच्चन ने पुश्किन के भावों को व्यक्त किया है कि छोटी सी रूप कथा के माध्यम से संसार को उज्ज्वल बनाने, अपनी काव्य प्रेरणा को अन्तर्दहन किया है। यह पंक्तियां साधारण वर्णन से उठती मार्मिक संदेश देती है।

तथा ये पंक्तियां पाठक को आत्मविश्वास एवं आशा से संचारित करती हैं कि –

ओ मेरे श्वासों के स्वामी। दो मुझको ऐसा वरदान
मेरे निकट न फटके अलस और निराशा का शैतान।

एक अन्य कवि केदोर ल्यूतशेव की रूसी से हिन्दी में अनुदित ये पंक्तियां जो कवि के चरित्र एवं उसकी सत्ता की ओर प्रेषित करती हैं –

कवि अपने हाथों से
कभी तुम्हारा पावन अवगुंठन फाड़ेगा
वह अनजाने - अनजाने में
कभी तुम्हारा गला घोटकर
तुम्हें बादलों से भी ऊपर पहुंचा देगा।

रूसी काव्य की अपनी कुछ विशेषतायें जिनके आधार पर वहां के कवियों ने कवितायें लिखी। बच्चन ने उन्हीं को हिन्दी भाषा का भाव दिया। वहां की काव्य की

परिधि सीमित है वहां कवि जन सधारण के अधिक निकट है। अतः कविता में भावप्रवणता व जागरूकता का जो भाव होना चाहिये मौलिक कृति के निकट ही अनुवादित कविता मे वहीं भाव दृष्टिगोचर होते हैं।

रूसी कवि प्रकृति के परिवर्तन के प्रति सदैव सचेत रहे हैं, प्रकृति को आध्यात्मिकता से नहीं जोड़ा है तथा उसकी प्रकृति को सामान्य रूप से ही वर्णित किया है। प्रकृति की अलग सत्ता निर्धारित की है जो ईश्वर से अलग है मानवों से भी अलग है। प्रकृति के मानवीकरण पर रूसी कवियों को विश्वास नहीं।

मानव जीवन के प्रमुख पहलुओं को विशिष्ट परिस्थिति में नहीं देखते। इस संकलन में बच्चन ने रूसी कवियों कीी यही भावना उदधृत की है। रूसी कवि कृषक, पादरी, मजदूर, संगतराश, गांव की लड़की, अंतरिक्ष यात्री आदि कविताओं में रूसी कवियों के अन्तर्मन की आत्माभिव्यक्ति दिखती हैं।

अभिव्यक्ति के सम्बन्ध में बच्चन का मानना है कि रूसी कवि बहुत सूक्ष्मदर्शी है उनकी कविताओं का हर कोना ह्रदय को छूता है।

प्रथम प्रेम में उल्लास से प्रेम की निराशा तक सुकुमारता एवं उदारता, रहस्यवाद के भाव प्रगट होते हैं। जीवन की करूणा, दयनीयता एवं दुःखमय त्रासदियों के ऊपर रूसी कवियों ने अपनी संवेदना व्यकत की है।

देश प्रेम की एक सूदृढ़ भावना रूसी कवियों की मुख्य विशेषता है उन्होंने अपने देश की अच्छाई, बुराई को संतोषमय रूप में ग्रहण किया है। अंधाकार पूर्ण घड़ियों में कही भी निराशा या देश के प्रति विरक्ति की भावना नहीं दिखाई देती है। भ्रम विमुक्त कविता की इन पंक्तियों में यही भावना दिखती है –

अंधेरे में छिटकती चिन्गारियां है
जो निशा की कालिमा पर मुसकराती।

कवि असंतोष से अधिक वेदना को प्रगट करता है। रूसी कवि अपने साहित्य में प्रेरणा के लिये अपनी ही जन्मभूमि से शक्ति संचम करता है अपनी संघर्षशील आत्मा से वह काव्य की सत्ता को बनाये रखता है। वह कहीं और नहीं जाता न किसी दूसरे देश की सभ्यता संस्कृति एंव विचारधारा या सम्पन्नता उसे प्रभाविता करती है। वह स्वयं में पूर्ण है

सन्तुष्ट है एवं समर्थ है

कोलीशेव की 'चांद पर' कतिवा रूसी कवियों की जन्मभूमि से प्रेम की भावना से अभिभूत है। बच्चन ने इसे हिन्दी के सुन्दर शब्दों द्वारा प्रगट किया है –

हुड़क उठेगी अपनी परिचित पूत पुरातन
धरती पर वापस आने की, पग रखने की
चन्द्र जनित पर झटक-झाड़कर
अपने सुख, दुख इच्छाओं के सहजभार को
सहज भाव से अपनाने की।

इस प्रकार बच्चन के इस चौसठ रूसी कविताये संकलन में रूसी कवियों की विशिष्टताओं एवं वहां की भावभूमि एवं संस्कृति की विवेचना की गई है। किसी भी देश की साहित्यक कृति का अनुवाद करते समय उस देश की भाषा, भूगोल, इतिहास संघर्ष, जीवन पद्धति, समाजनीति आदि पर विचार करना आवश्यक है एवं पाठकों से उनको अवगत कराना कवि का कर्त्तव्य है, यही कर्त्तव्य बच्चन ने इस संकलन की भूमिका में निभाया है। अनुवाद करते समय भी इस बात का विशेष ध्यान रखा है कि वह कवि की मौलिक रचना के निकट हो एवं वहां के परिवेश की झलक हो।

बच्चन ने इन अनुवादों में शब्दों में निहित भावों पर विशेष बल दिया है भावों को साध्य माना है वे इसी कहावत पर विश्वास करते हैं **'भाव अनूठो चाहिए भाषा कैसिउ तो होये'** भावों की गरिमा के समक्ष भाषा नगण्य हो जाती है। भारतीय मत भी यही है कि भषा भाव की अनुगामिनी है। बच्चन ने तो इन कविताओं का अनुवाद तीसरी भाषा अंग्रेजी के माध्यम से ही किया सर्वप्रथम अंग्रेजी अनुवाद का अध्ययन किया तत्पश्चात् उन्हें हिन्दी की भाषा एवं काव्य की गीतात्मकता प्रदान की लेकिन इन कविताओं को पढ़कर पाठक यूरोपीय शैली की झलक कहीं नहीं पाता क्योंकि बच्चन ने रूसी कवियों की वाणी में स्थित उनकी अंतरात्मा को समझा उनके भावों को अपने जीवन में अनुभव किया फिर अनुवाद किया। इन कविताओं का अनुवाद बच्चन की बहुत बड़ी देन ही है पर हिन्दी पाठकों को रूसी कवियों की मनःस्थिति के निकट ले जाने का माध्यम बनती हैं। हिन्दी साहित्य सदैव ऋणी रहेगा। रूसी कविता के आधार पर बच्चन ने स्वयं के भाव भी जागृत होते गये हैं बच्चन को अपने इस अनुवाद संकलन से सोवियत लैंड रूसी पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।

निष्कर्ष –

अपने काव्य सृजन के सोपानों पर चढ़ने तक बचपन के जीवन ने नये–नये मोड़ लिये उनकी आत्माभिव्यक्ति उनके ही शब्दों में –

भाग्य के आघात से मैं बच नहीं सका, प्रेम की दुनिया धोखा दे गई पत्नी का देहावसान हो गया जीवन विश्रंखल हो गया साल भर के लिये लिखना बिल्कुल बन्द रहा फिर मेरी वेदना, मेरी निराशा, मेरा एकाकीपन, 'निशा निमंत्रण', एकांत संगीत, और आकुल अन्तर के लघु-लघु गीतों में मुखरित हुआ है।

इस तरह काव्य में बच्चन मानवीय दुख को पीकर अपने गीतों में कवि दुख को ही अभिव्यक्ति दी उनके हृदय की व्यथा उनकी आत्माभिव्यक्ति बन गई। इस वृहद संसार मे जहां हजारों काव्य है वहीं बच्चन ने कविता की ही अपने व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में चुना। वे कहते हैं –

मेरी कविता केप्रति लोगों की रूचि पर अब वह कविता अपने परिवेश से कटी, अकेली है, और नये लोगों के लिये कभी-कभी एक पहेली सी प्रतीत होती है।

बच्चन की आत्माभिव्यक्ति मधु काव्य में

बच्चन के साहित्य की नींव ही मधुकाव्य से शुरू होती है। मधु काव्य में हाला–प्याला, साकी के प्रतीकों द्वारा उन्होंने मन की अभिव्यक्ति को व्यक्त किया है। मधुकाव्य में उन्होंने अपने सौन्दर्य की उपासना करने वाले हृदय के मादक आनन्द को मधुकाव्य में व्यक्त किया है। सर्वप्रथम उन्होंने उमर खैयाम की रूबाइयों से काव्य को सुशोभित किया। तत्पश्चात् मधुशाला, मधुबाला व मधुकलश का अवतरण हुआ।

मधुकाव्य में उनके अन्तर तम के संस्कार अज्ञात रूप से अभिव्यक्त हुए हैं। मधुकाव्य में मदिरा को प्रतीक मान कर उन्होंने शाश्वत जीवन सौन्दर्य एवं शाश्वत प्राण चेतना शक्ति का निरूपण किया है। बच्चन की मदिरा जीवन के स्वपनों की मदिरा है। जिसमें अतीत का मधुसिक्त मोह है तथा भविष्य की सुनहरी आशा की किरणें हैं।

उनके मधुकाव्य में अनेकों ऐसे उदाहरण प्रस्तुत हैं कि जिसमें पाठकों को अक्षय जीवन चैतन्य की आशा उल्लास भरी मदिरा पिलाकर उनके प्राणों में नवीन संचार करती है, बच्चन की मदिरा में बुद्धिवादी दर्शन नहीं मानव हृदय की कोमल भावनायें अभिव्यक्त हुई हैं। मदिरा का मिट्टी का पात्र विश्व आनन्द, जीवन चेतना तथा नवयुग के सौन्दर्य बोध का प्रतीक है। जो मन देह प्राणों में नवीन स्फूर्ति व चेतना व आनन्द चैतन्य भर देता है।

मधुकाव्य में जहां बच्चन आत्मा की गहराइयों में प्रवेश कर जाते हैं वहीं आत्म साक्षात्कर की आत्मलीनता भी दृष्टि गोचर है जिसमें उनकी देह, मन व प्राणों की अभिव्यक्ति हुई है।

मधुकाव्य में बच्चन ने कल्पना की आकाशीय आकांक्षाओं को छोड़कार जीवन सासों की वाणी में झंकार भर कर वास्तविकता की प्रतिध्वनि काव्य में समाहित की । अपनी आत्मनिष्ठ भावना को, जीवन संर्घष की सच्चाईयां भावना के उद्दाम ज्वार से मधुकाव्य में अभिव्यक्त किया है।

बच्चन का मधुकाव्य अभिव्यक्ति के चरमोंत्कर्ष पर इसी कारण पहुंचा कि उन्होंने वास्तविकता व मदिरा कल्पनाओं को अपने जादू भरे प्रतीकों द्वारा उत्पन सन्निकट कर दिया कहीं कहीं उनमें आपस में सामन्जस्य भी बैठा दिया।

उनका मधुकाव्य भले ही उर्दू शयरी से प्रेरित रहा हो किन्तु उनके विचार नितान्त स्वदेशी एवं आधुनिक हिन्दी काव्य की उपज हैं उसकी मस्ती उनके अपने भावों की मस्ती है। गहराई, उनकी आत्मा की गहराई है। मधुशाला से जो तृप्ति पाठकों को मिलती है उससे और अधिक उत्कण्ठा जागृत होती है आत्मा की अभिव्यक्तियों की गहन गुफा में पाठक जानने को अकुलित हो उठता है। मधुकाव्य की भावुकतापूर्ण आत्माभिव्यक्ति उनके कवि मन की गहराईयों की प्रतिध्वनि है।

बच्चन के मधुकाव्य में उनके विचारों की आत्माभिव्यक्ति देखने के लिये मधुशाला, मधुकलश, मधुबाला के भावों का निरूपण करना आवश्यक है। इन रचनाओं में उनका अपना निजी दर्शन दिखाई देता है। वही उनकी अभिव्यक्ति है।

मधुकाव्य के विषय में पन्त ने अपने विचार प्रकट किये है कि **'बच्चन की मदिरा चैतन्य की ज्वाला है जिसे पीकर मृत्यु भी जीवित हो उठती है। उनका सौन्दर्य बोध देशकाल की क्षणभंगुरता को अतिक्रम कर शाश्वत के स्पर्श से आम्लान एवं अनन्त यौवन है। यह निःसन्देह बच्चन के अन्तरतम का भारतीय संस्कार है जो उनके मधुकाव्य में अभिव्यक्त हुआ है'**।

बच्चन के मधुकाव्य को खैयाम से प्रभावित माना गया है। किन्तु अभिव्यक्ति उनके अन्तर की है, वे स्वयं लिखते हैं –

'मेरी बात मेरी तान में बदल गई। अभी तक मैं लिख रहा था। अब गाने लगा। खैयाम से जो प्रतीक मुझे मिले थे उनसे अपने को व्यक्त करने में मुझे बड़ी सहायता मिली। मधुशाला और मधुबाला लिखते हुये वाणी के जिस उल्लास का अनुभव मैंने किया, वह अभूतपूर्व था। शायद उतने उल्लास का अनुभव मैंने बाद में कभी नहीं किया'।

इस प्रकार बच्चन के मधुकाव्य का प्रेरणा–स्त्रोत उमर खैयाम को पढ़कर ही सबसे प्रथम उन्मुक्त हुआ। उनके मधुकाव्य में हाला, प्याला, मधुबाला के प्रतीक भले ही खैयाम से लिये हों, पर भावना, कल्पना व विचारों की आत्माभिव्यक्ति अपनी है। जहां उमर खैयाम जीवन के क्षणिक होने का एहसास दिलाते हैं वहीं बच्चन ने अपने मधुकाव्य में इस प्रकार विचार व्यक्त किये कि मदिरा से मृत्यु को भी पुर्नजीविन करने का प्रयास किया है। उनके मधुकाव्य में आत्मा का भारतीय दर्शन परिलक्षित होता है जो शाश्वत जीवन सौन्दर्य

एवं प्राण चेतना का प्रतीक है।

कवि का अपना परिचय उसके हृदयोद्गार होते हैं हालावाद की श्रृंखला में बच्चन ने अपने मधुकाव्य में आत्म परिचय की अभिव्यक्ति संवेदनशीलएवं भावनात्मक स्तर पर की है। 'मधुबाला' में उनकी आत्माभिव्यक्ति निम्न रूप में होती है। वे अपना परिचय पाठक को इस प्रकार देते हैं:-

मैं स्नेह सुरा का पान किया करता हूँ।
मैं कभी न जग का ध्यान किया करता हूँ।।
जग पूछ रहा उनको, जग की गाते।
मैं अपने मन का गान किया करता हूँ।।
मैं निज उर से उद्गार लिये फिरता हूँ।
मैं निज उर से उपहार लिये फिरता हूँ।।
यह अपूर्ण संसार न मुझको भाता।
मैं स्वप्नों का संसार लिये फिरता हूँ।

इन पंक्तियों में बच्चन ने अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को खोलकर पाठक के समक्ष रखा है। आत्मपरिचय इससे अच्छा एक कवि का और क्या हो सकता है कि वह बिना संसार की चिन्ता किये अपने उद्गार प्रगट कर के किसी सीमा व बंधन से अपने को मुक्त समझे। बच्चन स्वयं को स्नेह बंधन में ही बंधा पाते हैं। स्नेह सुरा का ही मद उन्हें विचलित करता है। जग की अन्य परम्पराओं की वे चिन्ता नहीं करते उनके अन्तर की स्नेहासिक्त भावनायें ही उनकी पूंजी है उनका परिचय है संसार की भौतिकता, छलना कपट से वह अपने का विरत रखना चाहते हैं। स्वप्नों का निष्पाप निश्छल संसार ही उनका आश्रय है। स्नेह की अभिव्यक्ति ही सच्ची अभिव्यक्ति है। उनकी आत्मा स्नेह की ही आकांक्षी है एक कवि का स्नेहासिक्त संसार ही उसका आत्म परिचय है। स्नेह सुरा की ज्वाला को जब स्वयं ही हर वक्त दहकाते रहते हैं। फिर उस हृदय में दुख-सुख का ताप किस तरह पहुंच सकता है। बच्चन की यही ज्वाला की हाला उनका मधुकाव्य है यही प्रेम की मधुशाला है, मधुबाला है, व मधुकलश है। सम्पूर्ण मधुकाव्य का आत्म परिचय उनकी प्रेम की मदिरा है। उसी मदिरा के मंथन का फेनिल तत्व 'हलाहल' के रूप में मुखरित हुआ है।

मधुकाव्य में बच्चन के आत्म तत्व को यदि खोजना है तो मधुशाला, मधुबाला,

हलाहल की अभिव्यक्ति को समझना होगा।

बच्चन के मधुकाव्य के सम्बन्ध में नरेन्द्र शर्मा लिखते हैं– **'मध्य यूगीन भारतीय मनीषा मधुमीत या मधु से भयभीत थी। आर्य काव्य के मधुगीत और आर्य जीवन का आनन्द-वन मधुमीत मध्य युग में न जाने कब का और कहां तिरोहित हो चुका था। मध्य युग भयावह भवावटी (भव के महावन) और मधु के स्थान पर भयंकर भव सागर के प्रतीक उपस्थित करता था। मध्य युगीन मनीषा का द्योतन करने वाली एक प्रतीक कथा है कि भवावटी में भटकता हुआ एक भयभीत पथिक किसी ऐसे अन्धे कुएं पर जा पहुंचता है जिसके तट पर कोई व्यक्ति औंधे मुंह लटका हुआ है। कुएं के उपर एक घना वृक्ष है जिसकी उंची डाल पर मधुच्छद लटका है। बूँद-बूँद जो मधु टपकता है उसे चखने की लालच में औंधें मुंह पड़ा मनुष्य मुंह बाए है ....**

'बच्चन से पहले का हिन्दी काव्य हितवादी और छायावादी था। कवि सहृदय द्वारा आहत और प्रशंसित था। बच्चन ने पहली बार सहृदय श्रोताओं के जमघट में घुसकर धड़ले से मधु स्फोट करने की ठानी थी। बनारस विश्व विद्यालय के शिवाजी हाल में मैंने बच्चन को मधुभीत मध्य युग का भूत झाड़ते देखा था और देखा था मध्यवर्गीय संकोचशील शालीनता को अनावश्यक सिद्ध करते हुए। मधुशाला के उद्‌घाटन का यह रूप आज भी मेरे मन में घर किये हुए है'।

मधुकाव्य को बच्चन वेदना, संवेदना आदि भावों से युक्त यूनानी त्रासदी के समान मानते हैं। उनका कथन है कि :–

'मधुशाला से मेरे चेतन, अवचेतन, अति चेतन, संस्कार, अनुभूति में संचित स्मृति-कल्पना, भय-आशा-निराशा, वेदना-संवेदन; हर्ष विमर्श, संघर्ष, सम्मोह-व्यामोह, विद्रोह, सबका बड़ा क्षरण हुआ है।

कैथारसिक – परगेशन रेचन। वह है भी यूनानि त्रासदी के समान अपनी स्परिट में। फिर प्याला, हाला, मधुकलश, सुराही, मधुपायी, मालिक मधुशाला आगे आते हैं और यूनानी त्रासदी में कोरस की तरह अपना परिचय देते हैं। 'मधुशाला' के बाद मैंने मधुबाला के गीत लिखने शुरू किये जैसे अभी पूरा क्षरण नहीं हुआ था। वास्तव में वह पूर्ण 'मधुकलश' के साथ हुआ। 'मधुशाला', 'मधुबाला', 'मधुकलश' को एक ही रचना मान कर जो पढ़ेगा शायद उसी को इन तीनों रचनाओं के पूर्ण रहस्य का बोध होगा'।

मधुशाला

बच्चन के साहित्य जगत का अधार स्तम्भ 'मधुशाला' है जिसको लिखकर बच्चन ने अपना एक विशेष स्थान बनाया हे। १९३५ में लिखी गयी यह कृति हिन्दी की छायावादी कविता के क्षेत्र में निश्चय ही एक नवीन प्रयोग था जो सफलता के उच्च शिखर पर विराजमान हुआ एवं पाठकों के हृदय रूपी आसन पर उसी तरह अटल है। मधुशाला इस बीच तमाम आलोचनाओं समीक्षाओं के दौर से गुजरती रही है। ये उमर खय्याम की रूबाइयों से प्रेरित है लेकिन उसकी आवृत्ति नहीं कही जा सकती। कवि स्वयं स्वीकार करता है कि मधुशाला की प्रेरणा उसे इन्हीं रूबाइयों से मिली लेकिन मधुशाला का अपना रहस्यवाद, दर्शन है जो सर्वथा नवीन है। हर कवि का विचार दर्शन एवं भावनायें स्वयं की होती हैं और वहीं अमूल्य पूंजी बच्चन ने अपनी मधुशाला में अत्यन्त उदारता से बिखेरी है।

आलोचकों ने मधुशाला पर टिप्पणी की है कि मधुशाला ने हालावाद रूपी शिशु को जन्म दिया और वह शिशु बहुत ही संक्षिप्त समयकाल में ही मृतप्राय हो गया लेकिन बच्चन का 'हालावाद' रूपी शिशु हिन्दी साहित्य में परिपक्व मस्तिष्क वाले व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। सम्पूर्ण विचार एवं चेतना के साथ जो युगों तक जीवित रहते हैं। आत्मा की अभिव्यक्ति मधुशाला में जितने मादक रूप में व्यक्त हुई है उतनी उनकी अन्य रचनाओं में नहीं। यही अभिव्यक्ति सरस, सरल एवं लयात्मक शब्द भावना मधुशाला के माध्यम से जन–जन तक पहुंची है। रचनाकार के लिये यही सबसे बड़ी उपलब्धि है कि उसके विचारों की अभिव्यक्ति को देशकाल में अपना स्थान व गौरव प्राप्त हो जो बच्चन की आत्मभिव्यक्ति के 'मधुशाला' के माध्यम से ही प्राप्त हुआ है।

मधुशाला में कवि उपने अन्तर के उद्‌गारों को व्यक्त करता हुआ परमात्मा से आत्मा के मिलन को प्रिय एवं प्रियतमा का मिलन मानता है जो संसार से परे है प्रथम पंक्तियों में ही यह भाव कवि ने व्यक्त कर दिया है कि मधुशाला रूपी आत्मा सर्दव अपने प्रिय के स्वागत के लिये तत्पर है –

पहले भोग लगा लूं तेरा,
फिर प्रसाद जग पायेगा।

सबसे पहले तेरा स्वागत,

करती मेरी मधुशाला।।

व्यक्ति ईश्वर से साक्षात्कार कई रूपों एवं अनेक अवस्थाओ एवं क्रियाओं द्वारा करना चाहता है। साकार रूप की आराधना करके, हठ योग, सिद्ध योग से एवं ध्यान करके वहीं ध्यान के चरमोन्माद की अवस्था में आत्मा परमब्रह्म रूपी मधुपान करती है। निराकार रूप का ध्यान करते–करते परमात्मा अनुभव कर सकता है जो उन्मादी अवस्था में संसार को विस्मृत कर दे हाला, प्याला सभी भुला दे सिर्फ एक ही अभिलाषा शेष रह जाये तभी ईश्वरत्व का दर्शन कर सकेगा। आत्म ज्ञान प्राप्त हो सकेगा। संसार एवं आत्मा के मध्य मध्यस्थता के साधन को भी अपने आप में विलीन कर ले –

बने ध्यान करते-करते

जब साकी साकार रखे,

रहे न हाला, प्याला, साकी

तुझे मिलेगी मधुशाला।

योग और तप की परम चरमावस्था की इससे अच्छी अभिव्यक्ति और क्या हो सकती है। आत्म विश्लेषण एवं आराधक के प्रति आत्म सर्मपण की यह अभिव्यक्ति मधुशाला में बच्चन ने सीधे सरल शब्दों में यूं ही व्यक्त कर दिया है।

बच्चन की मधुशाला ने जन्म दिया था एक विचारधारा को स्वतन्त्र विचार धारा जो समाज एवं जाति धर्म से बंधी नहीं है साम्प्रदायिकता से परे हैं। बच्चन के अन्तर का बैठा हुआ विद्रोही कवि मधुशाला से कह उठता है –

धर्म ग्रन्थ सब जला चुकी है

जिसके अन्तर की ज्वाला,

मंदिर मस्जिद, गिरजे-सबको

तोड़ चुका जो मतवाला।

मृत्यु के चिरजीवी होने का सत्य ही संसार का सत्य है हलाहल जिसके निकट है कवि को मधुशाला मरघट में कोई अन्तर नहीं दिखता क्योंकि दोनों ही स्थान अविरत है।

जगा करेगा अविरत मरघट
जगा करेगी मधुशाला।
जग जंर्जर प्रतिदिन, प्रतिक्षण पर
नित्य नवेली मधुशाला।

संसार में मानव मृग–तृष्णा के आधीन है अप्राय्य को प्राय्य बनाने हेतु सत्कर्म दुष्कर्म करता हैं संपूर्ण जीवन मिथ्या मृग ही चाह में व्यतीत करता है अन्त में जो प्राप्त हो जाता है वह प्रसन्नता नहीं प्रदान करता है। मधुशाला का कवि जग को ये महान् संदेश देता है जो स्वयं में तो नवीन नहीं है तमाम ग्रन्थों एवं ऋषियों की वाणी में सदा से इस लोग में गुंजित होता रहता है। यही वह संदेश है कि जो अनन्त है उसी से प्रेम करो।

प्रेमचन्द जी ने मधुशाला की प्रशंसा में कहा था 'मधुशाला हिन्दी में बिल्कुल नयी चीज है यह श्रेय बच्चन को ही है कि हिन्दी साहित्य में उन्होंने मधुशाला भी सजा दी'।

मधुशाला में श्रंगारिक्ता एवं क्रान्ति का मिश्रण ही काव्य के रूप में प्रस्फुटित हुआ है। मधुशाला में कवि ने व्यक्ति के जीवन सम्बन्धी सभी क्रिया–कलापों एवं संस्कारों का वर्णन किया है। जन्म से मृत्यु तक वह मधुशाला के साथ ही रहना चाहता है। किसी भी काव्य का चरमावस्था तक पहुंचना उसकी उत्कृष्टता का द्योतक है मधुशाला में कवि वही चरमावस्था तक पहुंच गया है। जहां वह मृत्युपर्यन्त संस्कार के रूप में भी मधुशाला के साथ ही रहने की इच्छा करता है–

प्राणप्रिये, यदि श्राद्ध करो तुम
मेरा, तो ऐसे करना
पीने वालों को बुलाकर,
खुलवा देना मधुशाला।

सामजिक पहलूओं एवं समस्याओं को भी मधुशाला में इंगित किया है। कवि मधुशाला के माध्यम से साम्प्रदायिक सौहार्द का सन्देश देता है। उंच नीच, छोटे–बड़े की सारी विविधता मधुशाला में नहीं है–

कभी नहीं सुन पड़ता, इसने
हा दू दी मेरी हाला,

कभी न कोई कहता, उसने
जूठा कर डाला प्याला,
सभी जाति के लोग यहां पर
साथ बैठकर पीते हैं
सौ सुधारकों का करती है
काम अकेली मधुशाला।

इस प्रकार मधुशाला स्वयं में एक सम्पूर्ण गीत रचना है जिसमें बच्चन ने स्वयं को अभिव्यक्त किया ही है वरन् जीवन के समस्त पहलुओं पर लेखन किया है। मधुशाला की व्यापकता एवं प्रसिद्धि इन्हीं कारणों से हुई, मधुशाला के सम्बन्ध में कई विद्वानों, कवियों, लेखकों ने अपने उद्गार व्यक्त किये हैं। नरेन्द्र शर्मा लिखते हैं – **'बच्चन से पहले का आधुनिक हिन्दी काव्य हितवादी और छायावादी था। कवि सहृदय द्वारा आद्दत और प्रशंसित था। बच्चन ने ही सहृदय श्रोताओं के जमघट में घुसकर धड़ल्ले से मधुस्फोट करने की ठानी थी। बनारस विश्व-विद्यालय के शिवाजी हॉल में मैंने बच्चन को मधुभीत मध्ययुग का भूत झाड़ते देखा और देखा की मध्यवर्गीय संकोचशील शालीनता को अनावश्यक सिद्ध करते हुए। 'मधुशाला के उद्घाटनका यहरूप आज भी मेरे मन में घर किये हुए है'।**

मधुशाला के सम्बन्ध में साहित्य जगत में आरोप लगा है कि हालावाद को जन्म दिया या छायावाद में विरूद्ध लेखन किया आलोचनाओं के सम्बन्ध में बच्चन ने अपने विचार आत्मकथा में व्यक्त किये हैं इन पंक्तियों में वे मधुशाला सम्बन्धी सारी भ्रान्तियां दूर करते हैं, मधुशाला के सम्बन्ध में बच्चन की आत्माभिव्यक्ति इस तरह इंगित हुई है–

'अभिव्यक्ति से मुझे जो राहत मिली होगी उसी ने मुझे समय-सूमय लिखने को प्रेरित किया होगा .... मेरे स्वाध्याय और अभ्यास से मेरी अभिव्यक्ति निखार आया हो पर मधुशाला और मधुबाला के गीत मेरे उतने ही निजी थे जितनी मेरी पहले की रचनायें। ..... मेरे सिद्वान्त बनकर कोई वाद विशेष चलाने के विचार से, कोई दर्शन प्रादित करने के ध्येय से, कोई क्रान्ति लाने का लक्ष्य करके, अथवा स्थापित और प्रचलित काव्य विधा-छायावाद के विरूद्ध विरोध का झंडा खड़ा करने के लिये यह कविता नहीं आयी थी। भूलतः छायावाद यदि साहित्यिक विधा थी। मेरी कविता जीवनवाद थी, जिसे आगे जीवन

की सीधी अभिव्यक्ति पर जीने भोगने के लिये आये परिर्वतन के अनुरूप परिवर्तित यही संक्षेप में उसकी नवीनता थी'।

मधुशाला इस प्रकार साहित्य में अपनी यात्रा करते–करते '१९८५ में स्वर्ण जयन्ती वर्ष' मना चुकी है। बच्चन ने इस अवसर पर अपने ४०वें संस्मरण में कुछ पंक्तियां और लिखी हैं यह सिद्ध किया है कि मधुशाला के विचार अनन्त हैं इतने वर्ष उपरान्त भी वह अपने रूप में नवीन है।

जितनी मेरी उम्र वृद्ध मैं
उससे ज्यादा लगता हूँ।
अद्धरात्रि की होकर के भी
षोडश वर्षी मधुशाला।

जीवन के अंतिम पड़ाव की भी कल्पना कवि कर चुका है एवं वह मधुशाला के माध्यम से ही अंतिम संस्कार के प्रति अपने भाव प्रकट करता है –

पित पक्ष में, पुत्र उठाना
अर्ध्य न कर में, पर प्याला,
बैठ कहीं पर जाना गंगा,
सागर में भरकर हाला,
....
तर्पण अर्पण करना मुझको,
पढ़-पढ़कर के मधुशाला।

बच्चन की मधुशाला साहित्य एवं काव्य जगत की एक वह रसभरी प्याली है जिससे सहृदय पाठकगण अपने अन्तरतम् की प्यास बुझाते हैं। यह उच्चकोटि का आध्यात्मिक रहस्यवाद व जीवन की नश्वरता का अनन्त शब्द सुनाती है। उनकी इस काव्य कृति ने कबीर की निर्भीक वाणी का सदियों पूर्व जन–मानस को धर्म, जाति सम्प्रदाय से उपर परम्पिता परमात्मा का प्रेम सिखलाया था। मधुशाला भी उसी भावों की रचना है जहां धर्म, सम्प्रदाय मंदिर–मस्जिद का भेद नहीं है। आध्यात्म की मदिरा में योगी भोगी होना चाहता है लेकिन आकांक्षाओं की प्यास हमेशा प्याला खाली देखती हैं।

एक स्वर लय ताल में लिखी गई मधुशाला अपने में ही मदिरा की छलकती धार है जो आखरी बूंद तक पान करने पर ही तृप्ति प्रदान करती है। जीवन का दर्शन इतने सरल, सरस एवं सशन्त शब्दावली में हुआ है जो काव्य शास्त्र की दुरूहता से दूर है – यथा–

आने के साथ हो कहलाया
जाने वाला।

उपरोक्त पंक्ति क्षणभंगुर जीवन की परिभाषा है। मधुशाला में बच्चन की अभिव्यक्ति एक भावुक मानव की अभिव्यक्तियां है जो संसार में दुःख पाता है उसे आत्मसात करता है और उसको मधुशाला के माध्यम से निष्प्रभावी बनाता है। 'मधुशाला' पान कर पाठक भी अपने समस्त दुख, विकार, विलाप भूल जाता है। बच्चन 'मधुशाला' की अभिव्यक्ति इन शब्दों में करते हैं –

'कवि का हृदय केवल हृदय नहीं है। उसकी हृदय-गोद में त्रिकाल और त्रिभुवन सोते हैं, सृष्टि दुधमुंही बच्ची के समान क्रीड़ा करती है और प्रलय नटखट बालक के समान उत्पात मचाता है। उसका हृदयांगण गमन के गान, समीकरण के हास और सागर के रोदन से प्रति ध्वनिमत हुआ करता है। उसके हृदय मंदिर में जन्म जीवन-मरण अविरत गति से नृत्य किया करते हैं। इस कारण कवि के हृदय के गलने के साथ ही समस्त विश्व मादक हाला से परिप्लावित हो उठा है। जल और थल, गगन और पवन, सिन्धु और वसुंन्धरा, स्वर्ग और नरक, जड़ और चेतना, निशा और दिवस, वन और उपवन, सर और सरिता, मिलन और विरह, प्रणय और संघर्ष, आशा और निराशा, जन्म और जीवन, काल और कर्म - सभी वस्तुएं जिनका अस्त्तिव इस विश्व में है, आज हाला-प्याला-मधुशाला-मय आभासित हो रही है'।

'मधुशाला' के भावों के परिपेक्ष्य में बच्चन का तृषित, पीड़ित हृदयांगण स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। जीवन की अनेक आशाओं के निराशाओं में परिवर्तित होने, कितने आवेगों उन्मादों का दाह करने, कितने मन के भवनों को खण्डहर करने के बाद कवि ने मधुशाला में अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त कर दिया है तभी यह 'मधुशाला' के रूप में मधुकाव्य का एक सुदृढ़ स्तम्भ पाठकों में समक्ष आया।

मधुबाला

'मधुबाला' की कविताओं की रचना १६३४–३५ में हुई थी, प्रथम संस्करण १६३६ में प्रकाशित हुआ था। 'मधुबाला' बच्चन जो की मधुशाला की तरह का कविताओं का संग्रह है पथिक और मधुशाला के मिलन का माध्यम 'मधुबाला' ही है।

कवि मधुबाला के सौन्दर्य एवं पगों की रून–झुन, छन–छन से ही मतवाला हो उठता है एवं कल्पना में अपने आस–पास तमाम मधुबालाओं की छवि बसा लेता है। कवि का ह्रदय पुकार उठता है जिसकी सत्ता इतनी उन्मादक हैं वह कितनी उन्मादनी होगी अर्थात् मधुशाला। यह कल्पना ही सुखद है। पीने का अनुमान ही पीने से ज्यादा प्राप्ति सुख वाला है। मधुशाला में मधुबाला के दर्शन की अभिलाषा लिये पथिक अभी कल्पना के संसार में ही खोया है कि मधुबाला साक्षात् रूप यौवन से पूर्ण हाथ में मधुप्याला लिये आ गई।

स्वप्न भंग हुआ ह्रदय पर वज्रपात हुआ। जब सत्य से साक्षात्कार हुआ।

मधुबाला बोली जिसके ध्यान में तुम घुलते रहे लो इसे पान कर लो। अधरों पर बार–बार मधु का प्याला लगाया लेकिन वह मधुपान न कर सका। मधु प्याले वाले की सिर्फ अपनी अश्रुधारा से ही पूर्ण करता रहा। दिन बीतते रह वह समझता मानो मेरा भ्रम ही हो।

वह दिन भी आया मधुशाला से मधुबाला विलीन हो चुकी थी। अंधकार में वह उसे खोजता ही रहा। वह विलीन हो चुकी थी। सागर की तरंगों में उसके लिये लहू से लिखा संदेश छोड़कर, 'प्रिय मेरे न हो सके, मैं जा रही हूँ'। वह पागलों सा मधुशाला में चिल्लाता रहा करूण क्रन्दन करता रहा लेकिन सब मौन।

मदिरालय की दीवारों से मानो यह आवाज आयी कि कल्पना के पागल –स्वपन तो गये। वह भी सागर की उन्हीं तरंगों की ओर दोड़ पड़ा, मार्ग में मधु लिये मधुबाला मिली वह बेसुध हो लिपट पड़ा। सबेरे मधुबाला की गोद में था। आंसुओं से उसके दुःख को अपने अन्तर का दुःख बनाये हुए बैठी थी मधुबाला। वह वास्तविकता के धरातल पर था प्यार कर रहा था अपनी मधुबाला को मधु को । लेकिन मनुष्य वास्तविकता के साथ ज्यादा दिन व्यतीत नहीं कर सकता है उसके स्वप्न फिर वापस उसके संसार में आने लगे। वह

काल्पनिक नहीं होना चाहता है क्योंकि कल्पना की सत्ता अधिक वैभवपूर्ण थी वास्तविकता नहीं। वह प्याया ही रहना चाहता है। वह सपनों के इन्द्रजाल से भाग जाना चाहता है लेकिन वह लाचार है। हर मनुष्य लाचार होता है। स्वप्न संसार से पलायन नहीं कर सकता है। उसे जिस मदिरा की प्यास है तृष्णा उसके रक्त का उसी प्यास के अभाव में पी रही है। प्यास में ही तृप्ति का अनुभव करता है। वह सपनों के जीवन को ही अपने जीवन का मुख्य अंश समझता है। इस प्रकार मधुबाला में बच्चन की स्वप्न में सुन्दर संसार की सत्ता को सर्वोच्च सत्ता मानता है। जीवन का रस ही स्वप्न की वैभव पूर्ण सत्ता में है।

मनुष्य आत्म–अभिव्यिक्ति कई माध्यमों से करता है। कवि कविता द्वारा आत्म अभिव्यक्ति करता है। बच्चन जी ने स्वप्न एवं जीवन के सुन्दर क्षणों की लालसा प्यास इन सभी की अभिव्यक्ति मधुबाला के माध्यम से की है –

मैं निज उर के उद्‌गार
लिये फिरता हूँ
मैं निज उर में उपहार लिये
फिरता हूँ
मैं स्वप्नों का संसार
लिये फिरता हूँ।

आत्म अभिव्यक्ति की यह चेष्टा कवि ने अपनी कविता में की है। अतः मधुबाला में बच्चन की स्वप्नों की अभिव्यक्ति है। उनमें दुःख की अभिव्यक्ति है उसमें सुख की अभिव्यक्ति है, मस्ती की अभिव्यक्ति है, यौवन की आध्यात्मिक पक्ष की वास्तविकता की अभिव्यक्ति है। मधुबाला के गीतों में विचारों की नवीनता, कल्पना की प्रचुरता, भावों की तीव्रता भाषा की स्वाभाविकता एवं संगीतात्मकता इनमें बच्चन का अपना व्यक्तित्व समाया है। अपनी शैली है, फिलॉस्पी है, एवं भाव है। प्रेमचन्द जी ने भी मधुबाला के गीतों की प्रशंसा की है।

'मधुबाला' से कवि भी अति पुकार सुनकर मधुबाला (साकी बाला) मधु को सागर तट से लौटा लाती है। वही मधु 'मधुबाला' की कविताओं के रूप में विश्व के समक्ष एक बार फिर बच्चन की अभिव्यक्तियां बन जाता है। पुनः मधु के सिन्धु की तरंगों में पाठक विलीन होने लगता है बच्चन अपनी इस मधुबाला को पुकारते हुए लिखते हैं – **'मेरी पुकार में भी इतनी शक्ति है - इसीलिये विश्वास से जी सकता था। यद्यपि अब जीवन अभिशाप ही है, तो भी अपने जीवन से सम्बंद्ध चिर-सरल मूर्तियों का ध्यान कर, कृतशता ज्ञापन**

के रूप में अपनी यह कृति दृगों के तरल, नीरव, नम्र, आर्शीवाद के साथ तुझे समर्पित करता हूँ। मानता हूँ विश्व के जीवन में मधु का और तेरा सदा स्थान रहे'।

इस प्रकार मधुबाला की कल्पना के बल पर अपने भाव व आत्मा को उन अदृश्य अनुभूतियों में स्थापित करके पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। नारी अधरों को मिलन–विछोह एवं अपने व्यक्तिगत संवेदनों की परिधि तक ही 'मधुबाला' को सीमित नहीं रखा वरन उसे विश्व चेतना एवं जीवन की प्रेरणा व रागात्मक भावना बना दिया है। 'मधुबाला' को सम्बोधित करते हुए बच्चन कहते हैं – **'सुषमा ने अनेक मधुबालाओं के रूप में मूर्तिमान होकर उसे धर लिया। उसके हाथों में जो प्याला आया उसपर न जाने कितने मरकत पात्र निछावर हो सकते थे। उसकी मदिरा माणिक राशि की आशा को भी लज्जित करती थी। उसका अमूर्तसुगंध की तुलना किससे की जाये। सारा दृश्य था अनुपम, अद्वितीय, अलौकिक वह उन्मुक्त हो उठा। गान करने लगा - मैंने अपने स्वपनों से अपने अपूर्ण संसार को पूर्ण कर लिया'।**

कवि की आत्मा का रोदन 'मधुबाला' है। 'मधुबाला' के स्वप्निल संसार को छोड़कर कवि वास्तविक जगत को प्यार करता है। उसके लिये अश्रु बहाता है। उन आंसुओं में वह संपूर्ण कल्पनाओं व स्वप्नों को बहा देने की प्रतिज्ञा करता है जो उसने कभी मधुबाला के साथ देखे थे। वह वास्तविक मदिरा के से प्यार करने लगता है। पीड़ा, वह पीड़ा को ही प्यार करने लगता है। लेकिन व्यक्ति कब तक पीड़ा से प्यार कर सकता है वह फिर स्वप्नों की ओर लौट पड़ता है। वह उन असंभव स्वप्नों के साथ प्यासा रहना चाहता है। वह सत्त प्रयास करके स्वप्नों से दूर भागना चाहता है। पर उसका बन्धन उसे भागने नहीं देता वह लाचार हो जाता है। क्रन्दन करता है यही क्रदन उसके जीवन का कर्त्तव्य है। कवि कहता है –

'उसे जिस मदिरा की प्यास है, उसके अभाव में तृष्णा उसी के रक्त को पी रही है। उसकी त्वचा के छिद्र-छिद्र से अपने सूक्ष्म अधरों को लगाकर उसका शोषण कर रही है। उसे निःशेष कर रही है। उसका क्रदन गान बनकर विश्व में गूंज रहा है। क्रंदन करने की उसे आवश्यकता हे। कंदन न करूँ तो क्षण भर भी जी नहीं सकता। जीवन उसके लिये आन्नद नहीं, कर्त्तव्य है। यदि जीवन का कर्त्तव्य न होता तो वह मौन ग्रहण कर लेता और वह मौन उसे शीर्घ ही चिर मौन की शरण में भेज देता'।

कवि के हृदय में इस क्रंदन से संसार भी पागल हो उठता है। इन्द्रासन डोल

जाये ऐसा विद्रोह उसके स्वर में है–

हृदय के अन्दर वह उन्माद
कि जिससे पागल हो संसार
खोल दे,कर-पद-बंधन काट,
विश्व बंदीगृह के सब द्वार,

....

दबा मान का सब क्रोध-विरोध
गई बुलबुल वाचाल निकाल
यथित उर थामें अपना हाथ
रही खिल वन में पाटल माल।

'मधुबाला' के गीतों में जीवन की सम्पूर्ण इच्छाओं व जगत की सुख–शान्ति की कल्पना बच्चन करते हैं उनकी आंखों का इच्छित स्वर्ग मदिरा की धार में दृष्टिगत होता है। इसीलिये पल भर की चेतना स्वीकार नहीं करना चाहते, क्योंकि पीड़ा से मुक्ति का यही मार्ग सुखदायी है–

इच्छित स्वर्गो की प्रतिभा
साकार हुई,सखि, तुम हो,
अब ध्येय विसुधि विस्मृति है,
है मुक्ति यही सुखदायी,
पल भर की चेतनता भी
अब सह नहीं, ओ भोली,
गुंजी मदिरालय भी में,
लो, भरो, भरो, की बोली।

पीड़ा में आत्म चेतना जब लुप्त हो जाती है तब कवि विक्षुब्ध होता है, किसी प्रकार की कोई भावना मन में नहीं उठती तब 'मुग्ध' हो जाता है वहीं पीड़न की मुग्धावस्था दुख में कवि को समाधि में लीन कर देती है। वह मधुकाल के छन्दों का सृजन करता चला जाता है। जो दुखद था आत्मभोगी था वह काव्य में सौन्दर्य कल्पना बन पाठकों के समक्ष प्रस्तुत होता है। इसी में बच्चन के काव्य की सार्थकता सिद्ध हुई – तभी तो कवि कह उठता है–

कटु जीवन में मधुपान करो,

जग के रोदन का गान करो,
मादकता का सम्मान करो
यह पाठ पढ़ाने वाला हूँ।
मैं ही मालिक मधुशाला हूँ।

यह जग ही एक मदिरालय है जहां सुख–दुख की मदिरा बराबर से मधुपायी को प्राप्त होती है फिर भी उसके अन्तर की ज्वाला सदैव तृषित रहती है। वह नहीं बुझती, अपनी प्यास को मधुपायी मधुशाला में बुझाने आता है। यहां जमघट, प्याले हैं लेकिन वह एकांकी है कवि का हृदय इस संसार में एक दम अकेला अपनी पीड़ा के साथ है वह दूसरों को अपनी पीड़ा की मदिरा में मुग्ध कर देता है लेकिन स्वयं उस पर नशा नहीं है क्योंकि यह तो सुरा की कल्पना है वह यह जानता है तथा वह कहता है –

कल्पना सुरा 'औ' साकी है।
पीने वाला एकाकी है।
यह भेद हमें जब शात हुआ।
क्या और समझना बाकी है।
जो गांठ न अब तक सुलझी थी,
उसको सुलझाने हम आए।
मधु-प्यास बुझाने आए हम,
मधु-प्यास बुझाने हम आए।

मधुशाला की सुराही को कवि जीवन का प्रतीक मानता है। मनुष्य जिस तरह जीवन में दुख सहकर, पीड़ा में तपकर यह मिट्टी का तन लिये इस संसार में रहता है, उसी प्रकार सुराही प्रथम कुंभकार की चाक पर चढ़कर अपने शरीर पर बेलबूटे कढ़वाती है फिर वह अग्नि में तप कर अपने स्वरूप को प्राप्त करती है। अर्थात् मृत्यु विजय करती है। उसकी सुराही के माध्यम से कवि संसार को यह सन्देश देता है कि अपने इसी के तपने व दुख सहने के गुण के कारण ही सुराही मधुशाला की आत्मा बन जाती है, साकी हाथों में इठलाती है, इतराती है क्योंकि उसे दुखों में हंसना आता है।

मैं कुंभकार की चाक चढ़ी
फिर मेरे तन पर बोलकढ़ी,
तब गई चिता पर मैं रक्खी
हर ओर अग्नि की ज्वाला बढ़ी,

जल चिता गई हो राख-राख
मैं मिटी, किन्तु रही बाकी।
मैं एक सुराही मदिरा की।

इस जीवन में सबसे मिलना–जुलना क्षणिक हैं अन्ततः सभी को एकाकी रहना है। एकाकी जाना है। यह सुरा की सुराही है जो सबको आपस में मिलवाती है। सबके दुख–सुख की भागी बनकर इस संसार के निमित्त अपना जीवन देती है। मधुपायी तो आनन्द उठाते है और अपयश सुराही को मिलता है क्योंकि औरों का हित सोचना, परमार्थ सेवा करना यही उसकी हस्ती है।

अन्त में कवि कहता है कि जग ये समझता है कि सबने मदिरा का पान किया उसके हृदय की निकली यह कविता रक्त से लिखी गई है यह मदिरा की धार नहीं उसकी पीड़ा की अभिव्यक्ति रक्त की धार से लाल सुरा के रूप में सबके समक्ष आयी है। आत्मा में स्थित दुख को काव्य का रूप देकर अभिव्यक्ति मधुकाव्य में हुई है।

तुमने समझा मधुपान किया
मैंने निज रक्त प्रदान किया।
उर क्रन्दन करता थ मेरा,
पर मुख से मैंने गान किया।
मैंने पीड़ा को रूप दिया,
जग समझा मैंने कविता की,
मैं एक सुराही मदिरा की।

मधुशाला के गीतों के बाद बच्चन ने 'मधुबाला' के रूप में ऐसे रमणीय काव्य को प्रस्तुत किया जिसमें दिनानुदिन नवीनता का आभास मिलता है। इसे पढ़कर पाठकों और आनन्द प्राप्त हुआ 'मधुशाला' में मदिरा को ही प्रतीक मानकर रचनायें लिखी गई थी वहीं 'मधुबाला' में

'मधुशाला' से सम्बन्धित हर पात्र सुरा, सुराही, प्याला, मधुपायी, मालिक मधुशाला, पांच पुकार सभी प्रतीकों का साथ लेकर कविताएं लिखी। कवि के जीवन की तीव्र अनुभूतियों और संघर्षो ने कवि को इतना भाव प्रवण बना दिया है कि वह दृश्य–अदृश्य संसार की सभी चुनौतियों का सामना अपने काव्य से करता है अपनी हृदयानभूतियों को सर्जन में व्यक्त करता है।

मधु कलश

मधु कलश १६३५–३६ में लिखित 'मधुकलश' 'कवि की वासना' कवि की निराशा, कवि का गीत, पथ भ्रष्ट, कवि का उपहास, लहरों का निमन्त्रण, मेघदूत के प्रति आदि प्रसिद्धि प्राप्त कविताओं का संग्रह है। मधुकलश में कवि के अपने विचारों अपनी सत्ता को स्थिर रखने हेतु, मधुकलश की कवितायें रची हैं। उनका मधुकाव्य रंगों ध्वनियों का काव्य है।

इसमें कवि ने हृदय का शाश्वत मौन मुखरित हुआ है भावना की मुग्ध तन्मयता तथा व्यापक विश्व दर्शन दिखता है। यदि मिट्टी का प्याला काल रात्रि में अंधकार से निकलकर अवचेतन से चेतन बनने तथा कुम्भकार के निर्णय पर मिट्टी ले मधुपात्र बनने के अनिर्वचनीय आनन्द से छलक–छलक पड़ता है। मिट्टी के प्याले की जिजीवषा चेतना मृत्यु के बाद नवीन जीवन का अम्बार खोजने के लिये आतुर हो उठता है।

मधुकलश की यह रचना 'है आज मेरा जीवन मुझमें है आज भरी मेरी गागर' जीवन चेतना से युक्त कवि की अभिव्यक्ति है।

पल डयोढ़ी पर, पल आंगन में,
पल छज्जों और झरोखों से,
मैं क्यों न रहूँ, जब आने को मेरे,
मधु के प्रेमी

ईश्वर की करुणा है जो जीवन चेतना बनकर धरती पर आंख मिचौली खेलती है। वह करुणा प्रतीक्षा करती है कि मनुष्य उसका स्पर्श पांकर मुक्त हो।

भावों से ऐसा पूर्ण हृदय,
बातें भी मेरी साधारण
उर से उठकर मुख तक आते-आते,
बन जाती है गायन।

मधुकलश के ही कुछ ऐसे गीत 'तीर पर कैसे सकूँ मैं' पाठकों के साथ लहरों का

निमंत्रण पाकर जीवन सागर में तीव्र हाहाकार में कूदकर 'रस परिपूर्ण गायन' की खोज में कवि निकल पड़ा है। वह क्या जाने कि अमृत कलश की तरह के ही जीवन संघर्ष की ही गहराइयों में न छिपा हो। मधुकलश के ये गीत अत्यन्त मोहक आशाप्रद हैं।

मधुकलश में बच्चन ने अपनी आत्मा के संघर्ष एवं सभी गुत्थियों को पाठक के समक्ष कविता के रूप में प्रस्तुत पर दिया है।

वासना जब तीव्रतम थी,
बन गया था संयमी मैं,
है रही मेरी सुधा ही
सर्वदा आहार मेरा।
कह रहा जग वासनामय,
हो रहा उद्‌गार मेरा।

बच्चन जब अपने उद्‌गार एवं अपनी इच्छायें कविता के माध्यम से जग के समक्ष रखते हैं तब उन पर वासानमय उद्‌गार करने का आरोप लगता है। यह उनकी वासना नहीं साहित्य की क्षुधा है जो कांटे एवं दुख उन्होंने जीवन से प्राप्त किया उनको फूल बनाकर अपने काव्य में स्थान दिया। जब उन्हें शीतल छाया की आवश्यकता थी उस समय उन्हें दाहक अग्नि का विषपान करना पड़ा, जब भी भौतिकता एवं भव्यता भरे जीवन व्यतीत करने की इच्छा तीव्र हुई उस समय अल्प साधनों से ही अपना श्रंगार करके संतोष कर लिया। जब भावनायें उद्‌दाम वेग से प्रबल हो रहीं थीं उस समय संयम धारण किया। यही सारा वेग उद्‌गार बनकर काव्य में बह निकला जब जग उन्हें असंयमी भौतिकता वादी व वासनमय कहता है ये उनके जीवन के उद्‌गार हैं जिन्हें बेबाकी से वे 'मधुकलश' में कहते हैं –

मैं छिपाना जानता तो
जग मुझे साधु समझता,
शत्रु मेरा बन गया है
छल रहित व्यवहार मेरा।
कह रहा जग वासनामय
हो रहा उद्‌गार मेरा।

बच्चन अपने काव्य से अपनी सम्पूर्ण सत्यता व ईमानदारी के साथ जुड़े हैं वे भावनायें वर्जनायें छिपाना नहीं जानते साधु कहलाने का कोई मोह नहीं है इस संसार में यही

छलनारहित व्यवहार सबको शत्रु बना देता है। एक साधु अपनी सम्पूर्ण कामनायें इच्छायें मारकर या छिपाकर जग के समक्ष अपना नकली चेहरा लगाता है। संसार उसे महात्मा समझता है उसकी पूजा करता क्योंकि वह छल से अपना चरित्र छिपाये रखता है। वहीं बच्चन अपना समस्त अन्तर अपनी इच्छायें संसार को बता देते हैं। अभिव्यक्ति की ईमानदारी उन्हें एक सच्चा कवि बनाये रहती है।

मधुकाव्य की रचना के समय बच्चन जी अपने आपको आश्चर्य लोक के संसार में पाते हैं उन रचनाओं में वही आश्चर्य उन्माद व आवेग एवं उत्फुल्लता समायी है। मधुकाव्य के अन्त तक आते–आते वही उल्लास एवं आवेग निराश व हताशा में परिवर्तित हुआ है जीवन क्रम के अनुसार एक दिन सभी कुछ समाप्त प्राय होना है। 'मधुशाला' भी टूटनी है। 'मधुबाला' भी जरावस्था को प्राप्त होगी वही निराशा अन्त में निशा निमंत्रण में आगे चलकर कवि ने व्यक्त की।

दो दौर न चल पाये थे
इस तृष्णा के आंगन में,
डूबा मदिरालय सारा
मतवालों के क्रन्दन में।
यमदूत द्वारा पर आया,
ले चलने को परवाना

(मधुबाला से)

हिन्दी साहित्य जगत में बच्चन के मधुकाव्य का मधुविस्फोट एक उन्माद की तरह काफी समय तक छाया रहा है। 'हालावाद' का यह वाद कई वाद विवादों को पार करते हुए भी उसी मदिरा की समाधि में तल्लीन रहा। मधुकाव्य नवयौवन की उन्मादनी अवस्था की अभिव्यक्ति का बिम्ब है। मधुकाव्य में जहां भावनात्मक संवेदना है वहीं दर्शन और अध्यात्म व ज्ञान भी है।

बच्चन का मधुकाव्य अर्थात् लाल रंग की सुरा प्रतीक उनकी वह वासना है जो हर दर पर अतृप्त–कुपित एक ऐसी ज्वाला में परिवर्तित हो गई है जिसमें उनके हृदय को दग्ध कर उससे कविता की अभिव्यक्ति कराई है, और साकियों के रूप में उनकी एक–एक विगत स्मृति को एक–एक रूबाई में, जैसे एक के बाद एक आने वाले प्याले में अपने जीवन की अनुभूतियों, आकांक्षाओं, कल्पनाओं को मुखरित किया है।

हालावादी अभिव्यक्ति

मदिरा की धार, साकी, प्याले में अपनी अभिव्यक्ति करने वाले बच्चन हालावादी काव्य की परम्परा को अपने मद की चरम सीमा तक ले जाते हैं। उन पर हालावादी होने का आरोप लगा, उन्हें मधु काव्या का रसिक मतवाला कहा गया लेकिन अभी हाला में छिपी उनकी हृदय की अभिव्यक्तियां बहुत कम ही आलोचक समझ सके। बच्चन ने जीवन की कहानी उसके उतार–चढ़ाव, व्यथा–कथा सभी कुछ मदिरा की धार के प्रतीक में कह डाला है उनका आशय यह है कि मनुष्य का अपनी तृष्णा, मोह से इतना प्रबल रिश्ता है कि उसको मदिरा से तेज नशा माया मोह का है तब मेरी मदिरा ही जग में दोषी क्यों हो, मेरा मधुकाव्य तो सम्पूर्ण विश्व की इच्छाओं का कलश है जिसमें मैंने मानव की अशांति उसके स्वप्नों का गायन मदिरा के रूप में भर दिया है और यह गीत मैं तब तक गाता रहूंगा, चिरकाल काल तक गाता रहूंगा जब जीवन का संघर्ष व प्रणय एक नहीं हो जाते क्योंकि जहां प्रेम है वहां संषर्घ है दोनों एक साथ नहीं रह सकते हर युग में ये मदिरा प्रेमी और संघर्ष दोनों को जोड़ती है। प्रेम की दुनिया में जीवन की अपूर्णता भूल जाओ क्योंकि वह मादकता नहीं है जिसमें रहकर जग का ध्यान किया जा सके। मधुकाव्य बच्चन के हृदय में बैठी हुई एकता की भावना, बंधुत्व के प्रेम सर्मपण एवं सहयोग की अभिव्यक्ति है एक आत्मा से दूसरी आत्मा के प्रेम एवं विश्वास की धार है –

गाउंगा, जब तक एक नहीं
होकर मिलते संघर्ष-प्रणय।
तेरा-मेरा संबध यही
तू मधुमय 'औ' मैं तृषित-हृदय।

हलाहल

'हलाहल' १९४६ में लिखी गयी है। 'हालाहल' में बच्चन की जीवन के प्रति अभिव्यक्ति दृष्टिगत होती है। मधुशाला का पान करने वाला पाठक 'हलाहल' से कैसे विलग रह सकता है। हलाहल में कवि ने जीवन के कठोर रेगिस्तान की यात्रा करवायी है। कवि के लिये जीवन एक मद का प्याला नहीं वरन 'हाला' की ज्वाला है जिसमें एक दिन सभी को तपना है। सुख के परम रूप को प्राप्त करने के लिये हलाहल से होकर ही गुजरना होगा। सुख की अनुभूति के पश्चात् व्यक्ति दुख को कठिनता से आत्मसात् कर पाता है। उसी दुख को आत्मसात् करने हेतु बच्चन जी ने व्यक्ति का आह्वान किया है यथा –

सुरा को चख लेने के बाद
कठिन हलाहल से अनुराग।
किया था मधु पाने का यत्न
हलाहल आया अपने आप।

मोहवश व्यक्ति सुख का साथ नहीं छोड़ना चाहता है लेकिन यदि जीवन में विषपान नहीं किया है जिसने, वह संसार की व्याखा कैसे कर सकता है दो घूंट हलाहल जिसके कंठ में नहीं पड़ा वह जीवन का स्वाद किस प्रकार बतायेगा। मदिरा पान करने के लिये तो सम्पूर्ण संसार साथ है किन्तु हलाहल तो स्वयं ही पान करना है –

सुरा पीने को थी बाजार
हलाहल पीने को एकांत।

हलाहल में बच्चन ने जीवन के प्रति अपनी विचारधारा बहुत ही गूढ़ एवं विरोधाभास से पूर्ण व्यक्त की है। आशा–निराशा, दिवा–निशि, का समन्वय है ये जीवन जहां मृत्यु एवं जीवन के बीच एक मदिरा की कल्पित रेखा है इसी कल्पना में व्यक्ति जीवित रहता है। वह अपना हलाहल का भाग विस्मृत कर देता है और तमाम भौतिक साधनों का उपभोग करना चाहता है। अधिकारों का वरण एवं कर्तव्यों के प्रति उदासीन रहता है हलाहल में कवि ने उन्हीं कर्तव्यों के पथ के लिये प्रेरित किया है। कवि के अनुसार जीवन–

कि जीवन आशा का उल्लास
कि जीवन आशा का उपहास
कि जीवन आशामय उद्गार

कि जीवन आशाहीन पुकार।

जीवन की क्षणभंगुरता एवं नश्वरता में अमरता का संदेश देती बच्चन जी की यह रचना जिसमें उन्होंने जीवन के आध्यात्म का चित्रण किया रहस्यवादिता है दर्शन है, गीता के उपदेशों का सार है, वैदिक ऋचाओं की शुचिता है। कवि प्रकृति के परिवर्तन एवं कालचक्र की व्याख्या करता है कि इस संसार में प्रत्येक वस्तु जड़–चेतन सभी नश्वर है। जो आज उदीप्त है वह कल अस्त है –

कभी घोषित होते थे रोज
जहां से शाहों के फरमान।
स्वयं आंखों से आया देख
वहां रोया करते है श्वान।

मृत्यु के प्रलयकारी रूप से अभय होना चाहता है कवि। अमरत्व निर्भीकता है हलाहल का पान करने वाला अमरता को प्राप्त करता हे। मुक्ति की महिमा को पंडित करने के लिये सभी मोहों से स्वयं को मुक्त करना होगा।

बच्चन जी का यह काव्य संग्रह उनके जीवन का भोगा हुआ काव्य है, उन्होंने आत्मकथा में स्वयं लिखा है कि **'काव्य को जीना ज्यादा दुष्कर है'** अपनी प्रथम प्रेयसी, जीवन संगनी श्यामा की मृत्यु को उन्होंने स्वयं भोगा किया एवं 'हलाहल' का पान करने पर उनकी लेखनी से स्वयं जीवन का दर्शन, दुख की अभिव्यक्ति एवं अतःकरण का करूण क्रन्दन, आत्मा की काव्यरूप में अभिव्यक्ति गुंजित हो उठी है जिसमें बच्चन जी का कवित्व रूप ज्योर्तिवान हुआ है।

बच्चन ने हलाहल की आरंभ की पंक्तियों में जीवन के सुख में पक्ष को नारी के प्रणय एवं पुरूषत्व के अभिमान की व्याख्या है मदिरा की धार में नारीत्व का पूर्ण आर्कषण है सुखों की निधि है, जीवन का प्रफुल्लित पक्ष है, रहस्य है, यह संसार नारी ही है किन्तु दुख है, वियोग प्रणय का दूसरा पहलू है विरह जिससे पुरूष विलग रहना चाहता है, मृत्यु से भयाक्रान्त है। यदि संसार (नारी) इतने रसों से पूर्ण न होता मदिरा में वह आर्कषण न होता तो व्यक्ति (पुरूष) कब का इस संसार से विदा ले चुका होता। स्वयं मृत्यु का वरण करता। जीवन सम्पर्ण आर्कषण एवं बाह्ृ आडम्बरों से युक्त नवीन आशाओं एवं उमंगों तरंगों से ओत–प्रोत है यही मोह मृत्यु को और ज्यादा दुष्कर एवं वीभत्स बना देता है। जीवन के इन्हीं सुखों का उपयोग करने हेतु प्राणी बारम्बार मृत्यु रूपी हलाहल पीता है। नहीं तो –

नहीं तो कब का देता तोड़
पुरूष विष-घट यह ठोकर मार,
इसी मधु का लेने को स्वाद
हलाहल पी जाता संसार।

सुखों की गहन धारा में डूबा हुआ प्राणी स्वयं ही विरक्त हो जाता है तथा दुख की पदचापों से अनभिज्ञ रहता है संसार में रहकर सत्कर्मो को विस्मृत कर दुष्कर्मो की ओर भी मुखरित हो जाता है। माया मोह के झीने कपाटों से वह यर्थाथ जीवन की कटु विसंगतियों पर दृष्टिपात नहीं कर पाता न ही उसके विषय में चिन्त करता है वहीं यर्थात अचानक सुखानुभूति के क्षणों में तुषरापात करता है जिसके स्वागत को वह तैयार नहीं है। कवि सचेत करता है कि तुझे मृत्यु का स्वागत करना है समय के बंधन से स्वच्छन्द होकर कल्पना लोक में विचरण करना मानव आत्मकेन्द्रित हो अहम् की तुष्टि में लीन हो जाता है तथा चराचर जगत के प्रकृति परिवर्तन से आंखें मूंदे रहता है हलाहल का जो भाग है उसे भी आत्मसात् करता है।

बच्चन ने अपने जीवन के उन मार्मिक पलों में मृत्यु की पीड़ा को बहुत सानिध्य से अनुभव किया था मृत्यु के रूप का अवलोकन किया अपने प्रियजन की पीड़ा को अपने हृदय में लवलीन कर मृत्यु की विरोधावासी प्रकृति संरचना पर चिन्तन किया मनन किया। मृत्यु जो उनकी पत्नी के लिये एक पीड़ा, छटपटाहट बेबसी की अंधकारमय काली प्रतिछाया थी, जिसका वरण करना उनके नश्वर काया के लिये आवश्यक था। मृत्युः हाँ मृत्यु का एक और दिव्य रूप भी उनके समक्ष प्रस्तुत हुआ। जिसमें मुक्ति थी, नव जीवन का संदेश था, आत्मा की प्रफुल्लता थी, देवलोक का ज्येर्तिवान प्रकाश पुंज था, ये मृत्यु थी। उनकी माँ की जिसने मृत्यु के उज्जवल पक्ष की व्याख्या की इसी मृत्यु के स्वागतार्थ शरीर अपने पंचतत्वों को द्वार पर लिये प्रतीक्षा कर रहा था इस प्रतीक्षा में कोई मोह नहीं था, कोई बन्धन नहीं था, सांसारिक तृष्णा नहीं थी। 'हलाहल' की प्रेरणा मृत्यु के इन्हीं रूपों से प्राप्त हुई। इन्हीं रसों के मंथन से जो नवीन रस की उत्पत्ति बच्चन जी की लेखनी से हुई वह 'हलाहल' है।

मृत्यु से पलायन तो उसका भयभीत पक्ष प्रस्तुत करता है जिसप्रकार हम संसार में जीवन से पलायन नहीं कर सकते उसी प्रकार मृत्यु से पलायन नहीं किया जा सकता क्यों न उसे जीवन के साथ ही भोगा जाये तभी उसकी समुचित व्याख्या हो सकेगी। परिवर्तन के कालचक्र में हर पल अचल नश्वर है अमरता का सिर्फ भ्रम है विशाल राजप्रसाद

महल गगनचुम्बी अट्टालिकायें कालकवलित होती है। वर्तमान यौवन भविष्य की जरावस्था है। यही रहस्य है, आध्यात्म है, दर्शन है।

हलाहल में बच्चन जी की भाषा सरल, सरस एवं प्रवाहयुक्त है रूपकों का प्रयोग खुलकर किया है। सटीक उपमा एवं उपमानों से पाठक हलाहल को पढ़ने में सरलता अनुभव करता है। ऐतिहासिक प्रेम कथाओं एवं राज्य वैभव का उदाहरण देकार बच्चन हलाहल में यह अभिव्यक्त करना चाहते हैं कि नश्वरता प्रकृति के कण–कण में व्याप्त है अमरत्व सिर्फ प्रलय एवं नाश में है जो अक्षुण्ण है, हलाहल ही सत्य है या सत्य ही विष है। कल्पनाओं के मिथ्या आचरणों में जीवन व्यतीत करने वाले स्वार्थी तत्व हलाहल की मधुरता से वंचित रह जाते हैं। भारतीय दर्शन की मिथ्या धारण को भी बच्चन ने अपनी लेखनी से इंगित किया है। व्यक्ति संसार में रहकर सभी कर्म एवं दुष्कर्म संपादित करता है कि एक दिन वह स्वर्गवासी बनेगा या मरणोपरान्त देवत्व में ही विलीन होगा बच्चन की सोच इसके विपरीत है–

कि मरने वालों का अनुमान
मरने वाला है भगवान।

जिन्हें स्वयं मृत्यु को प्राप्त होना है वही ये विश्वास करते हुए जीवित रहते हैं कि मरने वाला ईश्वर है जबकि ईश्वर तो अमर है।

हलाहल बच्चन की उस मनःस्थिति की रचना है। मरण को कवि एक सत्य के रूप में स्वीकारता है। जैसे 'हाला' जीवन का प्रतीक है हलाहल मरण का प्रतीक बनकर बच्चन के मन में उदय हुआ।

भृत्य के सामने मृत्यु एक अनबूझी पहेली रही है। संसार का संभवतः आधा दर्शन, अध्यात्म, काव्य मृत्यु से ही सम्बद्ध है। मृत्यु कवि की शुरू से ही चिन्ता का विषय रही है। मृत्यु पूर्ण मरण अथवा अमरत्व की यात्रा की एक मंजिल – इसके बीच मनुष्य का सारा चिन्तन भटकता रहा है व्यक्ति कौन है। वह ठीक राह देख सके या न देख सके यही बात हलाहल में व्यक्त की गई है। रागात्मक ढ़ंग से काव्य कला में इस चिंता का समाधान हलाहल में करने की कोशिश की गई है। कभी वह समाधान परिधि को छूने तक सीमित रहता है कभी वह केन्द्र तक बैठ सकता है कभी बीच में ही कहीं ठहर जाता है। अमरत्व तो तभी सिद्ध होगा जब मरण के पार भी जीवन हो। पर उसे कौन देखेगा। इस पार अमरत्व का इतना ही सबूत है कि मनुष्य मरण को निर्भय स्वीकार करे।

जो अमर है वह मरण से भयभीत नहीं है, अमरत्व वस्तु सत्य व्यक्ति है, यह व्यक्ति का गुण नहीं उसकी साधना है, उसकी उपलब्धि है। इसी प्रकार 'हलाहल' के रागात्मक झरोखे से सृजन, सौन्दर्य प्रेम, आनन्द, समर्पण, आदि उदात्त मानवीय गुणों की झांकी दिखाई है। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' का जो संघर्ष बच्चन काव्य व जीवन में झेला था उसी का दूसरा पहलू 'मृत्युमा अमृतं गमय' के संघर्ष का है उस संघर्ष में कवि विजयी होकर निकले है या नहीं ये अलग तत्व है पर कवि की सत्ता में निहित रागतत्व ने 'हलाहल' में निश्चय ही मृत्यु से वह समझौता कर लिया है जिसमें उसका गौरव और मान अक्षुण्ण रहा है और मृत्यु भी अपने भाग से वंचित नहीं रखी गई। बच्चन कहते हैं कि मृत्यु पर पूर्ण विजय प्राप्त करने का कार्य तो योगियों का है कवियों का नहीं। कवि की विजय तो वहां है जब कविता उसके लिये मिट जाये जब वह कविता से मुक्त हो जाये – तभी तो कवि कह उठता है –

पहुँच तेरे अधरों के पास
हलाहल कांप रहा है देख,
मृत्यु के मुख के ऊपर दौड़
गई है सहसा भय की रेख।

मरण या भय के अन्दर व्याप्त
हुआ निर्भय तो विष निस्तत्व,
स्वयं हो जाने को है सिद्ध
हलाहल से तेरा अमरत्व।

विष का प्रभाव सम्भवतः मधु से अधिक तीव्र होता है या स्वाद शक्ति को इतना विकृत कर देता है कि उसके उपरान्त कोई रस अच्छा नहीं लगता। बच्चन को हलाहल के इसी तिक्त स्वाद ने मधु की भांति मोहित किया और उन्होंने हलाहल की रचना कर डाली। बच्चन अपने काव्य रूप में उसी में समाये हुये हैं।

जीवन के सम्पूर्ण नाश में जीवन का अदम्य स्वर कैसे उभर कर आता है यही हलाहल में उदधृत है। मृत्यु की काली चट्टान पर ही जन्म का अंकुर फूटता है। महाकाय अंधकार में किरण दिखती है, जीवन शाश्वत है, नश्वर है, वह निर्माण है, मनुष्य को पराजय नहीं स्वीकार करना चाहिए संसार से, मृत्यु से, इसीलिए बच्चन हलाहल में कहते हैं –

गरलपान कर तू बैठा

विष का स्वाद बताना होगा।

मृत्यु की काली छाया में मनुष्य को गुनगुनाना चाहिए।

'हलाहल' के सम्बन्ध में बच्चन ने आत्माभिव्यक्ति को है – अपने एक साक्षात्कार में व्यक्त किया है –

'हलाहल मेरी अत्यन्त प्रिय और आत्मीय कृतियों में से है। मैं सम्भवतः सबसे अधिक उसी में हूँ .... जीवन के सम्पूर्ण नाश में से सृजन की अदम्य स्वर कैसे उभर आता है यही - 'हलाहल' की प्रेरणा और भावभूमि है। मैं यह मानता हूँ कि मृत्यु की काली चट्टान पर ही जन्म का अंकुर फूटता है। महाकाय अंधकार में भी किरण के मेंहदी रचे हाथ झांक आते हैं। जीवन शाश्वत है और नश्वर है, वह सृजन जो जीवन को जीवन बनाये हुए है। मनुष्य को पराजय स्वीकर नहीं करनी है। संहार से, मृत्यु से। इसीलिये मैंने उसे ललकारा है'।

मदिरा पान करने के उपरान्त अब विष का स्वाद भी बताना होगा। 'हलाहल' की यही अभिव्यक्ति बच्चन ने एकांत संगीत की इन पंक्तियों में की है –

विष का स्वाद बताना होगा,
ढ़ाली थी मदिरा की प्याली।
चूसी थी अधरों की लाली,
कालकूट आने वाला अब
देख नहीं घबराना होगा।

इसी 'कालकूट' की अभिव्यक्ति बच्चन की इस रचना 'हलाहल' में हुई है।

बच्चन ने हलाहल के अनेक पदों मे अपनी रागात्मकता के झरोखे से सृजन, सौन्दर्य प्रेम आनन्द सर्मपण आदि उदात्त मानवीय गुणों में अमरत्व की झांकी प्रस्तुत की है। कवि की सत्ता में, निहित राग तत्व ने 'हलाहल' में मृत्यु से वह संधि, समझौता कर लिया जिसमें उसका गौरव और मन अक्षुण्ण रहा है। हलाहल की भावभूमि है जीवन के सम्पूर्णनाश में सृजन का अदम्य स्वर। जीवन का सम्पूण नाश ही उनकी प्रेरणा बना मृत्यु की काली चट्टान पर जन्म का अंकुर फूटा तथा महाकाय अंधकार में किरणें फूटती है। सृजन ही जीवन को जीवन बनाये हुये हैं। कला ही मृत्यु त्रस्त मानव, के लिये एक मात्र त्राण है। बच्चन की काव्य कला एवं प्रेरणा की सफल अभिव्यक्ति हलाहल है।

बच्चन की आत्माभिव्यक्ति पत्रों में

साहित्य आत्माभिव्यक्ति का संयमित व सीमाओं में बंधा माध्यम है। जिसमें साहित्यकार अपने मनोद्गार समस्त जगत के समक्ष प्रस्तुत करता है किन्तु पत्र आत्माभिव्यक्ति का एक ऐसा माध्यम है जो पूर्ण रूप से स्वतन्त्र व असीमित है व्यक्ति एक व्यक्ति को पत्र लिखता है तब वह कोई सीमा में नहीं बंधा होता है अपने विचारों व सम्बन्धों की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति कर डालता है वह उसकी सच्ची आत्माभिव्यक्ति हो सकती है क्योंकि वह उसके लिये पाठाकों व अन्य किसी के प्रति जवाबदेह नहीं होता। पत्रों में वह गद्य के माध्यम से अपनी बात कह सकता है। कविता के द्वारा भी विचार प्रगट कर सकता है कहानी का रूप भी उसका पत्र हो सकता है। हिन्दी साहित्य में साहित्यकारों ने अपनी लेखनी पत्रों पर भी बहुत चलाई है किसी भी साहित्यकार का एक–एक पत्र शायद उसकी एक–एक कविता से भी अमूल्य हो सकता है। पत्रों की भाषा बड़ी सहज होती है लेकिन प्रभाव बहुत असहज छोड़ती है बच्चने ने भी पत्रों में अपने विचार प्रगट किये हैं।

यदि उनकी आत्माभिव्यक्ति की एक और झलक देखनी हो तो उनके द्वारा लिखे गये पत्र देखने होंगे जो प्रकाशित हुए जिनमें गम्भीर से गम्भीर विषयों का भी वर्णन है व सरल सीधे विषयों पर भी लेखनी चली है। बच्चन के पत्र अधिकांश तो सुमित्रानन्दन पन्त जी को लिखे गये थे उनमें प्रकाशित भी हुए विवाद भी हुआ लेकिन यह बात सच है कि वे पत्र हिन्दी साहित्य की आज भी धरोहर हैं।

बच्चन जितने संवेदनशील काव्य में हैं उतने ही पत्रों में भी हैं उन्होंने अपनी आत्मकथा में जिक्र किया है कि वे पत्रों के उत्तर देने में वे अति प्रसन्न होते हैं वा स्वयं भी उन्हें पत्र लिखना अच्छा लगता है क्योंकि इसमें ही वह अपने आपको और प्रगट कर सकते है। अपने जीवनकाल में उन्होंने हजारों पत्र लिखे व उन पत्रों पर भी लिखा। उनकी आत्माभिव्यक्ति तो पत्रों में समाहित है यदि आत्माभिव्यक्ति का अवलोकन करना है तो उनके पत्रों को पढ़ना अवश्यांभी होगा।

दुख–शोक चिन्तायें हर मानव के जीवन का अंग है। उन्हें वह अपने आत्मजनों से बांटता है दूर करता है व कारण ढूंड़ता है व समाधान करता है। आत्मीय जन बहुत दूर

रहते हुऐ भी पत्रों के द्वारा कभी कठिन से कठिन समस्या का समाधान भी कर देते हैं इन्हीं पत्रों के द्वारा अपने विचार प्रगट करते हैं, अतः आत्माभिव्यक्ति का एक सुन्दर व सशक्त आदान प्रदान ये पत्र हैं बच्चन ने भी अपने जीवन में विचारों के आदान–प्रदान में पत्रों को एक महत्वपूर्ण स्थान दिया है उन्हें अपनी लेखनी से कला में बदल दिया है अपने पत्रों को आस्वादन का विषय बताया है। जब सृजन की कोई योजना उनके मन में नहीं भी होती तब उनके पत्र ही उनका सृजन बन जाते उसकी एक–एक पंक्ति सृजन बन जाती है उन पत्रों की अनुभूति जब दूसरे व्यक्ति तक पहुंचती है वह भी इस सृजनपथ में उनके साथ हो जाता है जैसे कि पन्त काफी समय तक उनकी इस सृजन यात्रा में उनकी साथ रहे। जीवन प्रकाश जोशी जी तो बच्चन के पत्रों के सम्पादन में उनकी अनुभूतियों के साथ काफी समय तक जुड़े रहे।। उनका सम्पादन कार्य बच्चन के पत्रों की प्रेरण से सम्पन्न हुआ उन्होंने अपनी पुस्तक में इन प्रेरक सृजन क्षणों का उल्लेख भी किया है।

पत्रों में बच्चन का आत्माभिव्यक्ति की सृजन सीमा वैचारिक व मानसिक उद्‌गारों तक ही सीमित नहीं रही जीवन की कठिन–समतल व ठोस समस्याओं के साथ संघर्ष के क्षणों की झांकी भी प्रस्तुत की। पत्रों में वे बड़े सहज होते हैं न उनमें उनके कवि व साहित्यकार होने की कोई लोकप्रियता प्राप्त करने की कामना होती है न लोकप्रियता से मिली प्रसन्नता का दम्भ होता है। सबको वे बड़े सामान्य ढ़ंग से लेते हैं। पत्रों में वे सिर्फ एक सामाजिक व्यक्ति होते हैं कभी परम्पराओं से बंधे, कभी रिश्तों से बंधे कभी मित्रता से बंधे लोकाचार कीसामन्य बातें कभी उनके पत्रों का विषय होती हैं या फिर कभी कविता की कल्पनाओं में उड़ता हुआ कवि मन पत्रों में भी अपनी वही मदभरी प्याली उड़ेलने लगता है जो मधुशाला में मिलती हैं बच्चन ने पत्रों की यही भिन्न–भिन्न शैलियों तत्‌कालीन वातावरण व उनके आस–पास के परिवेश को व्यक्त करती हैं। बच्चन के अर्न्तजगत के द्वार उनके द्वारा लिखे पत्रों से खुलते हैं। प्रकाशित पत्रों के द्वारा पाठक उनकी आत्माभिव्यक्ति के सोपानों को तय कर सकते हैं। इस शोध ग्रन्थ में कवि उनके कुछ पत्रों की झलक से उनकी आत्माभिव्यक्ति तक पहुंचने की कोशिश की है।

बच्चन ने अपना आत्मचित्रण अपनी स्मृति के आधार पर किया व आत्मकथा लिखी हम उनके पत्रों की स्मृति के आधार पर उनका आत्मचित्रण करने की कोशिश करते हैं घटनायें व परिस्थितियों उनके अनुसार मन के भावों की अभिव्यक्ति पत्रों में सहज हो जाती है। मानवीय सम्बन्धों का चित्रण स्वयं ही पत्रों में मुखरित है।

बच्चन के पत्र उनकी साहित्यिक कृतियां हैं – बच्चन ने अपने आप को अभिव्यक्त करते हुए वैचारिक व मानसिक सृजन की कभी उपेक्षा नहीं की, सिर्फ लिखने के लिये ही उन्होंने साहित्य नहीं रचा यह पत्र नहीं लिखें बल्कि जीवन जीने के लिये सृजन किया। सर्वदा ठोस समस्याओं से जूझते हुए वे लिखते रहें अपनी आत्मा पर जो भी भार आया उसे उठाकर लेखनी चलायी है। कई दशकों के लेखन ने उनके सृजन की सीमा बना दी है इसी सीमा में वे अपना सब कुछ व्यक्त कर डालते हैं अपने सहृदय मित्रों को पत्रों में यही जीवन का भार, आत्मा का भार बांटते हैं।

अपने सहज स्वाभाविक सृजन से आत्म स्वीकृति व आत्माभिव्यक्ति पत्रों में समाहित की है। आपको काव्य के समान की लोकस्वीकृति व लोकप्रियाता पत्रों पर भी मिली है। उनके प्रकाशित पत्रों के अंशों का अवलोकन कर लेने पर उनकी आत्माभिव्यक्ति समझ सकते हैं। अपनी मनःस्थिति शब्दों के माध्यम से पत्रों में अंकित कर दी है जिन्हें समझने की दृष्टि है वे निर्णय कर सकते हैं कि बच्चन की आत्मा क्या कहना चाह रही है क्योंकि स्वयं वे अपने आप पर कभी संतृष्ट नहीं होते हैं यही असंतोष ही सृजन पथ पर उनको और आगे ले गया यदि सर्जक अपनी रचना से जिस दिन संतुष्ट हो जायेगा उस दिन वह सर्जक नहीं रह पायेगा उसके साहित्य का विकास अवरूद्ध हो जायेगा। बच्चन भी सर्जक की भांति अनन्तकाल तक सृजन करना चाहते हैं। वे अपने द्वारा लिखे पंत जी के पत्रों के विषय में स्वयं कहते हैं कि –

'पंत जी से मेरी ३० बरस की मैत्री थी, जिस अवधि में उन्होंने मुझे लगभग ७०० पत्र लिखे थे। मेरा अनुमान है कि मित्रता के स्तर पर इतने पत्र न तो पंत जी ने किसी और को लिखे होंगे और न मैंने प्रायः उतने ही किसी और को। मैंने उनके हर पत्र को सुरक्षित रखा था - यह मानकर कि पंत ऐसे सृजक को समझने की आवश्यकता भविष्य समझेगा और उनके पत्रों के द्वारा उनके चरित्र का तक बड़ा स्वाभाविक और सच्चा रूप उद्‌घाटित हो सकेगा।'

अपने पत्रों में बच्चन अपने मित्रों आत्मीय जनों की अपनी भावनाओं, अपने दुखों एवं अपने जीवन संघर्षों से अवगत कराते हैं। बच्चन पत्रों में उतने ही भावुक व संवेदनशील हैं – जितने अपने मधुर काव्यों में। 'सतरंगनी' के परिशिष्ट में उनके बनारसीदास चर्तुवेदी जी को लिखे पत्र प्रकाशित हुए – जिनमें उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति की प्रेरणा एवं कविता 'नीड़ का निर्माण' लिखने की प्रेरणा कहां से मिली यह उद्‌घाटित

किया है — उस पत्र के कुछ अंश प्रस्तुत हैं —

आदरणीय चतुर्वेदी जी,

आपका अ...... तिथि पत्र मिला।

....

मेरी पत्नी का देहावसान हुए पांच वर्ष से उपर हो गये थे। मेरे भावना संसार की और भी मूर्तियां इस बीच ध्वस्त हो गई थी। 'निशा निमन्त्रण', 'एकांत संगीत', 'आकुल अंतर' में उन दिनों की मनःस्थिति के बहुत से चित्र मिलेंगे। पर अब जीवन मुझे फिर पुकार रहा था। वैसे नाश, विषाद और निराश की घड़ियों में रोदन-क्रन्दन करते हुए भी मैं प्रकाश ही पाने को आतुर था। पर अब लग रहा था वह क्षण, वह ज्योति अपने आप ही न चली आयेगी, उसे लाना होगा। इसके पूर्व मैं लिख चुका था - 'जो बीत गई सो बात गई' इसके बाद जो अपने वाला है या जिसको लाना है, उसका मैं स्वप्न देखने लगा।

प्रेरणा का आधार एक चिड़िया थी। ८-ए बेली रोड की छत खुली हुई थी। गरमी की रातों में मैं छत पर ही सोता था, गो मकान के आगे-पीछे भी खुली जगह थी। गरमी के दिनों में प्रयाग में आंधियां बहुत आती हैं। उस साल भी बहुत आयी छत से डा. रंजन के कम्पाउंड में लगा एक युकलिप्टिस का पेड़ दिखाई देता था। ८-ए बेली रोड़ का बंगला भी डं० रंजन का ही है और उनके बंगले से मिला है। इसे उन्होंने हम लोगों को किराये पर उठा रखा था। उस पेड़ की धुर उंचाई पर एक चिड़िया घोंसला बना रही थी। जब-जब आंधी आती उस घोंसले के तिनके-तिनके उड़ जाते और मैं देखता कि एक दो रोज में वह फिर उस घोंसले को तैयार कर देती। फिर आंधी आती और वह फिर उड़ जाता और चिड़िया फिर घोंसला बनाती। अंत में आंधी हारी और चिड़िया जीती। यह घटना मेरे गीत की मुख्य प्रेरणा थी। घोंसले का रूपक मुझे पहले भी प्रभावित कर चुका था। निशा निमंत्रण में मैंने लिखा था - 'लुट गये मेरे सलोने नीड़ के तृण पात साथी'। अब मैंने लिखा, 'नीड़ का निर्माण फिर-फिर'।

.... आशा है इससे आपकी जिज्ञासा शांत होगी।

तो आपको 'मधुशाला' में अब भी ताजगी मिली। शराब तो जितनी पुरानी

होती है, उतनी ही नशीली होती है। 'मधुशाला' की बढ़ती लोकप्रियता पर मैंने एक रूबाई लिखी है शायद आपको पसन्द आये।

बहुतों के सिर चार दिनों तक
चढ़कर उतर गई हाला,
बहुतों के हाथों में दो दिन
छलक-झलक रीता प्याला
पर बढ़ती तासीर सुधा की
साथ समय के, इससे ही
और पुरानी होकर मेरी
और नशीली 'मधुशाला'।

समाप्त करता हूँ। आज्ञानुसार 'नीड़ का निर्माण फिर' लाल स्याही से लिखकर भेज रहा हूँ।

सप्रणाम।

आपका विनीत
बच्चन

उपरोक्त पत्र बच्चन को सृजन की प्रेरणा कहां से मिलती है इस बात की पुष्टि करता है पत्रों में वे वही विचार प्रस्तुत करते हैं जो स्वाभाविक, अन्तर दशाओं का यर्थाथ चित्रण हो।

बच्चन के पत्र व्यक्तिगत होते हुए भी साहित्य, समाज राजनीति अर्थनीति आदि विषयों पर अपने विचार प्रगट कर जाते हैं। उनके पत्र से प्रस्तुत अंश में उनके ये विचार देखने को मिलते हैं –

साहित्यिक पत्र पत्रिकाओं -संस्थाओं की पीछे गुप्त रीति से राजनीतिक पत्र काम कर रहे हैं प्रायः राजनीति के विकार से साहित्य को कुरूप होना पड़ता है। फिर भी मेरा विश्वास है कि साहित्य के दूध में विष नहीं घोला जा सकता।'

प्रस्तुत अंश 'बच्चन के विशिष्ट पत्र' जिसका सम्पादन चन्द्रदेव सिंह जी ने किया है, से उद्धृत है। जिसमें बच्चन ने कितनी उच्चकोटि की बात की है कि 'साहित्य के दूध

ा में राजनीति का विष नहीं घोला जा सकता' इससे यह स्पष्ट है कि बच्चन राजनीति के दूषित वातावरण से कितने क्षुब्ध थे में वे साहित्य जैसी निष्कलंक धवल सरस्वती की अराधना के मंदिर में राजनीति रूपी कपटी को सहन नहीं कर सकते। जो लोग साहित्य क्षेत्र में रहते हुए राजनीति की कुचक्री चालें चल रहे थे उनको बच्चन की एक चेतावनी है उनके मन की भड़ास है जिसे उन्होंने अपने मित्र चन्द्रदेव सिंह के साथ पत्रों में बांट दिया।

बच्चन के विशिष्ट पत्र –

उपरोक्त पुस्तक से बच्चन के हृदय की संवेदना व उनकी विशालता का प्रमाण मिलता है। २ वर्षो में चन्द्रदेव सिंह जी को उन्होंने २५० पत्र लिखे जिसे धरोहर के रूप में उन्होंने सुरक्षित रखा व प्रकाशित करवाया इन पत्रों के प्रकाशन से बच्चन की आत्माभिव्यक्ति पर शोध कार्य करना और सुगम हो जाता है क्योंकि उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को झांकने का एक और अवसर पाठकों को उनकी आत्मकथा प्रकाशित होने के पूर्व ही मिल गया था। चन्द्रदेव सिंह पुस्तक की भूमिका में लिखते हैं कि –

मुझे स्वयं आश्चर्य है कि उनकी पहली चिट्ठी से लेकर आज तक के पत्रों को मैं कैसे सुरक्षित रख सका हूँ। कवि २८ वर्षो की अवधि में एकत्र २५० पत्रों में एक सौ पत्रों को यहां देते हुए गुझे विश्वास है कि इनके द्वारा बच्चन के व्यक्तिगत जीवन के अतिरिक्त उनके विचारों, सिद्धांतों, अनुभूतियों और विभिन्न प्रतिक्रियाओं का एक परिचय पाठकों को अवश्य मिल जायेगा। ये पत्र मात्र बच्चन जी के व्यक्ति और कवि को ही समझने में सहायक नहीं है बल्कि युग जनित स्थितियों के प्रति उनके मनोभावों के प्रचारक भी।'

चन्द्रदेव सिंह जी से बच्चन का पत्र व्यवहार काफी अरसे तक रहा जिनमें उनका निजी जीवन भी शामिल था। पत्र तो निजी है लेकिन उनमें प्रस्तुत विचार सामयिक विषयों पर प्रकाश डालते हैं।

बच्चन पत्रों में एक दम सहज, सरल प्राणी होते हैं स्वयं कवि होते हुए भी वे सदैव अपने मित्रों का उत्साह वर्धन करते रहे। ६.६.५५ के काठमांडू से लिखे गये पत्र में वे चन्द्रदेव सिंह जी का किस तरह से साहित्य में पथ प्रशस्त करने की प्रेरणा देते हैं – उनके इस पत्र से अनुमान लगाया जा सकता है –

प्रिय श्री चन्द्रदेव सिंह 'हृदय',

आपकी पुस्तक 'स्नेह सुरभि' प्रयाग होगर मुझे यहां मिली। स्मरण करने के लिये बहुत आभारी हूँ।

आपकी कवितायें पढ़कर मुझे बहुत आनन्द आया। खेद है कि आपकी पिछली दो रचनायें मैं नहीं पढ़ सका। शीघ्र ही उन्हें कहीं से प्राप्त कर पढ़ना चाहूंगा। आज के नवयुवकों की रचनाअें को देखकर ऐसा लगता है कि मधुर गीतों का युग बीत चला है। आपकी रचनाओं ने उस भय को झूठ साबित कर दिया। आपके इन गीतों में आपके हृदय का सरस-मधुर संगीत है। उर्दू-बहरों को भी आपने बड़ी स्वाभाविकता से संभाला है। मैं आपको इस रचना पर हार्दिक बधाई देता हूं। हिन्दी काव्य प्रेमियों को आपको अधिक जानना चाहिए। आपकी पुस्तक को हिन्दी के अधिक से अधिक पत्रों में आलोचना के लिये भेजें। देश के विभिन्न रेडियों स्टेशनों पर भी उसे आलोचनार्थ भेजिये रेडियोवालों को भी आपको जानना चाहिए। मुझे पता नहीं आप अपने गीतों को गाते किस प्रकार हैं। मुझे आशा है आपका स्वर 'आकाशवाणी' द्वारा किसी दिन देश के कोने-कोने में पहुंचेगा। मैं प्रयाग जाकर अपने मित्रों में आपकी चर्चा करूंगा। मैं आपकी उन्नति और विकास का अभिलाषी हूं।

आपके कानों में एक बात कहना चाहूंगा। आदर्श उंचा रखें और साधना में सलंग्न रहें। हर नया कदम पिछले से आगे हो देर में उठे, पर उठे तो आगे -आगे - आगे।

मेरी शुभकामनायें आपके साथ हैं।

शुभेच्छु
बच्चन

मैं कभी कलकत्ता आया तो आपसे मिलना चाहूंगा, आप प्रयाग आएं तो दर्शन दें।

बच्चन ने उपरोक्त पत्र में अपने मित्र के प्रति सारा प्रेम मानों उड़ेल दिया है उनके भविष्य की उज्जवल कामना की है इससे यह प्रतीत होता है कि बच्चन काव्य में जितने मधुर हृदय हैं उतने ही मधुर अपने मित्रों के प्रति हैं पत्रों में सदैव शुभेच्छु हैं नहीं तो ये पंक्तियां – **'आर्दश उंचा रखें एवं और साधना में संलग्न रहें। हर नया कदम पिछले से आगे हो - देर में उठे, पर उठेगा तो आगे - आगे -आगे'** किसकी प्रेरणा नहीं

बन सकतीं उनकी इस एक पंक्ति का भाव तमाम कविताओं, निबंधों से अमूल्य है।

इसी प्रकार अन्य पत्र में उन्होंने उपहार देने वाले मित्रों का मान किस तरह इन शब्दों से बढ़ाया है –

आपके दिये हुए फूल तो पहली मंजिल पर ही सूख गये, पर आपका स्नेह मेरे हृदय में ताजा है'।

बच्चन पत्रों में मित्रों की शंकाओं का निवारण व समस्याओं का समाधान बहुत ही सहज शब्दों में करते हैं मित्रों की परेशानी को समझकर उसका सर्वेक्षण कर उसकी समीक्षाकर अपने विचार समाधान रूप में प्रकट करते हैं आलोचकों से वे क्षुब्ध नहीं हैं उनका अस्तित्व वे सहर्ष स्वीकार करते हैं अपने साहित्य में और यही आशा अपने मित्रों आत्मीयजनों से भी करते हैं कि साहित्य क्षेत्र में आलोचकों के साथ ही सृजन करना होगा उनका मानना है कि आलोचकों का सृजन भी एक कवि ही करता है। उसके द्वारा लिखा गया काव्य समाज में कई आलोचक उत्पन्न करता है लेकिन आज तक कोई समालोचक कवि को नहीं उत्पन्न कर सका इस लिये आलोचक से श्रेष्ठ कवि है जो किसी न किसी को अपने लेखन से तर्क वितर्क व बुद्धिपूर्ण चिन्तन के लिये बाध्य करता है तथा एक बुद्धिजीवी समाज की रचना तक कर डालता है वे एक पत्र में लिखते हैं –

मैंने समालोचक नामक जन्तु का कभी अस्तित्व ही नहीं स्वीकार किया - चाहे वह पुराना हो चाहे नया। कवियों ने बहुत से समालोचक बनाये हैं, पर आज तक कभी किसी समालोचक ने कोई कवि नहीं बनाया है। वह जन्मना पैरासाइट (परमुक्त) होता है। उसे दूसरे का कोई खाने-चामने को चाहिए। यदि उसमें कुरूचि हुई तो वह और भी घृणित हो जाता है। जो अपने रक्त से लोगों के हृदयों पर अपनी पंक्ति लिखता हो, उसे कलम-दावात से उत्पात मचाने वाले इस जंतु से आतंकित नहीं होना चाहिए।'

साहित्यकार कभी दूसरों के बताये गये मार्ग पर नहीं चलता वह अपने साहित्य के लिये प्रकृति से प्रेरणा ले सकता है, स्वयं के ही भाव, विचार अनुभूतियों से प्रेरणा ले सकता है अपने अतीत से वर्तमान व भविष्य के साहित्य सृजन की प्रेरणा ले सकता है किन्तु जो समालोचक रूढ़ि ग्रस्त मानसिकता से उससे सृजन करवाना चाहें वे उसके प्रेरक नहीं हो सकते। बच्चन अपनी रचना प्रक्रिया में स्वयं के विचारों को ही अहमियत देते हैं। काव्य में अपनी प्रारम्भिक रचनायें करने के पश्चात् जब उन्होंने आगे के कुछ गीतोंमें अपने भाव

परिवर्तित किये तब आलोचकों को उनका यह परिवर्तन पसन्द नहीं आया। वे इस परिवर्तन को अपने जीवन का अंग मानते हैं और पत्र में वे अपनी इसी रचना प्रक्रिया के विषय में अपने मित्र चन्द्रदेव सिंह जी कोअवगत कराते हैं – उसे हम पत्र भी कह सकते हैं और अपनी रचना प्रक्रिया पर उनके भाव विचार भी कह सकते हैं – यथा –

'कल्पना' के जनवरी अंक की कविता आपको पसन्द आयी, मुझे खुशी हुई। सब रचनायें सबको पसन्द नहीं आतीं - ऐसा तो मुझे शुरू से ही अनुभव हुआ है। मुझे भगवती चरण वर्मा से कोई शिकायत नहीं है। अगर 'मधुशाला' 'निशा निमंत्रण' 'सतरंगनी' की रचनाएं ही उन्हें स्फुरित करती है तो मैं उन्हें दोबारा नहीं लिख सकूंगा। शायद कोई और न लिख सकेगा।

रूचि भी बहुतों में रूढ़ि-ग्रस्त नहीं हुई इसी कारण मैं अब भी पुराने प्रेमियों को खोता और नये प्रेमियों को प्राप्त करता आ रहा हूं। इधर कई पत्रों में मेरी रचनाएं आई हैं - नजरों से गुजरेंगी - कलकत्ते का आदर्श - ज्ञानोदय -पटना की नई धारा, ज्योत्सना, आजकल (दिल्ली), सरस्वती (प्रयाग) म.प्र.स. (ग्वालियर), कल्पना और धर्मयुग में फिर मेरी रचनाएं गई हैं।'

जब एक साहित्यकार दूसरे साहित्यकार या कवि के साहित्यकि जीवन एवं परिचय व उसकी रचनाओं, काव्य के संबध में कोई पुस्तक लिखता है तथा उसे किस प्रकार लिखना चाहिए। बच्चन ने चन्द्रदेव सिंह जी को अपने पत्रों में मार्ग निर्देशन दिया है। चन्द्रदेवसिंह ने 'बच्चन और उनका काव्य' पुस्तक लिखते समय बच्चन से कुछ राय एवं जानकारी लेनी चाही। उसी विषय पर बच्चन का विचार है अगर किसी कवि के काव्य को उद्घाटित करना है तो उसकी रचना प्रक्रिया ' भावाव्यक्ति पर अधिक ध्यान होने का वर्णन हो। बच्चन ने अपने काव्य को लोकप्रिय बनाना चाहा न कि स्वयं को क्योंकि स्वयं तो वे अपने को आम व्यक्ति की तरह मानते हैं और दूसरोंसे भी यही प्रत्याशा करते हैं कि लोग उन्हें समाज के मध्य का ही व्यक्ति मानें – चन्द्रदेव सिंह को लिखा एक पत्र उनकी यही अभिव्यक्ति करता है –

'मुझ पर पुस्तक लिखने की आवश्यकता तो अभी कम से कम नहीं थी। वैसे तुम्हारी जिज्ञासा शांत करने को जो तुम पूछना चाहोगे उसका उत्तर दूंगा - पत्रों से - यह मौखिक रीति से, यदि तुम दिल्ली आये। मैं अक्तूबर में ८-१० रोज को अपने लड़कों को

देखने नैनीताल जाना चाहता हूँ तिथि का निश्चय नहीं किया।

जो तुम मुझे लिखो दिखाने की आवश्यकता नहीं है यदि तुम मुझे दिखाना ही चाहो तो मैं इतना ही कर सकता हूं कि तिथि आदि के विषय में यदि कोई भूल हो तो उसको ठीक कर दूं। मेरी राय तो यह है कि तुम्हारी आलोचना का प्रमुख आधार मेरी रचनाएं ही हों।

२७ नवम्बर, फिर-फिर आयेगी और उसका आलोचना से भी कोई सम्बन्ध नहीं। आलोचना सुस्थिरना से, गम्भीरता से, विवेक से लिखी जाये तभी उसका कुछ महत्व हो सकता है। वह सृजनात्मक हो - मेरे व्यक्तित्व और कवित्व से उपर भी वह कुछ हो। तुम्हारा लेख सा. हि. वालों ने मेरे पास भेजा था। छापेंगे।

कवि का साक्षात्कार अक्सर उसके काव्य के भावों को व्यक्त कर देता है। साक्षात्कार में व्यक्ति वह सब कुछ कह सकता है जो वह रचना प्रक्रिया में नहीं कह सकता इसके लिये यह आवश्यक है कि साक्षात्कार कर्ता किस प्रकार से उपरोक्त कवि को अपने साक्षात्कार लेख में प्रस्तुत करता है एवं साक्षात्कार में पूछे गये प्रश्नोत्तर लेख को तारतम्य में जोड़कर उसे पाठकों के समक्ष गुणों के सम्बन्ध में प्रकाश डाला हे कि किस प्रकार इन के प्रश्न हों जिससे साहित्यकार की पूर्ण अभिव्यक्ति हो सके। चन्द्रदेव सिंह को यही निर्देश देते हुए बच्चन पत्र में लिखते हैं –

प्रियवर,

पत्र मिला। समाचार मालुम हुए।

मुझे यह जानकार चिन्ता है कि तुम्हें चोट लग गयी है, आशा है अब उतनी तकलीफ नहीं है। 'इन्टरव्यू' का लेख मुझे कई जगह से टूटा-फूटा लगा। उसे जोड़ना तो तुम्हारा ही काम है। 'इन्टरव्यू' का कोई विशेषध्येय भी नहीं स्पष्ट हो पाता और न पाठक की दृष्टि में कोई सांगोपांग चित्र ही उपस्थित होता है। जो प्रश्न पूछे गये और जो उत्तर दिया गया उनमें कोई योजना नहीं मालुम होती। लोग यही समझेंगे या तो तुम्हें सवाल करना नहीं आता या मुझे जवाब देना नहीं आता। मैं चाहता हूं कि इस लेख को फिर से लिखा। वन्या प्रतिलिपि नहीं है। जो मैंने कहा सब कुछ कहने की जरूरत नहीं। उसमें से चुनाव करना होगा चुनाव करने में ही तुम्हारे निर्णय और रूचि की परीक्षा है। अंत में जो प्रभाव लाना है उसकी तैयारी प्रारम्भ से करनी होगी। एक सम्यक चित्र कवि

का बनाना होगा। अभी वह कुछ पागल, कुछ सनकी, कुछ विचारों वार्ताओं में उखडा-पुखड़ा-सा लगता है। उसको सुधर, संतुलित, सजीवन करके उपस्थित करना होगा।

सिद्धांत विचारों पर तो और लेख भी लिखे जा सकते हैं 'इन्टरव्यू' का ध्येय है पढ़ने वाला यह अनुभव करे कि जैसे वह स्वयं कवि विशेष से मिल आया है - उसके पास हो आया है। उसे सूंघ आया है, छू आया है, उसे गले लगा आया है।

तुम्हारे 'इन्टरव्यू' का 'बच्चन' तुम्हारे पाठकों को ऐसा नहीं प्रतीत होगा।
शेष शुभ -

बच्चन

बच्चन के इस पत्र से यह आभास होता है कि वे अपनी अभिव्यक्ति कितनी बेबाकी से करते है जो कहना है, वह सत्य कहना है, चाहे वह स्वयं के विषय में हो या अन्य व्यक्ति के सम्बन्ध में। सही विधा की सही जानकारी व उसके लिखने का प्रयोजन एकदम स्पष्ट इसपत्र में है वे 'साक्षात्कार लेख' को कला की ही परिधि के अर्न्तगत मानते हैं।

अपने देश में एक विशेष बात हे कि जब कोई कार्य शुरू होता है कि तो उसकी होड़ सी लग जाती है यदि किसी व्यक्ति का सम्मान करना है या उसके सम्मान में आयोजन करना है तो उसकी अति हो जाती है। बच्चन ने अपनी चिन्ता इसी आये दिन हाने वाले कवि सम्मेलन व जंयती समारोहों पर की है क्योंकि ज्यादातर ऐसे आयेजनों में सम्बन्धित व्यक्ति को ईश्वर के समान पूजा जाता है लेकिन वह पूजा क्षणिक होती है। बुखार उतर जाने पर जो यथोचित सम्मान का वह अधिकारी है, वह भी नहीं मिलता। अपने कुछ पत्रों में बच्चन ने ऐसे ही कुछ विषयों पर लिखा है जैसे चीन–भारत युद्ध के समय होने वाले कवि सम्मेलन व रवीन्द्र जंयती सम्मेलनों की जो बाढ़ सी देश में आयी थी व भारत–पाक युद्ध के समय की स्थिति। वे इन स्थितियों पर चिन्तित होते हैं, विचार करते हैं, विश्लेषण करते है लेकिन बाह्य आडम्बर व उसका अति की सीमा तक जाना उन्हें परेशान करता है। उनके कुछ पत्रों में हम इस मनः स्थिति से अवगत होसकते हैं – चन्द्रदेव सिंह जी एक पत्र में लिखते हैं –

आजकल रवीन्द्र कवि सम्मेलन की धूम है। हमारे देश में जो बात की जाती है उसको 'अति' तक पहुंचा दिया जाता है। रानी आयी तो हर शहर में स्वागत समारोह

में दिल्ली से बाजी मारने को तैयार हो गया। अब यही हाल रवीन्द्र जयन्ती का है। हर शहर में उत्सव, कवि स. हर शहर से दो-चार रवीन्द्र अंक - इसके बाद दस बरस तक कोई रवीन्द्र का नाम न लेगा।'

'चीनी आक्रमण के सम्बन्ध में उनके एक पत्र के कुछ अंश इस प्रकार हैं - 'हम लोग सब ज्यों के त्यों चले जा रहे हैं - सबको युद्ध का ज्वार चढ़ हुआ है। देश की नीति अब भी सुस्थिर नहीं - पर जनता जानती है कि बिना डटकर मुकाबला किये चीन भागने को नहीं'।

दूसरे हिन्दी विश्व सम्मेलन के समाचार से नाखुश बच्चन पत्र में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं कि **'दूसरा विश्व हिन्दी सम्मेलन राजनीति का मुहरा ही था। इसी वर्ष मारिशस में चुनाव होने को है चाचा रामगुलाम गद्दी के उम्मीदवार हैं - उसी की गोट बैठने में यह सम्मेलन भी एक उपकरण है। यह जगह अच्छी है लोग जयादा अच्छे हैं।**

कलम का मोर्चा भी मजबूत रखना है। स्वस्थ रचनाओं द्वारा। मुझे खुशी है कि तुमने भी कुछ लिखा है किसी पत्र में छपा है। रचना अच्छी है, लड़ाई लम्बी होगी। कुछ रिजर्व फोर्स भी रखना हें संयम और अनुशासन भी जरूरी हैं।

बच्चन एक विचारक भी है चूंकि वे हिन्दी साहित्य से जुड़े रहे अतः हिन्दी उत्थान के लिये सदैव प्रयासरत रहे। राजनीति का हिन्दी साहित्य में हस्तक्षेप व अन्य भाषाविदों द्वारा 'हिन्दी' देश भी राष्ट्रभाषा को अपमानित करने का षड़यन्त्र ये सब, वे चिन्तन करते हैं व चुप नहीं रहते अपनी असहमति व चिन्ता उन कुचक्रों पर अपने विचार पत्रों में व्यक्त ही कर देते हैं। कुछ पत्रों में तो बच्चन ने एक साथ कई समस्याओं पर अपने विचार प्रकट किये हैं। चीनी आक्रमण पर जहां वे दिनकर की कविता की प्रशंसा करते हैं वहीं हिन्दी पर दोषारोपण करने वालों से नाराज हैं।

बच्चन को अपनी व्यक्तिगत समस्याओं की इतनी चिन्ता नहीं जितनी अपनी राष्ट्रभाषा, व अपने राष्ट्र की चिन्ता है। उनकी सोच व्यक्ति से परे हटकर – सामयिक विषयों पर जाकर ठहरती है पत्र इससे अछूते नहीं है – यथा – १९६२ की लड़ाई के समय उनका ये लिखा पत्र इसी बात का द्योतक है –

इस समय प्रखरता की आवश्यकता है। चीनी आक्रमण के विरोध में दिनकर

नैतिक आक्रोध सच्चाई और ईमानदारी से व्यक्त हुआ है।

आपात्कालीन स्थिति में मैं साहित्यक मानदंडों की ओर नहीं देखूंगा और ऐसी ही चीज का स्वागत करूंगा जो दुश्मन के विरूद्ध हमारे मोर्चे को मजबूत बना सके। खैर .... इस पर कभी विस्तार से बात करूंगा।

इधर मन बड़ा उखड़ा-उखड़ा-सा रहा। एक के बाद दूसरे हिन्दी के महारथी गिर रहे हैं और देश में हिन्दी को अपमानित पराजित करने के षड्यंत्र रचे जा रहे हैं। हिन्दी ने देश की एकता का स्वर उठाया था और उसी के माथे विघटन का कलंक लगाया जा रहा है।

हिन्दी को राजनीति से आशा छोड़कर कोई और बड़ा सहारा खोजना पड़ेगा।

जिस भाषा के काव्य द्वारा बच्चन जनमानस में इतने लोकप्रिय हुए, सम्मान मिला, स्नेह मिला, उसी भाषा के विघटन व अपमान से वे विचलित होते हैं क्योंकि वे हिन्दी का सम्मान करते हैं काई उसकी आलोचना करे, कलंकित करे इसको वे अपना अपमान समझते हैं। वहीं हिन्दी प्रेम की अभिव्यक्ति उन्होंने पत्र में की है।

बच्चन की यह विशेषता है कि कभी काव्य में कभी गद्य में वे एक ही पंक्ति में बड़ी सार्थक व तथ्य की बात कह जाते हैं जो दूसरेके लिये वेद मंत्र साबित हो सकती है। जैसे–

अधूरे काम पूरे कर डालो। नया काम शुरू करो। बहुत काम करना है। बराबर करते रहने वाला कुछ कर गुजरता है।

बहुत कुछ अर्नगल केवल उपेक्षा से मर जाता है। खैर, छोड़ो भी। छिछले पानी में बहुत धमा-चौकड़ी करने के बाद कीचड़ ही फैलता है।

संघर्ष आज सबकी नियति है। उससे उदासीन मत बनो। उसे ओढो, भोगों और उससे उबरों। 'अकेला भी बहुत बड़ा है इंसान।

भैया कमवा तो उलझनों के बीच ही करना होगा। जो सोचोगे कि सब उलझनें खत्म हों तो लिखें तो प्रलय तक प्रतीक्षा करनी होगी।

काम तो झंझटों के बीच में ही हो सकता है। बच्चा! झंझटों का उपयोग करो - ऐसा सुयोग भाग्यवान कलाकरों को ही मिलता है। मैंने जो कुछ किया सब झंझटों के बीच, झूठ नहीं लिखा - 'हैं लिखे मधुगीत मैंने हो खड़े जीवन समर में'। भगवान श्रीकृष्ण

ने युद्ध-भूमि में खड़े होकर गीता का ज्ञान दिया। तुम नवगीत ही दे दो।

व्यक्ति का काम ही उसकी पूजा है ऐसा मानने वाले बच्चन चन्द्रदेव सिंह के तमाम पत्रों में काम करने की लगातार प्रेरणा देते रहे। नव वर्ष की शुभकामना का बधाई पत्र लिखते हुए वे अपने इस आत्मीय मित्र को एक गुरू की तरह व भाई की तरह जीवन पथ पर सदैव संघर्ष करने का ही उपदेश देते आये हैं। 'आओ मर जायें' लिखने वाले बच्चन पत्रों में एक आशावादी व्यक्ति दिखलाई पड़ते हैं ऐसा आशावादी व्यक्ति जो सदैव अपने कार्य व संघर्ष से निराशाओं को सदैव आशाओं में परिवर्तित करता रहा और वही आशा वे अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों से भी करता है। जैसे कि उपरोक्त पत्र में है दृष्टिगत है –

नए वर्ष की शुभकामनाओं के लिये आभारी हूं। नया वर्ष तुम्हारे लिये प्रचुर सृजन का वर्ष हो। नई उमर है लिख डालो जो लिखना है सब कुछ ठीक ही लिखा जाये इसकी प्रतीक्षा करोगे तो कभी कुछ नहीं लिख सकोगे।

मैं भी बहुत कुछ जो चाहता था पर वो नहीं हुआ, पर ऐसी निराशाओं से तो थक गया हूं। इसलिये निराश होकर भी दुखी नहीं हूं। अब क्या हो सकता है जिसके लिये मैं तैयार नहीं हूं।

अपने कार्य के प्रतिफल में कोई भी सामाजिक प्राणी उसके फल की आशा रखता है बच्चन हिन्दी जनता के स्नेह को ही अपने साहित्यिक कार्य का प्रतिफल पुरस्कार मानते हैं – वे लिखते हैं –

भाई साहित्यकार का सच पूछो तो सबसे बड़ा पुरस्कार जनता द्वारा अपनाया जाना है। हिन्दी जनता ने मुझे इतना अपनाया है कि अब सब पुरस्कार थोथा लगता है। पैसा भी क्या है। उससे अधिक पैसा हिन्दी जनता ने दिया है।

इस शोध विषय में यह बात पहले ही कही जा चुकी है कि साहित्य की किसी विधा में तो साहित्यकार में लिखने की एक संयत सीमा होती है लेकिन पत्रों में नहीं। पत्रों में किसी भी विषय पर व्यक्ति पर राष्ट्रपर टिप्पणी कर सकते हैं। बच्चन सिर्फ मधुगीतों के लेखक ही नहीं एक गंभीर चिंतक एवं देश के बुद्धिजीवी नागरिक भी है जब देश की समस्या होती है तो वे उस पर विचार करते हैं एवं उन्हें व्यक्त करते हैं। भारत–पाक युद्ध के समय देश संकट के दौर से गुजरा युद्धों के होने का स्रोत क्या होता है। क्या खामियां हमारे

नेताओं में है। किस तरह की विदेशनीति व गृहनीति किसी राष्ट्र को अपनानी चाहिए। इन सभी विषयों पर बच्चन यत्र–तत्र लिखते रहे। पत्रों में लिखते रहे। हिन्दू–मुस्लमान भाई–भाई का नारा देने वाली सरकार ऐसी क्या गलतियां कर बैठी कि आपस में साम्प्रदायिकता का बीज प्रस्फुरित होने लगा। इन सबके लिये दोषी कौन है – १०.६.६६ पर चन्द्रदेव सिंह जी को लिखे गये पत्र में बच्चन ने इन्हीं गम्भीर बातों पर अपना मत प्रगट किया है।

पाकिस्तान से युद्ध छिड़ गया है। आज के संदर्भ में तो यह कहना चाहिए कि यह युद्ध पाक्तिस्तान - भारत के बीच नहीं बल्कि मध्ययुगीन धर्माधता और आधुनिक ध र्म-निरपेक्षता के बीच युद्ध है। पाकिस्तान काल से लड़ रहा है।

यों तो भारत सरकार ५ करोड़ मुसलमानों का भी प्रतिनिधत्व करती है पर क्या हम मुसलमानों को धर्म-निरपेक्ष होकर राष्ट्रपेक्षी बना सके।

क्या मुसलमान पाकिस्तान के साथ उसी जोश के साथ लड़ेगा जिस जोशों खरोश के साथ हिन्दू लड़ेगा। जबकि भय यह भी है कि वह पाकिस्तान के पक्ष में तोड-फोड़ की कार्यवाही भी कर सकता है। अगर नहीं, तो क्या यह ऐसा युद्ध नहीं जिसका इतिहास गजनी-गोरी के आक्रमणों से जुड़ा है। अयूब खां ने एक कलमा शरीफ पढ़ने वाले मुसलमानों को आवाह्न किया है और विश्व के सारे मुसलमान राष्ट्रों ने पाकिस्तान के साथ खुल्लम खुल्ली अथावा प्रच्छन्न रीति से सहानुभूति दिखलाई है।

यदि धर्म के आधार पर कश्मीर पाकिस्तान के साथ मिला दिया जाये तो भारत के पांच करोड़ या इससे ज्यादा मुसलमान क्या दूसरा पाकिस्तान नहीं मांगेंगे।

हमें धर्म-निरपेक्षता और राष्ट्रधर्म की जड़े इस देश में मजबूत करनी होगी - खून से सींच-सींच कर, पर अफसोस है कि इसे हमने हमारी सरकार ने मान लिया है। इसके सबसे बड़े अपराधी शायद नेहरू थे। उन्होंने मुसलमान को मुसलमानियत भुला कर भरतीय बनने को प्रेरित नहीं किया - जैसा रूस ने किया। यों सभी के साथ ऐसी आशंका नहीं।

खैर यह युद्ध किसी परिणाम पर जाकर रूका तो हमको इतिहास के कई बड़े सबक सिखा जायेगा।

बच्चन मानते हैं कि कवि जिस समग्रता से जीवन को देखता है राजनीति भी इसी के अन्दर है अतः कवि को भी देश व राजनीति पर अपने विचार प्रगट करने पूरा अधिकार है। यथा –

मेरी हमेशा से यही धारणा कि कवि जीवन को जिस समग्रता से देखता है उसमें राजनीति छूट नहीं सकती, विशेषकर ऐसे समय जब राजनीति हमारे जीवन को हर कोण से छूती-छेड़ती है। इसके प्रति तटस्थता कभी क्षम्य रही हो, आज तो अपराध है।

एक सामाजिक प्राणी होने के नाते बच्चन व परिवार से हमेशा जुड़े रहे व पारिवारिक समस्याओं का सामना भी उन्हें करना पड़ा। उम्र के आखरी पड़ाव पर आकर वे अपनी निजी उलझनें पत्रों में मित्रों से बांटते हैं सब कुछ एक सहज ढंग से, जीवन को भी सहजरूप से स्वीकार करते हैं व उससे उत्पन्न समस्याओं को भी सजह रूप से स्वीकार करते हैं। एक पत्र में उनकी यह सहज जीवन की अभिव्यक्ति ये है –

मैं दिल्ली तेजी जी के कारण रहता था, क्योंकि उनके दमें के कारण दिल्ली बंबई से अधिक अनुकूल पड़ती है, हम दिल्ली में कोई दूसरा मकान ले सकते हों, पर अब कोई दो बरस से ज्यादा के लिये मकान किराए पर हनी उठाता, यहां अब हर दूसरे साल घर उजाड़ने की झंझट - फिर बढ़ती उमर के साथ। जिन्दी बेहया पता नहीं कब तक खींचेगी। बेटों की भी सलाह हुई कि अब स्थायी रूप से बंबई आ जायें - समय भी खराब है। बूढ़े-बूढ़ी का अकेले दिल्ली रहना खतरे से खाली नहीं। पुराने लोग कहा करते थे कि जहां का आबदाना और जहां की मिट्टी होती है वहीं आदमी पहुंच जाता है, तो प्यारे, शायद दोनों अब महाराष्ट्र के बंदे हैं।

अमिताभ तीन महीने जांडिस में पड़े रहे और इसी बीच उनके बारे में क्या-क्या नहीं उड़ी। एक रात कई सिनेमाघरों में तीसरे शो के बाद दो मिनट का मौन भी रखा गया, उनकी दिवंगत आत्म की शांति के लिये। फिल्मी दुनिया में जितना ईर्ष्या-द्वेष है इतना राजनीति की दुनिया में भी नहीं। बहर कैफ, अब वे अच्छे हैं और नियमित रूप से काम पर जाते हैं। परिवार में और सदस्य भी सकुशल हैं। तेजी जी को अभी तक कोई विशिष्ट कष्ट नहीं हुआ पर अभी तो मौसम भी अच्छा है। यहां बरसात के चार महीनों में कभी ज्यादा रहती है और तभी भयानक दमे के दौरे आते हैं, पर भाई बंबई की ६५ लाख आबादी में ६००० -५००० तो दमें के मरीज होंगे, जैसे वे रहते हैं तेजी भी रह

लेंगी और इसी बहाने मौत बदी हो तो ....'।

जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में एक अन्य पत्र में अनकी अभिव्यक्ति –

गजानंद सरावगी को तो तुम जानते थे - मेरे मारवाड़ी मित्र। कलकत्ते में उन्हीं के यहां ठहरता था। कई बरसों से कुछ करोबार दिल्ली लाये थे। २१ मई को चल बसे - पत्र में लिखा था - अचानक - शायद दिल का दौरा पड़ा हो - दुबले पतले थे - ५५ करीब। ऐसी ही मौत अच्छी होती है। कढ़िल-कढ़िलकर मरना तो बड़ा दुखदायी होता है। अब तो मै। अक्सर सोचता हूं, मेरी मौत कैसी होगी। पर भाई अपने बश में नहीं - बाबा ठीक ही कह गये हैं -

'हानिलाभ जीवन-मरन जस-अपजस विधिहाथ'

संक्षिप्त शब्दों में पत्रों में अभिव्यक्ति

हे भाई,

फोन पर लम्बी बात
लंबा धन्यवाद
कलकत्ता न आ सकूंगा
अब तो राम जी बस मुझे अंतिम यात्रा के लिये तैयार
करा सकते हैं।
और जो चाहो करो।
सबका स्वागत।
सबके लिये आभारी
साक्षात्कार की कतरनें नहीं मिली, भेजो।
प्यार लो - प्यार दो।

बच्चन

अब मैं नाच्यो बहुत गोपाल
ले अब अपनी लकूट-कमरिया
बहुतक नाच नचायो।

- Sopan - B8, Gulmohar Park, New Delhi.

हे भाई,

तुम्हारा १.१२ का पत्र सामने
मैं अब भी बीमार-जुखाम-खांसी-बुखार
१५ को आ ही रहे हो - तब देख लेना
शायद तब तक कुछ ठीक हो जाउं
स्वास्थ्य अब मेरा अनिश्चित रहता है।
क्या कार्यक्रम भविष्य का बनाउँ!
अभिनंदन का भार मुझसे उठेगा!
कुछ और नाम देकर मुझे बुलाओ।
खैर आओगे तो बात कर लूंगा।
अमित की दुर्घटना ३ को हुई थी
२० को मद्रास गये
१ को कुली के प्रीमियर पर आए थे
हाथ पर अब भी पट्टी बंधी पी
मेरा बेटा रानासांगा का अवतार है
जिसके शरीर पर ८० घाव थे
तेजी जी कुछ ठीक
खों-खों के साथ-साथ राम-राम भी

बच्चन

ये सारे पत्र बच्चन की वे प्रतिक्रियायें है जो वे अनुभ्व करते रहे जीवन के प्रति व्यक्तियों के प्रति व समाज के प्रति। इनमें उनके व्यक्तिगत जीवन की झांकी तो मिलती ही है साथ ही साथ युग जनित परिस्थितियों के प्रति उनके मनोभावों की एक झलक भी मिलती है।

सहज हास द्वारा परिहास व व्यंग भी बच्चन के पत्रों में देखा जा सकता है व्यक्ति के रूप में बच्चन बहुत ही सहज एवं व्यवहारिक हैं सामान्य शिष्टाचार आवभगत भी उनके व्यक्तित्व में शामिल हैं बैठे–बैठे हास परिहास के शब्दों के साथ वे पत्र को रूचिकार बना देते हैं – यथा –

प्रिय चन्द्रदेव,

दूसरे दिन तुमने मेरे यहां भोजन करने का निमंत्रण स्वीकर किया था व हम पति पत्नी व पुत्र, अजित उनकी पत्नी रात १० बजे तक तुम्हारी प्रतिक्षा करते रहे। न तुम आये, न सूचना भेजी, न फोन किया, न किसी से कराया। उसके बाद महीने भर बाद यह पहला पत्र, धन्य हो जघन्य हो।

जैसे तुम वैसे तुम्हारे मित्र 'खैयाम की मधुशाला' मेरे पास आज तक नहीं पहुंची। बच्चन को अभी खाक समझे हो। उनकी किताब कोई अपने पास से अलग करता है - जब तक कोई उसे झटक ही न ले जाये। तुम्हारे मित्र के पास अब तक खैयाम की मधुशाला पड़ी होगी तो मैं उनको बहादुर कहूंगा। उनसे कोई और ले गया तो मुझे मिलने से रही।

'आत्मकथा से पहले'। ईश्वरचन्द्र ने मुझे भेज दिया था - सोचा मौका आने पर पढ़ूंगा - अभी भगवान की दया से मौका नहीं आया।

तुम्हारी खुरापात् एक दम खुराफात् है।

उसका विचार एक दम छोड़ दो।

महाकवि बच्चन ने ५७वें वर्ष में कौन लंबी लाट खड़ी की है कि चन्द्रदेव आकाश से उतर कर उनकी आरती उतारे।

.... अभी तो तुम अपनी खुराफात ऐसे झाड़ दीं जैसे बरसाती पतंगे अपने सद्यः उगा हुआ पर झाड़ देते हैं

जल्दबाजी में कुछ हो जाये अच्छा साहित्यिक कार्य नहीं हो सकता। यहां तो शम्सपियर का मंत्र ही मान लेना चाहिए। Ripeness is all चीजों को सहज पकने दो - पात्र में डालकर मत पकाओं पात्र समझते हो न।

अपने कवि जीवन की दोपहर उपरान्त लिखे गये इन पत्रों में बच्चन की कवि जीवन की अतः यात्रा की स्वभाविक आत्माभिव्यक्ति है। इन पत्रों में कहीं उनका वेग, आवेग संवेग और जीवन की व्यवहारिकता, कहीं गुढ विषयों पर गम्भीर विवेचन एवं बौद्धिक भावभूमि दृष्टिगत होती है। उनकी इन पत्रों की भावभूमि में लेखनी के शब्दों की उपस्थिति ही नहीं रहती वरन् उनमें तथ्य व तर्क भी विद्यमान हैं। उनके पत्रों की भाषा में पारदर्शिता व साफगोई की लेखकीय मानसिकता झलकती है। अभिव्यक्ति का मूल्यांकन विश्लेषण उनके इन पत्रों के आधार पर किया जा सकता है।

बच्चन की आत्माभिव्यक्ति समीक्षा में

समीक्षा में समीक्षक कृति की अन्तरात्मा मे प्रवेश कर सहृदयतापूर्वक उसके उद्देश्यों और विशेषताओं का उद्घाटन करता है। इस प्राणाली में सिद्धान्त पक्ष गौड़ होता है। व्याख्या एवं विश्लेषण पक्ष प्रधान होता है। समीक्षक का कार्य आलोचना न हो कर अन्वेषण करना होता है। न तो वह समीक्षा की गई कृति को अन्य कृतियों की तुलना में छोटा बड़ा करता है न प्रभाववादियों की तरह मन पर पड़े प्रभाव को ही प्रधानता देता है वह ग्रन्थ का स्पष्टीकरण करता है उसके सौन्दर्य का उद्घाटन करता है।

बच्चन समीक्षा को भी सृजन के अंर्तगत मानते हैं अर्थात् सृजन का एक अंग समीक्षा है जिसमें समीक्षक की सूक्ष्म अलोचक व चिन्तन शील व्यक्तित्व की झलक मिलती है। समीक्षा में व्यक्ति रचना की गहराई से अध्ययन करके उसका सार तत्व एवं सूक्ष्म से सूक्ष्म विचार भी पाठक के समक्ष रखता है क्योंकि सर्जक निष्पक्ष निर्णय स्वयं की कृति के विषय में नहीं दे सकता ये कवि समीक्षक करता है तथा कृति के विषय पर तथा उसके स्वरूप पर अपनी अभिव्यक्ति करता है। कृति में जो विचार एवं विषय वस्तु होती है उस विषय वस्तु, व्यक्तित्व या पात्रें पर समीक्षक की आत्माभिव्यक्ति होती हैं तत्कालीन घटनाओं तथा विषस वस्तु का विवेचन करता है विवचेन करना भी किसी रचना को लिखने जितना ही दुष्कर कार्य है जिसमें विवेचक की बौद्धिकता का पता चलता है। सृजन एवं सहृदय क्रे मध्य समीक्षक ही वह कड़ी है जो भाव और अभिव्यक्ति का माध्यम बनता है। सर्जक जब सृजन करता है वह अपनी सृष्टि में डूबा रहता है उसे यह ज्ञान नहीं होता वह किस मनःस्थिति में है वह अपनी रचना का अंग हो जाता है वह साहित्य व काव्य के नियमों से भी उन्मुक्त हो जाता है लेकिन समीक्षक जब किसी रचना की समीक्षा करता है या किसी व्यक्तित्व के विषय में उसका विवेचन करता है तब वह पूर्ण रूप से व्यवस्थित मनःस्थिति से सृजन करता है वह साहित्य व समाज के नियमों का भी ध्यान मे रखकर लेखन करता है उसको अपने सृजन में इस बात का संतुलन बनाकर चलना होता है कि वह अमुक कृति की अधिक प्रशंसा ते नहीं कर रहा? या अमुक व्यक्तित्व के विषय में कोई त्रुटिपूर्ण टिप्पणी तो नहीं कर रहा। समीक्षक विश्रांत मन से समीक्षा करता है। तथा समीक्षा में अपने आत्मिक विचारों की बौद्धिकता व चिन्तनशीलता की अभिव्यक्ति करता है।

बच्चन ने समीक्षा के क्षेत्र में भी काफी कार्य किया है। कवि पन्त के विषय में अपने विचर **'कवियों में सौम्य सन्त पन्त'** में व्यक्त किये हैं। डा. राजेन्द्र प्रसाद के व्यक्तित्व की समीक्षा की है। समीक्षा में बच्चन की विश्लेषणात्मक योग्यता का पता चलता है। विश्लेषण के क्षण में सृजन को रूपांतरित किया है। समीक्षक द्वारा ही लेखक एवं कवि की रचना प्रक्रिया को विश्लेषित किया है।

पन्त व निराला के सम्बन्ध में -

१९६० मे कविवर सुमित्रानन्दन पंत की हीरक जयंती पड़ी। वे सदी के प्रारम्भ के साथ आये थे। एक दिन बैठे मुझे ध्यान आया, क्यों न इस अवसर पर उन पर लिखे अपने निबंधो का एक संग्रह संकलित कर उन्हें समर्पित करूं। उस समय तक उन पर मेरे चार लेख लिखे जा चुके थे, पांच लेख मैंने नए लिखे। इस प्रकार नौ लेख और पंत जी द्वारा मुझको लिखे १२७ पत्रों का एक संग्रह तैयार किया और उसे नाम दिया – **'कवियों में सौम्य सन्त'**। उनको यह विशेषण मैंने गांधी जी के बलिदान पर लिखी एक कविता में दिया था–

तुमसे मेरी प्रार्थना, सुमित्रा नन्द (न) पंत,
संतों में सुमधुर कवि, कवियों में सौम्य संत,
आ पड़ी देश पर, बंधु आपदा यह तुरंत,
टूटे सत्यं, शिवं, संदरता के तंतु-तंतु।

...

वंदित वीणा पर गाकर अपना ज्ञान गान
सुस्थिर कर दो भारत माता के विकल प्राण,
ले करामलकवत् भूत, भविष्यत, वर्तमान,
ओ कवि मनीषी, करो विश्व का समाधान।

उपरोक्त कथन से पन्त की व्यक्तित्व समीक्षा करते हुस बच्चन उनके जीवन पर कुछ प्रकाश डालते हैं – एक अन्य कथन में वे निराला व पन्त की सम्मिलित समीक्षा करते हैं – **'पंत ने अपने जीवन की लड़ाई आर्दशवादी तलवार से ही नहीं, समझौतावादी ढाल के सहारे भी लड़ी थी इसलिये वे जीवन समर में यदि विजयी नहीं हुए थे तो पराजित भी नहीं हुए थे। साथ ही वे जीवन में विभाजित व्यक्तित्व की इकाई थे। यानि भावना जीवन में उन्हें कुछ भी सहना भोगना पड़े, उनका सर्जक व्यक्तित्व एक परिनिष्ठित,**

परिष्कृत शैली में उनके बुद्धि-विवेक-गत विचारों को वाणी देने से उपर ही न होता था। निराला के व्यक्तित्व में ऐसा कोई विभाजन न था, इसलिये जिस समय उनका व्यक्तित्व हारा, उस समय उनका सर्जक भी पराङ्मुख हो गया जिस समय वे संघर्ष में टूटे उस समय उन्होंने अपने कवि लेखक को भी ध्वस्त धराशायी पाया। निराला जिस आग में आहुति हो गये, पंत ने उस आग को साधा। आहुति बनना कठिन है तो आग को साधना भी सरल नहीं है। मैंने दोनो को श्लाधा की दृष्टि से देखा था।

दिनकर के सम्बन्ध में -

बच्चन काव्य शिल्पी हैं मूलतः समीक्षक नहीं है लेकिन वे अनायास ही किसी कवि की समीक्षा कर जाते हैं न तथ्यों का विश्लेषण करते हैं 'सतरंगनी' की भूमिका में वे 'मयूरी' के प्रतीक को जब समझते हैं तब वह उसकी तुलना दिनकर के काव्य से करते हैं यही नहीं वे नारी के सम्बन्ध में अपने विचारों व भावों के साथ पाठकों के समक्ष 'उर्वशी' की उन तमाम विशेषताओं पर विकास डालते हैं जो दिनकर ने व्यक्त की है। इस तरह वे 'उर्वशी' की समीक्षात्मक टिप्पणी करते हैं उस टिप्पणी में उनकी अभिव्यक्ति भी विद्यमान हैं। वे लिखते हैं–

सतरंगनी लिखने के बीस वर्ष बाद मैं बंधुवर दिनकर की उर्वशी पढ़ रहा था। पुस्तक समाप्त करने पर मेरे मन में प्रश्न उठा, क्या दिनकर भी सही नारी की खोज कर रहे थे? क्या उनके सामने भी प्रमदा और परिणीता में विकल्प था? क्या उन्होंने भी प्रमदा पर परणीता को ही तरजीह नहीं दी थी?

.... दिनकर की सबसे भारी भूल यह है कि वे पुरूष-नारी सम्पर्क में भी इंद्रियातीत् नारी और पुरुष की सत्ता के आधार को अक्षुण्ण मानते हैं। उसके पूर्व उन्हें स्थूल नारी, स्थूल पुरुष को जीना-भोगना पड़ेगा ही, जहां उसमें वही यौन-संघर्ष छिड़ जाने की आशंका है जिसका जिक्र मैं पहले कर आया हूं। ....

उर्वशी और पुरुरवा अपनी विशिष्ट स्थिति में यौन-संघर्ष की उग्रता से तो बच जाते हैं पर अध्यात्म सिद्धि नहीं कर पाते। ....

.... दिनकर ने तंत्र साधना की याद दिलायी है। पर तन्त्र साधना में नारी साधना मात्र थी। पुरुष की समकक्षणी नहीं, प्रायः वह निम्न वर्ग से ली जाती थीं

उसमें एकांगिता तो थी ही। अध्यात्म साधना पुरुष की सिद्ध होती थी। नारी कहीं निम्न धरातल पर छूट जाती थी। वस्तुतः वह निम्नता, स्थूलता की प्रतीक ही मानी जाती थी। सूक्ष्मता में प्रवेश करना पुरुष का ही अधिकार था।

उपरोक्त कथन से बच्चन नारी की समानता का एक ज्वलंत प्रश्न उठाते हैं कि आदिकाल से नारी पुरुष की साधन मात्र है उससे उच्च या समकक्ष स्थान देने की कोई बात नहीं करता जो कि उसका अधिकार है वह त्याग में नर से अधिक आगे है आध्यात्म सिद्धि में वह बाधक नहीं है साधक है दिनकर की उर्वशी अध्यात्म सिद्धि में बाधक सी प्रतीक होती है आगे वे इसी बात को और स्पष्ट करते हुए कहते हैं –

ध्यान देते की बात यह है कि नारी जो व्यवहारिक सत्य को पुरुष की अपेक्षा अधिक गहराई से समझती है, कभी अपने को कायाध्यात्य के भ्रम में नहीं ड़ालती। राग भाव से अध्यात्म-साधना की बात जब उसके मन में उठती है तो चक से वह अपनी सेज सूली के ऊपर लगा देती है (सूली ऊपर सेज पिया की कोहि विधि मिलना होय)। मीरा ही नहीं, महोदवी भी स्थूल अथवा शरीर प्रियतम का आभास कभी नहीं देतीं।

समीक्षा के माध्यम से बच्चन यह कहना चाह रहे हैं कि दिनकर जहां पुरुष होने की प्रकृत्ति से नारी प्रेम को स्थूल रूप देते हैं अध्यात्म साधना में भी उसका रूप स्थूल है वहीं नारी होकर नारी की ही मनोवृत्ति से चिंतन करने वाली मीरा व महादवी अपने काव्य में नारी का अपने प्रियतम से अध्यात्मिक प्रेम ही बखान करती हैं। अध्यात्म साधना में शरीर मध्यस्थता नहीं करता है। इस प्रकार की समीक्षा करने का अर्थ बच्चन का यह नहीं है कि वे 'उर्वशी की आलोचना करना चाहते हैं वे सिर्फ स्त्री–पुरूष मनोवृत्ति की समीक्षा करते हैं। उनकी समालोचना व्यक्ति पर आधारित नहीं है वह मानसिक प्रवृत्ति पर आधारित है वे स्वयं इस बात की पृष्टि करते हैं–

मैं 'उर्वशी' की समालोचना करने नहीं जा रहा हूं मेरे कहने का तात्पर्य सिर्फ इतना है कि दिनकर की 'उर्वशी' भी प्रमदा का प्रतीक है, जैसे मेरी नागिन (यह भी एक विचित्र संयोग है कि मैंने नागिन के लिये लिखा था - 'तू मोहमयी उर्वशी सदृश्य') परणीता की प्रतीक है सुकन्या और औशीनरी। पुरुरवा और उर्वशी का यौन-संघर्ष्ज दोनों की विशिष्ट परिस्थितियों के कारण कटु-कुंठाग्रस्त नहीं होने पाता। मैंने साधारणता का धरातल लिया था। उर्वशी पुरुरवा कामाध्यात्म प्रयोग में सहायक नहीं, बाधक सिद्ध होती

है। ऐसी स्थिति में हमारी सारी सहानुभूति परणीतायें ले जाती हैं - उर्वशी के प्रति हम केवल इसलिये आभारी होते हैं कि वह ऐलवंश को एक उत्तराधिकारी दे गई है। नागिन और मयूरी के लिये जितना-जितना कहा गया था, शायद उर्वशी और औशीनरी के लिये भी उसी अनुपात से कहा गया है .... 'उर्वशी' की नायिका (हेरोइन) वास्तव में औशीनरी है। प्रमदा और परणीता के विकल्प में दिनकर भी तरजीह परणीता को दे गये हैं। उर्वशी कहती है -

> जब पुरुष का हृदय-सिंधु
> आलोड़ित, क्षुभित,मथित होकर
> अपनी समस्त बड़वाग्नि
> कंठ में भरकर मुझे बुलाता है
> तब मैं अपूर्व यौवना
> पुरुष के निमृत प्राणतम से उठकर
> प्रसारित करती निर्वसन, शत्रु हे माभ कांति
> कल्पना लोक से उतर भूमि पर आती हूं।

अन्त में बच्चन लिखते हैं – **दिनकर ने भी यही कल्पना की है कि पुरुष के जीवन में परणीता ऐसे ही सहजभाव से आ जाती है जैसे पावस में जलद-खण्ड पर रंगीन 'इन्द्रधनुषी'। .... इस प्रसंग को समाप्त करने के पूर्व मैं एक बात स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि इस सन्दर्भ में 'उर्वशी' को मैंने केवल इसलिये याद किया है कि उससे अपनी यत्किंचित उद्‌भावना के औचित्य और उसकी सच्चाई के लिये कुछ और प्रमाण, कुछ और बल संचित कर सकूं।**

उपरोक्त विवेचन में बच्चन ने जो उर्वशी की समीक्षा की है उसमें कवि के पात्र का चित्रण कर पुरुष–नारी मन की गुथ्थियों को सुलझाने का प्रयास किया है न ही उर्वशी पर कोई कटाक्ष है और न ही दिनकर पर। ऐसी स्वस्थ समालोचना में समीक्षक अपनी बात भी कर सकता है क्योंकि समीक्षक के लिये यह आवश्यक है कि जिस विषय की वह समीक्षा करता है उस विषय में नकारात्मक पहलू को पाठकों के समक्ष लाकर स्वयं भी तथ्यों को सकारात्मक रूप प्रकाश में लाये, बच्चन ऐसी ही अभिव्यक्ति करते हैं।

समीक्षक का कार्य कुछ दुरुह भी होता है वह तथ्यों की समीक्षा करके दूसरे

लेखकों से तुलना करके उपर्यक्त लेखक का विश्लेषण करता है बच्चन आत्मकथा में एक स्थान इसी तरह की ईट्स व टैगोर के साहित्य की तुलनात्मक समीक्षा करते हुए लिखते हैं कि –

बंगला लेखकों से बात-चीत करने का जब-जब अवसर मिला है, मैंने देखा है कि टैगोर की चर्चा कहीं न कहीं जरूर आ जाती है, यहां तो आनी ही चाहिए थी। मेरा परिचय ईट्स साहित्य के विशेष स्वध्यायी के रूप में दिया गया था। लोग टैगोर और ईट्स के व्यक्तिगत सम्बन्धों को जानते थे, उनके संबन्ध में कुछ सही गलत बातें - ईट्स ने गीतांजलि का अनुवाद किया था (उन्होंने केवल अनुवाद सुधारा था) उसकी भूमिमय लिखी था, टैगोर को नोबोल पुरस्कार दिलाया था (हलांकि उन्हें खुद तब तक यह पुरस्कार नहीं मिला था) और यह कि टैगोर के समान रहस्यवादी थे । यह धारण, भारत के कुछ-पढ़े, कुछ-सुने शिक्षित् शयद जयादा ठीक होगा कहना अर्द्धशिक्षित, लोगों में इतनी व्यापक है कि मुझे बीसों जगह इसका प्रतिवाद करना पड़ा है। टैगोर और ईट्स के संबध में समता का टूटना आकर्षक नहीं था, जितना विषमता का। इस गोष्ठी में मैंने कहा कि टैगोर निःसंशय आस्था और वांछित की प्राप्ति के कवि हैं, ईट्स के सामने सर्वदा प्रश्न खड़े रहे, ईट्स की खोज हमेशा जारी रही। टैगोर का बल उपनिषदों से लेकर संत कवियों तक की परंपरा है, ईट्स ने उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में व्याप्त विज्ञान पोषित संदेहवाद के प्रभाव में ईसाइयत के भी सचेत संस्कारों को नकार दिया और सर्वमैव अप्रतिबद्ध मानव के जग जीवन काल संबधी सौ-सौ सवालों का जवाब ढूंढने के लिये वे कहां-कहां नहीं मारे-मारे फिरे।......................

.... टैगोर की शांति या ते सहज पलायन है या दुर्लभ साधना, पर आज के साधारण मनुष्य को साधारण भाग्य तो संघर्ष है जिसमे विजयी होना तो संभव नहीं, पर अपने हठ से, जिद से रगड़ से, दृढ़ता से, अपनी पराजय को भी असंभव कर सकता है।'

बच्चन स्वयं भी अपने समीक्षक है अपने ही द्वारा लिखे गये काव्य से कभी वे पूरी तरह संतुष्ट नहीं हो पाते और लिख जाते हैं – **प्रायः पचीस वर्षो बाद उन कविताओं को जब मैं देखता हूं तो दो-तीन बातें साफ उभरती हैं। मेरी दृष्टि अब आंतरिक के साथ - साथ बाह्य भी हो गई है। बाहर जो वह देखती है उससे न वह प्रसन्न है न संतुष्ट। वह यह भी देखती है कि उस स्थिति के लिये जिम्मेदार कौन है और मेरे शब्द उसकी**

ओर उंगली उठाने से नहीं चूकते। आज तो मुझे आश्चर्य होता है कि सरकारी दफतर में बैठकर मैंने कविताएं - 'सड़ा हुआ कमल', 'यह भी देखा - वह भी देखा', '१९६० की दीवाली', 'जनतंत्र दिवस', 'खजूर', महागर्दभ', दानवों का शाप', 'अंधा पर गूंगा-बहरा युग नहीं' लिखीं कैसे। मुझे ताज्जुब है कि ऐसा लिखने के लिये मुझसे कैफियत क्यों नहीं मांगी गई। शायद शासन बिलकुल बेखबर है या बहुत उदार है, या भली भांति जानता है कि मेरे जैसे तुकबन्दों के तुक्कों का असर भी क्या होना है। जो उपेक्षा के गुड़ से भर सकता हो उसे विरोध के माहुर से क्यों मारा जाये।

बच्चन की आत्माभिव्यक्ति आत्म कथा में

आत्मकथा का अर्थ है किसी भी रचनाकार द्वारा स्वयं को एवं उसके साथ व्यतीत किये गये संस्मरणों, अनुभवों, दुःख–सुख के पलों को समाज के समक्ष निष्पक्ष रूप से प्रस्तुत करना। आत्मकथा लेखन स्वयं में ही एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। रचनाकार उसे लिखते समय कहां तक न्याय कर पाता है क्योंकि वही रचना भविष्य एवं आनेवाली पीढ़ी के लिये आन्दोलनकारी कार्य करती है। आत्मकथा लिखते समय इस बात का ध्यान आवश्यक है कि रचनाकार आत्मपूजा या आत्मनिन्दा की तरफ अग्रसर तो नहीं है। सदैव निरपेक्ष विश्लेषण होना दुष्कर है।

आत्मकथा लेखन की परम्परा में हरिवंश राय बच्चन की आत्मकथा साहित्य में विशिष्ट स्थान रखती है। ये चार संस्करणों में प्रकाशित है। जिसमें कवि बच्चन का गद्यकार रूप दृष्टिगत हुआ है। जिसमें उन्होंने स्वयं को पाठकों के समक्ष निष्पक्ष रूप से अभिव्यक्त किया है। सही मूल्यों में बच्चन की आत्माभिव्यक्ति उनकी आत्मकथा में ही व्यक्त होती है। विचारों की अतिरंजना आत्मविश्लेषण की प्रक्रिया से गुजर कर आत्मशोधन की परिस्थित तक बच्चन ने अपनी जीवन यात्रा लिपि बद्ध की है।

आत्मकथा में बच्चन ने अनेक सामाजिक परम्पराओं एवं समस्याओं तथा साहित्य की विधाओं, व्यक्ति की चरित्रिक विशेषताओं के उपर प्रकाश डाला है।

आत्मकथा लेखन के वर्षो में बच्चन ने स्वयं 'आधुनिक कवि' पुस्तक में अपने विचार व्यक्त किये है जो उनकी आत्मकथा में लेखन की कसौटी पर आगे जाकार सत्य सिद्ध हुये यथा –

'यदि मैं अपने व्यक्तित्व पर प्रकाश डलना चाहूं, उस युग-समाज का विश्लेषण करना चाहूं जिसमें मेरी भावप्रवणता जगी, और तब से लेकर आज तक के विकास पर दृष्टिपात करूं तो मुझे अपनी आत्मकथा ही नहीं लिखनी पड़ेगी, अपने समय का सामाजिक-सांस्कृतिक इतिहास भी लिखना पड़ेगा।'

वर्षो पूर्व बच्चन द्वारा व्यक्त किये गये ये विचार उनकी आत्मकथा में सर्वत्र

दृष्टिगत होते हैं। ये आत्मकथा चार भागों में प्रकाशित है –

क्या भूलूं क्या याद करूँ
नींड का निर्माण फिर
बसेरे से दूर
दशद्वार से सोपान तक

आत्माभिव्यक्ति की यह स्मृति न्यात्रा को बच्चने ने अपनी आत्मा की लेखनी से पाठकों के समक्ष जीवन के सम्पूर्ण अनुभवों को उसके पारदर्शी रूप में रख दिया है। हिन्दी साहित्य में इस तरह की बेबाक आत्मकथा बहुत ही कम लिखी गई है जहां व्यक्ति समाज के समक्ष अपनी सम्पूर्ण कमियों , खूबियों, कमजोरियों, गलतियों, गुणों–अवगुणों के साथ प्रस्तुत कर देता है। विद्वानों ने इसे हजार वर्ष के इतिहास की पहली घटना तक कह डाला है।

'क्या भूलूं क्या याद करूं' में बच्चन अपने बचपन एवं किशोरावस्था के भावों को व्यक्त करते हैं। जिस समय उनके अन्दर एक कवि जन्म ले चुका था, वहीं 'बसेरे से दूर' में एक सामाजिक प्राणी जो परिवार से बंधा है किन्तु दूर है की छटपटाहट एवं वियोग को व्यक्त करते हैं 'नीड़ का निर्माण फिर' तो उनकी सम्पूर्ण संवेदना की कहानी है। 'दशद्वार से सोपान तक' एक लेखक, कवि, अधिकारी की स्मृति यात्रा है। अपने अन्तर के आत्मसात् भावों की कलापूर्ण अभिव्यक्ति की कथा ही बच्चन की आत्मकथा है।

बच्चन की आत्मकथा में उनकी आत्मव्यथा परिलक्षित होती है उनकी आत्मनिष्ठ भावना प्रणय, विछोह, जीवन–मृत्यु जीवन संघर्ष के आघात कर क्रमशः विस्तृत एवं व्यापक हैं। आत्मकथा प्रयोजनशील एवं सृजनशील है एवं साहित्य की क्रियाशीलता के प्रति आस्थावान है और निष्ठावान है। इसमें उन्होंने आत्मनिन्दा या आत्मप्रशंसा नहीं की है बल्कि आत्म प्रकाशन किया है। अपने द्वारा भोगे हुए सत्य को एवं संघर्षशील जीवन को कर्मयोगी की भांति व्यतीत करते हुए अपनी स्मृतियों को व्यक्त किया है।

आत्मकथा के सम्बन्ध में चन्द्रगुप्त विद्यालंकार अपनी पुस्तक **'परिचय एवं प्रतिनिधि कविताओं में'** लिखते हैं –

'पिछले कई वर्षो से बच्चन एक सफल गद्य लेखक के रूप में प्रकट हुए हैं इस

बीच प्रतिवर्ष उन्होंने अपनी आत्मकथा का एक-एक खण्ड लिखा है। पहले दो खण्ड 'क्या भूलूं क्या याद करूं तथा 'नीड़ का निर्माण फिर' नामों से प्रकाशित हुए हैं। तीसरा खण्ड प्रेंस के लिये तैयार है। यह हिन्दी में लिखी सर्वश्रेष्ठ आत्मकथा है। सहजता ईमानदारी और सत्य परायणता इस आत्मकथा की विशेषतायें है। आत्मकथा टेक्नीक की दृष्टि से भी एक नया प्रयोग बच्चन ने किया है उसमें उन्हें असाधारण सफलता मिली है। इन तीन वर्षो में बच्चन ने अपने अतीत को फिर से जीने का प्रयास किया है वह उनके लिये कितना विषदमय, कितना रोमांचक और कितना सांत्वनादयक सिद्ध हुआ होगा। सहृदय पाठक इसका सहज कल्पना कर सकता है।'

बच्चन ने एक साक्षात्कार में यह कहा था कि वे जीवन की छोटी से छोटी घटनाओं, पर भी अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करना चाहते हैं आत्मक्था के चारों भाग उनकी यही प्रतिक्रियायें है जैसा कि वे कहते हैं कि– **'जीवन की छोटी से छोटी घटना के प्रति मैं 'रिएक्ट' करना चाहता हूं। नगण्य से नगण्य पदार्थ के प्रति भी मेरी प्रतिक्रिया होती है। छोटे से छोटा कण भी तो मेरे अस्तित्व का अंग है। हर वस्तु के पति मेरी आसक्ति है, उससे मुझे प्रेम है'।**

अपनी इस अभिव्यक्ति को बच्चन ने आत्मकथा में कार्यरूप में परिणित किया । जीवन की छोटी बड़ी सभी घटनायें इस आंत्मकथा में उनकी आत्माभिव्यक्ति का कारण बनी।

बच्चन अपनी आत्मकथा को कविता संस्कारी मानते हैं। अर्थात् उनकी कविता उनकी आत्मकथा में अपनी सम्पूर्ण संवेदनाओं एवं भावनाओं के साथ समाहित हैं। वे कहते हैं – **'मुझे स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है कि जैसे मेरी कविता आत्मकथा संस्कारी है, वैसे ही मेरी आत्मकथा कविता-संस्कारी है। मैं अपने मूल में, यदि यह मेरी भूल हो तो भी यह जानकर कुछ आश्वस्त होता हूं कि माननतेन भी, जो मेरी इस लेखन मात्रा में कुतुबनुमा के समान मेरे पथ प्रर्दशन करते रहे हैं, अपने आत्मचित्रण दि एसेज़ में अपने निबंधकार को नहीं भूले हैं।'**

क्या भूलूँ क्या याद करूँ

बच्चन जी की आत्मकथा का प्रथम भाग 'क्यां भूलूं क्या याद करूं' है हर व्यक्ति जीवन पर्यन्त स्वयं की जन्मभूमि एवं वहां के वातावरण, परम्पराओं एवं संस्कारों के साथ जुड़ा रहता है। चाहे वह यश व्यतीत के चरण शिखरपर ही क्यों न पहुंच जाये। बच्चन ने अपनी बाल्यावस्था की स्मृतियों एवं अनुभवों को इस आत्मकथा में रोचक पहलुओं के साथ प्रस्तुत किया है। इन सभी बातों का वर्णन करते हुए वे जीवगत समस्याओं रूढ़ियों एवं तात्कालीन समाज की विकृतियों पर भी कुठाराघात करना नहीं भूले हैं।

बच्चन अपने कायस्थकुल की उत्पत्ति स्थान बस्ती जिले के 'अमोढां' नामक ग्राम को बताते हैं रोचक दन्तकथा के माध्यम से वे सम्पूर्ण कायस्थ कुल की उत्पत्ति का रहस्य उद्घाटित करते हैं। 'मनसा' नाम के उनके पूर्वज बाबूपट्टी से प्रयाग आकर बस गये थे वहीं से उनके कुल परिवार की यात्रा प्रारम्भ हुई । इलाहाबाद में चक नाम के मोहल्ले में अपना जन्म स्थान बतलाते हैं। मनसा की सातवीं पीढ़ी में सात पुत्र थे उन्हीं पुत्रो में प्रतापनारायण के दो पुत्रों में एक पुत्र बच्चन हैं।

चक का यह पीढ़ियों वाला घर १९२६.२७ में सरकार द्वारा सड़क निकाले जाने की वजह से गिरा दिया गया। बचपन स्मृतियों का घर जहां उनका बचपन बीता वह घर जिसका वर्णन बच्चन जी ने इस प्रकार किया है जैसे दृश्य सजीव हो उठता है। उनके इस भावुकता भरे वर्णन को पढ़कर हर पाठक अपनी जन्मस्थली को स्मरण करता है। उनकी इस आत्मकथा में सभी कुछ याद रखने लायक है भूलने लायक कुछ भी नहीं है। अपनी लेखनी से अपने अतीत की स्मृतियों को साकार करते हुए उन्होंने अपने जीवन का कोई भी पहलू अनछुआ नहीं छोड़ा है। बचपन में जो स्त्री–पुरूष पात्र उनके जीवन में आये एवं उनको प्रभावित किया उनका सजीच चित्रण आत्मकथा को और भी रोचक बना देता है। 'गंसीचाचा' के क्रियाकलापों को वर्णित करते हुए हास्य का पुट है बार–बार फेल होकर पास होना, एवं समारोह मनाया जाना उस समय के निदोष मनोंरंजन का ही उदाहरण है।

'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' के आरम्भ में ही जिस स्त्री के व्यक्तित्व का वर्णन किया है वह है 'राधा' राधा के व्यक्तित्व एवं वर्णन कला एवं उसके व्यक्तित्व की दृढ़ता

से बच्चन प्रभावित हैं किस प्रकार राधा महंगनियां तमाम आपत्तियों को झेलते हुए यात्रा करती हैं वह नारी की अबला नहीं सबला शक्ति की प्रतीक है। वे लिखते हैं –

'राधा के किस्सों का कोई अन्त नहीं था, उनके प्रमुख विषय थे हमारे पुरखें, नायाब साहब, गपर औल ललितपुर क सफर। ....राधा की वर्णन शक्ति अद्भुत थी। व्यक्तियों एवं परिस्थियों का जैसा सजीव रूप वे खड़ा करती थी वैसा फिर मेरे अनुभव में नहीं आया। कभी उत्सुकता जगा, कभी अंसमंजस की स्थिति पैदा कर वे अपने किस्सों को इतना रोचक बनाती कि उनके पास से उठने का मन ही न होता .... अब कल्पना शक्ति बड़ी सजग होती है और हाथी की छड़ी को छोड़कर और पानी की लाली को तालाब समझाना बिल्कुल स्वाभाविक लगता है पर उनके वर्णन के जादू से मैंने बड़ो को भी बेघटे देखा था'।

ललितपुर का जो चित्रण बाल्यावस्था में बच्चन ने राधा से सुना था अपने जीवन की यात्रा में जब वह वहां गये तो वह वर्णन वहां के अनुकुल ही पाया।

'ललितपुर को नमस्कार जहां मेरे पिता जन्मे थे'। आरती और अंगारे में इसका वर्णन किया है। ललितपुर का 'सनीचरा चौरस्ता' एवं 'जेल क्वार्टर' नयी आदि स्थान बच्चन की स्मृतियां है। जिन्हें 'क्या भूलूं क्या याद करूं' में बच्चने ने जीवन्त किया है।

परिवार की वंशानुगत विशेषतायें हर कुल परिवार में विद्यमान होती हैं। मनोविज्ञान भी इसे मानता है बच्चन ने अपने दादा पर छाया एवं अपने पुत्रों की विशेषताओं को सम्मिलित कर एवं उनकी तुलना करके मनोवैज्ञानिक चित्रण भी किया है।

आत्मकथा लिखते समय बच्चन वहां के वातावरण परिवेश को साथ लेकर चले यदि किसी स्थान का वर्णन है तो वहां से सम्बन्धित कहावतों एवं लोकोक्तियों को भी इसमें शामिल करना नहीं भूले हैं। ललितपुर के सम्बन्ध में –

'ललितपुर गले का हार' सम्बन्धी लोकोक्ति एवं झांसी का वर्णन क्या बच्चन की झांसी यात्रा वहां का अनुभव सब कुछ एक चित्रपट की समान पाठक 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' अनुभव करता है। इस पुस्तक की शुरूआत में बच्चन ने अपने पूर्वजों का वर्णन कर एवं उनके त्याग एवं व्यक्तित्व की अन्य विशेषताओं पर प्रकाश डालकर एक तरह से मानसिक श्रद्धांजलि को अर्पित की है।

आपकी मां का नाम 'सुरसती' अर्थात् 'सरस्वती' था बच्चन स्वयं को सरस्वती पुत्र कहलाने में गर्व अनुभव करते हैं। अपनी मां के संस्कारों से वे गहरे तक जुड़े हैं अपनी कविता में राग एवं आग को अपनी मां की ही देन मानते हैं।

सुरसती से मूक-मृत पाषाण छूकर
राग भरती आग जैस हो जगादी
जीभ को तुमने सिखाया बोलना 'औ'
गीत की लय कान में तुमने बसा दी।

सुरसती पतिव्रता, धर्मनिष्ठ, दयालु नारी थी। आजीवन वे अपने इसी धर्म को निभाती रही बच्चन के मातृपक्ष के व्यक्ति अर्थात् नाना–नानी भी धर्मनिष्ठ दयालु एवं संस्कारी थे। अपने नौकर की वृद्धावस्था में सुरसती द्वारा सेवा एवं आदर सम्मान देना उनके संस्कारों का ही प्रतीक है। मानवीय मूल्य तो कहीं भी आंके जा सकते हैं चाहे वो परिवार हो या वृहद समाज एवं देश।

बच्चन ने अपने जन्म से सम्बन्धित बाते भी पाठक के समक्ष उदघाटित की है। बच्चन के जन्मपूर्व उनके माता–पिता ने 'हरिवंश पुराण' का जाप किया उसी कारण उनका नाम 'हरिवंश राय बच्चन' रखा। लक्षमनिया नाम की औरत को एक तरह से धाय मां का स्थान बच्चन ने अपने जीवन में दिया जिसे वे 'चम्मा' कहकर पुकारते थे।

इस आत्मकथा में बच्चन ने चम्मा के माध्यम से समाज की कुंठित मान्यता उच्चवर्ग व्यवस्था एवं छुआछूत के उपर प्रकाश डाला है। बचपन में देखे गये इस जाति भेद को उन्होंने अपने कृत्य द्वारा नकारा है। समाज को एवं पाठकों को भी यही शिक्षा दी है कि वर्ग भेद सिर्फ हमलोगों द्वारा ही बनाये है ईश्वर के समक्ष सब समान हैं।

आत्मकथा लिखते हुए बच्चन समाज की समस्याओं से जुड़े रहे पिछले कई दशकों पूर्व भारतीय नारी समाज में बहुत जटिलतायें थी उसका जीवन करूणापूर्ण था यदि वह विधवा है तो और जघन्य जीवन व्यतीत करती थी। इस जीवन को बच्चन ने बहुत करीब से देखा था अनुभव किया था वहीं करूणा व उसके साथ चिन्तन उनसे आत्कथा में यह सजीव वर्णन करवा गया। वे कोई भाषण नारी मुक्ति पर नहीं देने चले हैं और न ही कोई आन्दोलन से जुड़े लेकिन उस सब को सहज ही वे व्यक्त करते चले हैं। 'क्या भूलूँ क्या याद करूं' में एक स्थान पर यह चित्र उनके बीते अनुभव एवं मंथन की झांकी है कि

उसे उन्होंने उस समय की कितनी गम्भीरता से लिया – वे लिखते हैं –

'विधवा पतोहू हूँ उस घर में नौकरानी की तरह रहती थी- सबसे मैले मोटे उसके कपड़े, सबसे अधिक उस पर काम - रसोई, चौका-बर्तन, कुटाइ-पिसाई सब उसके सिर। जीने की कोठरी में एक जांत गड़ी थी। जंतसार के बहुत से गीत उसे याद थे। कभी-कभी उसके पास बैठने और श्रम-स्वेद वेदना में भीगे उसके गीतों को सुनने की मुझे याद है। कभी उसका श्रम कम करने की गरज से जांत की मुठिया में हाथ लगाने की भी, कभी उससे मेरे हाथ में छाले पड़ जाते थे - गीत सुनने के लोभ में देर तक मुठिया चलाने से। कितना दर्द उसके गीतों से टपकता था। पूरब में नारी को ससुराल में क्यों इतना दुःख दिया जाता था। यह मैं समझ नहीं सका। सैंकड़ो गीतों में उसका रोदन आज भी सुना जा सकता है - उससे मेहनत ली जाती है, उसका अपमान किया जाता है। उसे सहती है, अपनी करूण कथा अपने मां-बाप के कानों तक नहीं पहुंचने देती कि सुनकर उनको दुख न हो, उनकी छाती न फट जाये। इन गीतों में कहीं -कहीं भाई का रूप बड़ा ही मार्मिक उभरता है, वही तो है जो बहन की ससुराल जा कर देखता, आंसू बहाता है और उसे अपनी सेवंदना देता है और इतने से ही बहन जैसे सब कुछ बर्दाश्त करने की शक्ति पा जाती है। उसकी इस दयनीय दशा का कारण शायद यह है कि वह साधिकार कहीं नहीं है - मायके में, न सासुरे में - दोनों जगह अभिवावकों की उदारता, दया, करूणा पर निर्भर। नये कानून ने उसे जो अधिकार दिये हैं क्या उनसे वह अब भी परिचित हो सकी है' ?

इलाहाबाद के भूगोल एवं वहां के रीतिरिवाज हिन्दूमुस्लिम सम्प्रदाय के त्योहारों का सूक्ष्म चित्रण इस आत्मकथा में मिलता है। कायस्थ पाठशाला, भारती भवन पुस्तकालय, साहित्य सम्मेलन आदि स्थानों का वर्णन उनकी इस कृति में मिलता है। १६१७ से १६२५ तक के वर्ष उन्होंने कायस्थ पाठशाला में शिक्षा ग्रहण करते हुए व्यतीत किये।

बाल्यावस्था से युवावस्था तक बच्चन के जीवन में जो घटनायें घटी उनको बच्चन ने पूर्ण न्याय के साथ अभिव्यक्त किया है। युवावस्था की अपनी मानवीय मूल प्रवृत्तियों के विषय में उन्होंने इस आत्मकथा में उद्‌घाटित करते हुए अपने परम मित्र कर्कल एवं उसकी पत्नी चम्पा के साथ बिताये समय को पाठक के समक्ष चित्रित किया है।

कर्कल उनके मित्र थे एवं उनकी पत्नी चम्पा तीनों एक दूसरें के प्रति कोमल

भावनायें रखते थे एवं दुख–सुख के सांझीदार थे। अचानक कर्कल की मृत्यु का कुठाराघात बच्चन सहन नहीं कर पाते हैं वे इस दुःख के सागर में चम्पा के साथी बनकर अनजाने में ही आत्मिक रूप से जुड़ जाते हैं। भावनाओं की इतनी सूक्ष्म एवं निष्पक्ष अभिव्यक्ति शायद, ही कोई लेखक कर पायेगा। आंसुओं की भाषा समझने को भी आंसुओं भरा हृदय भी होना आवश्यक है। समाज के नियमों की कठोरता हृदयों पर शासन नहीं कर सकती है। बच्चन के वियोगी कवि की नींव शायद कर्कल एवं चम्पा के प्रेम एवं स्नेह के साथ ही रखी गयी।

१९२६ में बच्चन ने श्यामा नाम की लड़की से विवाह किया। उनकी अभिव्यक्ति में, उनके साहित्य में, उनकी कविता में श्यामा प्रेरणा बन कर उतरती चली गयी। प्रेम की यही अभिव्यक्ति बच्चन ने हलाहल में जिक्र उद्‌घाटित की है। अपनी जीवन संगनी के विषय में बच्चन ने इस आत्मकथा में जो भाव व्यक्त किये हैं वे एक भावुक इंसान के भाव हैं। पत्नी के प्रति सखा भाव प्रेम भाव एवं स्नेह का भाव व्यक्त किया है। श्यामा की बीमारी एवं मृत्यु से साक्षात्कार करके बच्चन अपनी साहित्य यात्रा में उतरते गये।

जीवन का जो सत्य उन्होंने भोगा वह अपने काव्य में उतार दिया एवं आत्मकथा में व्यक्त किया है। पति–पत्नी का आत्मिक मिलन ही वास्तव में मिलन है। श्यामा की रूग्णावस्थ में वे आत्मिक रूप से उससे गहरे जुड़े हुये थे। शारीरिक वासना को भी बच्चन ने काव्य के द्वारा ही सन्तुष्ट किया। यही उनकी सम्पूर्ण अभिव्यक्ति है – यथा –

वासना जब तीव्रतम थी,
बन गया संयमी मैं।
है रही मेरी क्षुधा ही,
सर्वदा आहार मेरा।

इन्हीं क्षणों में बच्चन अपनी काव्य 'समाधि' में डूब जाते। काव्य सृजन को वे समाधि ही मानते हैं कला के माध्यम से अनुभूतियों में जीते हैं उन्हें अभिव्यक्त करते हैं। श्यामा तब प्रेरणा के रूप में उनके समक्ष होती थी। इसी बीच बच्चन ने कहानियां लिखी संग्रहित की लेकिन अप्रकाशित ही नष्ट की एवं पूर्णरूप से काव्य को ही सर्मपित हो गयी। 'तंरन हार' उनका पहला संग्रह छपा। अपने प्रथम संग्रह प्रकाशन की प्रथम अनुभूति बच्चन ने 'क्या भूलू क्यां याद करूं' में व्यक्त की है।

आत्मकथा में बच्चन स्वयं के जीवन स्मरणों घटनाओं के साथ देश काल की समस्याओं एवं घटनाओं को भी वर्णित करते हुए चले हैं। उस समय देश की क्रान्तिकारी परिवर्तन की लहर चली थी। गांधी जी का डांडी मार्च एवं युवा लोगों की क्रान्तिकारी आन्दोलन में भूमिका पर भी बच्चन ने प्रकाश डाला है। इसी सन्दर्भ में उनकी आत्मकथा में एक दो पात्र और आये वे हैं प्रकाशो (रानी) एवं श्री कृष्ण जो तत्कालीन अन्दोलन से जुड़े हुऐ थे। बच्चन ने व्यक्त किया है कि उनकी कविता में अप्रत्यक्ष रूप से इन पात्रों की भी प्रेरणा रही है इन सभी घटनाओं के बीच 'मधुशाला' एवं खैयाम की मधुशाला का अनुवाद भी सृजनपथ पर अग्रसित रहा।

'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' बच्चन अतीत का एक दर्पण है सारे घटनाक्रमों के बीच उनके साहस उनके सृजन एवं दुख की अभिव्यक्ति है। अपने अन्तरमें जो दुख एवं व्यथा वे वर्षो छिपाये रहे उन्हीं को लेखनी के माध्यम से इस आत्मकथा में उतार दिया है। श्यामा की मृत्यु उनके वियोग में काव्य रूप होकर अमर हो गई है। सुख एवं दुख ईश्वर समान रूप से ही देता है। जहां एक ओर जीवन संगनी का वियोग होता है वहीं साहित्य जगत में बच्चन को हाथोंहाथ लिया जाता है।

जीवन के इन दो पहलुओं दुख एवं सुख को बच्चन ने आत्मसात् करके इस आत्मकथा में पाठकों के साथ निर्दोष रूप से उद्घाटित कर दिया है। 'मधुकलश' नाम के काव्य संग्रह में वे मृतकों के घर से तुलना करते हैं। अपनी जीवन संगनी को अपनी कविता के माध्यम से सच्ची श्रद्धांजलि देने वाले बच्चन की आत्माभिव्यक्ति इस आत्मकथा में हुई है। वे पुस्तक के अन्त में लिखते हैं –

'पिछले बारह वर्षो में मैं जिस अनुभवों से गुजरा था वे हर्षो-पादक हृदय विदारक, और इनके बीच की जाने कितनी स्थितियों के थे। मेरे सुकुमार, भावुक, भावनाप्रवण हृदय ने सबको झेला था, सहेजा थ, सबसे प्रभाव प्रेरणस ग्रहण की थी ... . मैं अन्धकार की ओर मुह किये चला जा रहा था, दूर मंद, मंदतर होती अपने अतीत की प्रतिध्वनियों से दूर, धुंधली से और धुंधली होती अपने विगत की प्रतिछायाओं से'।

बच्चन के काव्य की अभिव्यक्ति की परिस्थितियों को बहुतों ने पहचाना परखा एवं समझा था जीवन के तम को किस प्रकार अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया ये राजनाथ पाण्डेय के इन विचारों से प्रकट होता है –

'वास्तव में मनुष्य जब स्वस्थ रहता सन्तुष्ट रहता है, स्वयं सम्पन्न और आश्वस्त रहता है, जब वह दर्शन का कंपन करता है और जब वह रिक्त रहता अभाव ग्रस्त रहता है, चिन्तित और उद्विग्न रहता है तब कविता को गायन करता है। बच्चन ने भी यह उद्घोष तब किया था जबकि उनके श्यामा संग थी। उपलब्धि पूर्व थी, परन्तु जब श्यामा संग छिन गया .... तब बच्चन भी दार्शनिक न रह कवि हो गया'।

'क्या भूलूं क्या याद करूं' की सभी घटनायें अविस्मरणीय है पाठक इस आत्मकथा को पढ़कर कुछ भी भूल नहीं पायेगा। उनके हृदय की निष्पक्ष अभिव्यक्ति हिन्दी साहित्यजगत में याद रखी जायेगी।

इस आत्मकथा में उनके जीवन के प्रारम्भ के क्षणों की बाल्यावस्था के सुकुमार क्षणों की, अनुभूति की अभिव्यकित है। युवावस्था की तरंगों उन्मादों एवं उत्कंठाओं के अनुभवों की अभिव्यक्ति है। विरह की संवेदना मिलन की प्रफुल्लता दोनों की आत्मिक अभिव्यक्ति है। भाषा की सुदृढ़ता एवं घटना क्रम के तारतम्य को तत्कालीन परिस्थितियों एवं मनःस्थितियों को प्रभावशाली ढंग से चित्रण करके इस पुस्तक की मौलिकता को बनाये रखा है।

बीच–बीच में अपने अनुभवों एवं संस्मरणों के साथ बच्चन ने अपने काव्य सम्बन्धी विचार, दर्शन सम्बन्धी विचार एवं देश की समस्याओं पर अपने स्वस्थ विचार भी व्यक्त किये हैं। कहानीकार की तरह अपने जीवन की कहानी को लिपिबद्ध किये हैं तमाम उतार चढ़ावों, विभिन्न सोपानों से गुजरते हुए जो अनुभव हुए एवं जो व्यक्ति उनके सम्पर्क में आये सभी कुछ इस आत्मकथा में वर्णित है। किसने प्रभावित किया किसने निराश किया एवं किसने आशायें प्रज्वलित की सारा घटनाक्रम रोचक तथ्यों एवं मनमोहनी भाषा के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।

आत्माभिव्यक्ति कविता में तो स्पष्ट दिखती ही है लेकिन वहीं कवि हृदय गद्य रचना में अपनी लेखनी से अपनी भावनायें व्यक्त करता है वह एक रोचक कहानी बन जाती है। उस कहानी में आन्तरिक विचार हो स्वयं का प्रगटीकरण हो वह आत्मकथा होती है। बच्चन की आत्मकथा का प्रथम भाग 'क्या भूलूं क्या याद करूं' रोचक एवं सत्य जीवन की कहानी है।

'क्या भूलूँ क्या याद करूं' के सम्बन्ध में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने विचार व्यक्त किये हैं वे इसे जीवंत व साहित्य मानते हैं – **'यह कथा बड़ी सरस और जीवंत बनी है इसमें केवल बच्चन जी का परिवार और इनका व्यक्तित्व ही नहीं उभरा है बल्कि उनके साथ समूचा काल ओर क्षेत्र भी अत्यन्त जीवंत रूप में उभरकर सामने आया है'।**

यह आत्मकथा बच्चन के मानस मंथन का परिणाम है भिन्न–भिन्न परिवेश में रहकर भिन्न–भिन्न व्यक्तियों के मन को पढ़ने के बाद जो मानस मंथन उन्होंने किया वहीं विचार अपनी आत्मकथा में व्यक्त कर दिये, जीवन के सोपानों को पार करते हुए अतीत की स्मृतियों को आत्मकथा में समेट दिया है। दूसरों की मनःस्थिति को अपनी भावनाओं से अनुभव किया और उन भावनाओं की स्मृतियों को चित्रित करके अपने साहित्यकार संवेदनशील मन को शांत किया है। एक साधारण मनुष्य की असाधारण भावनायें, विचार व्यवहार संवदेना सभी कुछ आत्मकथा में प्रस्तुत है। बच्चन अपनी इसी आत्मकथा के कारण सम्पूर्ण संसार से अपने को जुड़ा हुआ पाते हैं साधारण जनों में एकता पाते हैं।

आत्मकथा की भूमिका में बच्चन ने अपनी आत्माभिव्यक्ति इन शब्दों में व्यक्त की है – **'मेरी जिन अभिव्यक्तियों से आपके मन को भी यत्किचित् शांति - शांति शब्द मैं इतने व्यापक अर्थ में प्रयोग कर रहा हूँ कि उसमें अशान्ति भी शामिल हो सके मिलती रही है, मैं उन्हें अपने मन को ही शान्ति देने के लिये प्रस्तुत कर रहा हूँ'।**

'क्या भूलूं क्या याद करूं' में बच्चन ने अपने जीवन की जिस मनःस्थिति का उल्लेख किया है जब उनके दुखों ने उनके मन के आंगन में आंसू की बूंद टपकायी और वह प्लावन रूप ले काव्य में उतर गई और गीतों का सावन में उठता गया वे लिखते रहे। उन क्षणों को सृजन में आबद्ध करने के लिये वे समय की प्रतीक्षा में रहें क्योंकि उन स्थितियों को भोगने वाले बच्चन कवि कोई और थे उसको सृजन में आत्मकथा के रूप में व्यक्त करने वाले बच्चन कोई और हैं। अपने सृजन के क्षणों के अनुभवों की अभिव्यक्ति को 'क्या भूलूं क्या याद करूं' में प्रतिष्ठित किया है। आत्मकथा के एक अंश में उपरोक्त विचार वे इस तरह व्यक्त करते हैं –

'मेरे जीवन की नौका तरंगों के साथ उपर नीचे होने लगी और यह प्लावन गीतों का एक सावन भी मन में उठता आया। एक समय उन तरंगों पर झूले की पेगों सा आनन्द लेकर मैं परम संतुष्ट हो सकता था। अगर उन आनन्द के क्षणों को मुझे

सृजन में आबद्ध करना होता तो मैं समय की प्रतीक्षा करता - वर्ड्स वर्थ की 'इमोशन्स रि कलेक्टिड इक्वैलिटी' के सिद्धान्त के अनुसार। मैं नहीं कह सकता कि वह सिद्धान्त गलत है। ऐसा पुनः स्मरण मेरे सृजन के अनुभव में भी आ चुका है। शायद इसी बात को टी.एस.इलियट ने आधुनिक मुहावरे और शब्दावली में इस प्रकार कहा है कि जो भोगता है वह व्यक्ति और है, जो सृजन करता है वह व्यक्ति और है। मूलतः एक ही बात को शब्दों के उलट फेर से कई तरह से साहित्य संसार में कोई बात कही गई है। जब मैं उन दिनों के सृजन के अनुभवों का स्मरण करता हूं तो मुझे लगता है कि जो व्यक्ति भोग रहा था। जीवन सिद्धान्तों की जड़ता में नहीं चलता, सिद्धान्त जीवन की अनुभूतियों पर चलाये जाते हैं और इतना हम मान लेंगे तो बहुत सी भ्रम पूर्ण रूढ़ियों से मुक्त हो जायेंगे।, कि जीवन विरोधाभाषी भी है'।

सृजन में अनुभूति के सम्बन्ध में आगे लिखते हैं कि – 'मेरी स्मृति स्पष्ट है मैं साथ-साथ सृष्टा भोगता था। किस मानसिक प्रक्रिया से यह संभव हो सका, इसकी व्याख्या मैं नहीं करनाचाहता, संकेत शायद पहले भी कर चुका हूं। मुंह खोलने का अधिकार मुझे नहीं है, पर मुझे अपनी एक अनुभूति को ईमानदारी के साथ अंकित कर देने का अधिकार तो है ही'।

नीड़ का निर्माण फिर

'नीड़' पक्षी के घोंसले को कहते हैं पक्षी अपना नीड़ जीवन में अनेक बार निर्मित करते है एक बार उजड़ जाने पर भी। इस आत्मकथा का शीर्षक यही आशावादी दृष्टिकोण का पाठ पढ़ाता है। दुख, निराशा, मृत्यु से साक्षात्कार करके किस प्रकार बच्चन 'अपने नीड़ को सुसज्जित करते हैं। यहां आत्मकथा स्वयं में एक प्रेरणा है निराश मन के लिये हताश जीवन के लिये।

आत्मकथा की शुरूआत में बच्चन ने पत्नी की मृत्यु के पलों का मार्मिक चित्रण किया है। भूमिका मानतेन के शब्दों से शुरू की है। जिसे वे स्वयं की अभिव्यक्ति कहते हैं अर्थात् आत्मकथा लिखने से उनका अभिप्राय नितान्त निजी है। अपने गुण दोष सभी पाठक के सामने निष्पक्ष रूप से रखने का प्रयास है। यही बेबाकी बच्चन की आत्मकथा की आत्मा है।

श्यामा की मृत्यु को बच्चन स्वप्न द्वारा ही अनुभव करते हैं स्वप्न में देखा गया सुख यर्थात् में दुख का रूप लेता है। मृत्यु का साक्षात्कार करता है। अपनी जीवन संगनी के विलग होने पर उनकी जो प्रतिक्रिया होती हैं। जींवन में जो झंझावात् आता है उसे बच्चन ने शब्दों में इस आत्मकथा में व्यक्त किया है। उस मृत्यु से उनके अन्दर का मानव कम कवि ज्यादा प्रभावित हुआ। कविता उदास, निराश एवं कातर हो उठी। शोकातुर हृदय अंधेरे में ही स्वयं को ढूंढने लगा। काव्य में बच्चन ने अपने शोक सन्तप्त हृदय की भावनायें व्यक्त की तो हैं परन्तु वर्षो बाद आत्मकथा में गद्य लिखते समय भी उनका चित्रण एवं भावनायें उतनी ही मार्मिकता से व्याप्त हुई हैं। शव से श्मशान तक की विभीषण एवं उससे जुड़े हुई रूढ़िवादी परम्पराओं एवं समाज की कठोरता सभी को व्यक्त किया है।

उनके जीवन में जो अंधकार आया वह उनके साहित्य में भी दुख के काले घने बादलों की तरह कुछ वर्षो तक छाया रहा। बरेली के कवि सम्मेलन में उनकी कविता से प्रेरित एक निराश युवक की मृत्यु ने उनकी अन्तरात्मा की आवाज को जगाया। बच्चन ने अपनी कविता में विकृति को पहचाना एवं आत्मकथा में उसे स्वीकार भी किया है। यह साहस कम साहित्यकार ही कर पाते हैं। उन्होंने स्वयं को साहित्य एवं नैतिकता के तराजू

पर रखकर तोला है एवं स्वीकार किया है और स्वयं को भारविड (विकृत) कहने का साहस किया। आत्माभिव्यक्ति की इससे ज्यादा निष्पक्ष और क्या होगी। 'नीड़' से निर्माण तक में वे स्वयं कहते हैं –

'मुझे पालायनवादी, भाग्यवादी, विषपासमृ, इंद्रिय-सुख, लोलुच, मद्यपरायण आदि कहा गया था, पर किसी ने मुझे 'मारबिड' कहने का दु:साहस नहीं किया था अपने को यह कहने का साहस मैंने किया -

'मैं स्वयं करता रहा हूँ
जिस तरह प्रतिरोध अपना
मानवों में मौन मेरा
उस तरह से कर सकेगा।'

अपने जीवन स्वप्न को सुन्दर बनाने के लिये बच्चन ने शोक सन्तप्त स्मृतियों को पीछे धकेला एवं भविष्य के पथ की ओर नई आशा एवं विश्वास के साथ चल पड़े। उनमें जीवन का यह प्रेरक भाग निराश पाठकों को एक नई दिशा ही देता है। अपने विद्यार्थी जीवन की शुरूआत कर वापस अध्ययन की ओर चल दिये एवं स्वस्थ चेतनापूर्ण साहित्य का सृजन किया। इस आत्मकथा में बच्चन ने अपने विद्यार्थी जीवन एवं जो लोग उनके सम्पर्क में आये उनका वर्णन किया है। आदित्य प्रकाश जोहरी, ब्रजमोहन गुप्त एवं बेनपुरी, दिनकर।

इन लोगों द्वारा समय पर उनका उत्साहवर्धन किया एवं प्रशस्त मार्ग की प्रशंसा की। डा. झा एवं शमशेर आदि प्रात्र जिन्होंने उनमें सोचने की दिशा आशापूर्ण कर दी।

देहरादून भाग का वर्णन इस आत्मकथा में बच्चन ने एक उत्साहपूर्ण आशावादी एवं लक्ष्यपूर्ण यात्रा के रूप में किया है। देहरादून के बाद मंसूरी एवं लायल पुत्र की यात्रा फिर वापस इलाहाबाद विश्वविद्यालय का वर्णन किया है। अध्ययन एवं अध्यापन व अध्यापक की भूमिका व क्रियाकलापों का रोचक वर्णन बच्चन ने हलके–फुलके रंग में किया है।

इलाहाबाद से बनारस ट्रेनिंग कॉलेज का समय किस प्रकार व्यतीत किया बच्चन इस आत्मकथा में किसी कहानीकार की तरह ही घटनाओं, व्यक्तियों एवं उनके कार्यों व व्यक्तित्व के सम्बन्ध में तारतम्यता से वर्णन करते हुए चले है। शिवमंगलसिंह सुमन के

व्यक्तित्व एवं कविता पर बच्चन ने प्रभावशाली ढंग से उनकी प्रशंसा की।

विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य एवं अध्यापक एवं अध्ययन के मध्य अपने अन्दर बैठे हुए कवि को उन्होंने व्यक्त किया है जीवन में तमाम भूमिकायें निभाते हुए भी भूल रूप से बच्चन एक भावुक, विचारशील, चिन्तनशील कवि ही रहे हैं जिस भूमिका में आये उस पर उन्होंने प्रतिक्रिया भी व्यक्त की है। स्वयं को अध्यापक बनाकर अपनी सत्ता का अंश कायम किया है। घर के मकान में रहते हुए वे वहां के परिवेश से गहरे जुड़े रहे। वहां की भाषा एवं रीतिरिवाज एवं स्त्री–पुरूष के आचार–व्यवहार का वर्णन नितांन्त आलौकिक ढंग से किया है। आत्मकथा को पढ़ने पर यह ज्ञान होता है कि बच्चन ने अपने व्यतीत जीवन के हर पहलू को कितने सूक्ष्म ढंग से देखा था। वही सूक्ष्मदर्शी व पाददर्शी वर्णन इस आत्मकथा की मौलिकता है। सारी स्मृतियों को एक साथ लेकर चलना एवं उसे साहित्य के तारतम्य में ठीक बैठालाना दुष्कर कार्य है।

बच्चन ने आत्माभिव्यक्ति के साथ–साथ तत्काल समाज के ढांचे की अभिव्यक्ति भी की है। विचारों भावनाओं एवं क्रियाकलापों, संस्कारों की स्पष्ट अभिव्यक्ति की है। बहुत गहरे तक वे अपने अतीत से एवं देश–परिवेश से जुड़े हैं उस परिवेश की मिट्टी की सुगंध को वे सदैव अपने हृदय में पाते हैं ऐसा उन्होंने व्यक्त किया है – जो मानवीय सम्पर्क उन्होंने चक–कटघर की धरती पर पाया वैसा उच्च सम्भ्रान्त कहे जाने वाला तथाकथित समाज में नहीं।

नारी की अनिवार्यता किशोरावस्था से वृद्धावस्था तक कवि हृदय प्रेरणा के रूप में पाता है। बच्चन के जीवन में श्यामा, चम्पा के बाद आने वाली नारी 'आयरिश' थी जिसके प्रति प्लेटेनेकि प्रेम अतीत अशरीरी प्रेम का वर्णन बच्चन ने नीड़ से निर्माण तक में किया है। आइरिश की आसक्ति को कालांतर में कवि अपने काव्य में यथोचित स्थान दिया एवं एकांत संगीत की कवितायें शायद इसी प्रेरणा का रूप हैं।

आपके जीवन में करूणा अवसाद् के तमाम क्षणों के उपरान्त वह क्षण भी आया जब फिर से नीड़ का निर्माण शुरू किया। यह क्षण लाने वाली नारी मिस सूरी जो बरेली में बच्चन की संवेदना को समेटती हुई स्थाई रूप से उनके जीवन की सहचरी बनी।

साहित्य में 'सैनिक' मूड की अभिव्यक्ति बच्चन ने आत्मकथा में की है इसी 'सैनिक' मूड में उन्होंने अपनी करूण कविता –क्या करूँ संवेदना तुम्हरी लेकर' का पाठ तेजी

के समक्ष किया और दोनों की संवेदना आपस में जुड़ गयी। काव्य में वेदना की अभिव्यक्ति जीवन की अभिव्यक्ति बन गई। साहित्य से जीवन जुड़ गया। वे लिखते हैं –

'तेजी ने अपना भाग्य मेरे साथ जोड़ दिया था, वे अपने सम्बन्धियों मित्रों को, अपना नगर, अपना गांव अब तक के अपने परिचित परिवेश को त्यागकर अन्य प्रान्त भाषा भाषियों के बीच, अपरिचतों, अजनबियों के मध्य आने को तैयार थी केवल इस लिये कि वहां तक अपना होगा जिसमें वे अपनी होगी, एक दूसरे की आवश्यकता, एक दूसरी की पूर्ति। नारी प्रेम निबाहने सेलेकर प्रथा निबाहने तक के लिये कितना बड़ा बलिदान दे सकती है'।

बच्चन ने नारी के रूप में देवी की दिव्यता, मां की ममता, सहचरी की सद्भावना एवं प्राणाधार की प्राणदायनी नारी को अनुभव किया। पन्त जी ने नारी की अभिव्यक्ति में मां, सहचरि, प्राण के रूप में उसी भाव की विस्तृत व्याख्या बच्चन ने अपने साहित्य में जीवन के अनुभवों के आधार पर करते हैं। उनकी आत्मा में जो नारी विराजमान है उसी के विभिन्न रूपों की अभिव्यक्ति बहुत प्रभावशाली तार्किक ढंग से की है।

आत्मकथा में बच्चन का जीवन तमाम प्रेरणाओं भावों, विचारों, संवेदनाओं से जुड़ा हुआ है संवेदनाओं उत्कंठाओं करूणा, प्रेम भाव नारी से जुड़े हैं जिन्हें वे स्पष्ट करते हैं –

कर परिश्रम कौन तुमको
आजतक अपना सका है
खोजकर कोई तुम्हारा
कब पता भी पा सका है
देवताओं का अनिश्चित
यदि न ही वरदान तुम हो
कौन तुम हो।

नारी से कवि का संबन्ध करूणा में है बच्चन के जीवन में नारी प्रेम करूणाजन्य रहा है तेजी का आगमन अप्रत्याशित, अयाचित, अचनानक हुआ करूण का भाव प्रेम ने लिया एवं वहीं प्रेम बच्चन भी 'सतरंगनी, प्रणय पत्रिका, मिलनयामिनी' में व्यक्त हुआ।

बच्चन का सम्पूर्ण जीवन कला की सहज स्वाभाविक, क्रमागत गति से बदलता

रहा। परिणय से प्रेम एवं नीड़ का निर्माण हुआ एवं नीड़ के नवागुन्तक पर्दापर्ण हुआ। बच्चन अपने इस आत्मचित्रण में प्रेम परिणय जैसे सुकुमारभावों के बीच डेरा काल के क्रान्तिकारी भावों एवं दशा का वर्णन करना भी नहीं भूले हैं। सच्चा साहित्यकार या कवि वही है जो स्वजन्म भूमि देश को रचना से जोड़कर चलता है। इस आत्मकथा में बच्चन ने सत्याग्रह एवं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में होने वाले क्रान्तिकारी परिवारों का भी उतना ही सटीक भावग्रही चित्रण किया है।

इन्हीं परिवर्तनों के मध्य तेजी ने अमिताभ को जन्म दिया। उस दिवस की स्मृति कर बच्चन ने अपनी कविता में व्यक्त किया है –

फुल्ल कमल
गोदनवल
मोद नवल
गेह में विनोद नवल
बाल नवल
लाल नवल
दीपक में ज्वाल नवल

जीवन में सब कुछ व्यवस्थित होने पर भी कवि हृदय अकुलाता है व्यथित होता है क्योंकि उसमें प्रस्फुरण को मार्ग नहीं मिलता बच्चन ने भी इसी अकुलाहट का अनुभव किया एवं अध्यापक ट्रेनिंग के लिये फौज की ट्रेनिंग ली। जीवन के इसी सत्र में महत्वपूर्ण घटना बच्चन ने साहित्य में धरी 'बंगाल का काल'। यह रचना अनवरत ३६ घंटे में पूर्ण की, जिसमें वहां की विभषिका मृत्यु के ताण्डव का वर्णन किया है।

'सतरंगनी' की रचना भी इन्हीं वर्षो में हुई। कवि के मन में जो उठ रहा था घुमड़ रहा था सतरंगनी के शब्दसेतु द्वारा कविता में बंध गया। जिसका एक छोर कल्पित संगनी है दूसरा छोर जीवन सहचरी है। सतरंगनी के गीत से कवि प्रेमी की उद्भावना संगीत का आरम्भ होता है।

आत्मचित्रण के अन्त के पृष्ठों में बच्चन साहित्य के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये हैं जो उनकी आत्माभिव्यक्ति है कि सुख–दुख, शोक–चिन्ताओं के बीच मनुष्य टूटता बनता है। कलाकार इन्हीं में मानवता देख लेता है उन्हें कला में बदल देता है। एवं आस्वादन का विषय बना देता है। कलाकार के पास सृजन से मुक्ति की कोई कल्पना नहीं होती। शायद उसकी सांस–सांस सृजन हो जाती है। कवि का सृजन वैचारिक अथवा मानसिक स्तर से होता है, मार्मिक अनुभूतियों से होता है। लिखने में एय्याशी से बच्चन

इंकार कर रहे हैं। उन्होंने स्वयं को तभी व्यक्त किया है जब कोई भार हुआ है यही भर उन्हें सहज स्वाभाविक सृजन की ओर प्रेरित करता है।

एकरसता का स्वाद चखते–चखते कवि बच्चन ने एक दिन स्वरों को अंग्रजी कवि 'कीटस' की कविताओं के निकट पाया एवं उनकी मार्मिकता एवं गम्भीरता को अपना शोध–विषय बनाया। बच्चन स्वयं का कीट्स से प्रभावित होना स्वीकार करते हैं एवं स्वयं में व कीट्स में एक रहस्यपूर्ण आत्मीयता की भावना पाते हैं यही भावना उन्हें शोध के लिये प्रेरित करती हुई इंगलैण्ड पहुंचती है। नीड़ का निर्माण कर पक्षी एक बार फिर नीड़ से दूर बसेरे की ओर चल देता है।

उपरोक्त विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि नीड़ का निर्माण फिर आत्मचित्रण में बच्चन ने सत्य अर्थो में स्वयं को पाठक के समक्ष अभिव्यक्त क़िया है। भिन्न–भिन्न जगहों पर पुस्तक क्रमानुसार रोचक तथ्यों के साथ आगे बढ़ी है उन्हीं तथ्यों एवं जीवन संस्मरणों के मध्य काव्य, जीवन, नारी, साहित्य आदि विषयों पर अपनी आत्माभिव्यक्ति भी करते हुए चले हैं। दशकों पूर्व उन्होंने स्वयं के जीवन में जो विचार अनुभव किये जो अनुभूतियां स्मृतियां व्यतीत की सभी को निष्पक्ष रूप से चित्रित किया है। उनकी आत्मकथा की अनुभूति अधिक है। साहित्य के मानसिक मापदण्डों से चलकर आयी हुई ये आत्मकथा साहित्य की एक घटना है।

जीवन ही हर परिस्थिति में अप्रिय, प्रिय, क्रूर, निरर्थक सी स्थितियों में कवि सृजन के पथ पर बढ़ता गया इस सृजन पथ का एक पड़ाव यह आत्मकथा है। इस पड़ाव की छाया में पाठक बैठकर अपनी सृजन साहित्य जिज्ञासा शान्त करता है एवं एक भाग पढ़ने पर आगे के लिये उत्कंठित हो उठता है। इस चित्रण में बच्चन की अनुभूतियों के आधार साहित्य राग में नैतिक तन्तुओं की समीक्षा है प्रस्थापित किया है, भोगे हुए सत्य को कला की सघनता एवं उद्यमता में वर्णित किया है। जीवन के सत्य के साथ कला की सही सघनता बच्चन की आत्मा की अभिव्यक्ति बनकर आत्मकथा में अवतरित हुई है। उनकी विगत स्मृतियां इस आत्मकथा की सहचरी है जो हर क्षण उनके साथ रही हैं। वे स्वयं कहते हैं–

'जिस प्रकार का आत्मचित्रण मैं कर रहा हूँ उसके लिये अपनी स्मृति का ही सहारा मैंने विशेष रूप से लिया है। घटनायें और परिस्थितियां आंखों के सामने मूर्तिमान हो तो मानसिक स्थिति भी उस समय की सहज ग्राहय हो जाती है'।

महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त ने आत्मकथा के इस खण्ड के विषय में कहा है कि **'इस खण्ड की कथा में भी उपन्यास की सर्व रोचकता है। भाषा में वही शैली का जादू है। इसमें जीवनीकार का आर-पार दर्शी सशक्त व्यक्तित्व अधिक गहरे रंग में उभरा है'।**

बसेरे से दूर

'बसेरे से दूर' बच्चन के आत्मचित्रण का तीसरा खण्ड है। जिसमें उन्होंने अपनी शोधयात्रा के विषय में लिखा है। इस खण्ड के आरम्भ में 'हंस का प्रवास' शीर्षक देने वाले थे लेकिन शायद 'नीड़ का निर्माण' करने के उपरान्त पक्षी अपनी जीविका के लिये बसेरे से दूर जाता ही है ऐसा प्रकृति का नियम है।

बच्चन भी शोध हेतु अपने घर से दूर कैम्ब्रिज में जाकर पी.एच.डी. की उपाधि लेकर वापस अपने बसेरे में आये। कैम्ब्रिज प्रवास की उन्हीं स्मृतियों एवं संस्मरणों को इस आत्मचित्रण में वर्णित किया है। इस पुस्तक में बच्चन ने स्वयं के अध्यापक, शोधक, आलोचक, रूपों को प्रस्तुत किया है। जहां 'नीड़ का निर्माण' में बच्चन ने अपने काव्य और कविताओं के सम्बन्ध में अधिक प्रकाश डाला है वहीं इस आत्मकथा में स्वयं के परिचितों, मित्रों एवं शोधकाल के प्रवासी भारतीय एवं विदेशी संस्कृति पर काफी प्रकाश डाला है।

अध्यापन को बच्चन जीविका के लिये एक स्वच्छ, ईमानदार, सुविधाजनक साधन समझते हैं। उन चिंता ग्रस्त दिनों में भी अध्यापन में अपने कर्त्तव्य के प्रति निष्ठा एवं विद्यार्थियों के प्रति सद्भावना का जो पालन किया उसका श्रेय बच्चन उस युग की आर्दशवादिता एवं गांधी जी के विचारों को देते हैं जिनसे वे प्रेरित थे। वे अध्यापन के समय अपने विद्यार्थियों के मध्य बैठकर अपनी कटु परिस्थितियों को भूलकर साहित्य, कविता और नाटक की दुनियां में पलायन कर जाते।

विश्व विद्यालय में कार्यकरते समय जिन व्यक्तियों के सम्पर्क में बच्चन आये उनके व्यक्तित्व एवं कार्यो के विषय में विचार व्यक्त किये हैं। डा. झा., डा. दस्तूर, डा. देव, पाण्डेय जी, इन सभी व्यक्तियों के बीच रहते हुए बच्चन जी अपने शोधविषय कि लिये लन्दन रवाना होते हैं। अपने स्वजनों एवं प्रियजनों को छोड़कर जब व्यक्ति दूर जाता है उस भावना की अभिव्यक्ति बच्चन ने शब्दों में की है।

लन्दन पहुंचकर 'मार्जरी' नाम की महिला से उन्होंने बहुत अपनेपन का अनुभव किया एवं एक मां की तरह मार्जरी ने विदेशी संस्कृति, रिवाज आचार व्यवहार एवं वहां के भूगोल से परिचित करवाया। इस पुस्तक को लिखते समय उस आंग्ल महिला के प्रति

बच्चन शब्दों द्वारा आभार प्रगट करना नहीं भूले हैं।

बच्चन की वर्णात्मक शैली भी आत्मकथा में सर्वत्र दृष्टिगत हुई है अपने प्रवास के समय कैम्ब्रिज यूनीर्वसिटी की जो भव्यता एवं सुन्दरता का वर्णन किया है पाठक उसे सहज ही अनुभव कर सकता है यथा–

'यों तो सारा केम्ब्रिज ही स्वच्छ एवं सुन्दर है पर मंद-मंद बहती बड़ी नहर सी कैमनदी के किनारे-किनारे सदियों पुराने काले जो की इमारतों में सिलसिले, ... पानी की सतह को सहलाने वाले वृक्षों की कतारे उनके पीछे सुनहरे डैफोडिल के खेत और उनकी पृष्ठभूमि में झाड़ियों का हरियाली फैलाव - सब मिलकर एक ऐसा शांत स्वप्निल चित्र प्रस्तुत करते हैं कि उन्हें देखते आंखे नहीं भरती और अगर कैम्ब्रिज का थोड़ा इतिहास शांत हो तो स्मृतिपटल पर उभरती है उन प्रतिभाओं की आकृतियां न्यूटन, बेकन, डार्विनए स्पेसर, कामवेल, मिल्टन की मार्लो में, थैकरे वर्डसवर्थ, वाइरन, टेनिसन की, अपने देश के रामानुजय अरविन्द, इकबाल, सुभाष चन्द्र बोस, जवाहर लाल नेहरू। मैंने पहली ही दृष्टि में केम्ब्रिज को समदिक् ऊर्ध्व दोनों आयामों में देखा और उसके प्रति अपनी प्रथम प्रतिक्रिया बतलाना चाहूं तो मैं यही कहूंगा कि मैं अभिभूत हो गया इसकी सौम्य, सुन्दरता पर, मुग्ध उसकी चमत्कारी देन के प्रति नतमस्तक'।

किसी शिक्षालय के प्रति शिक्षार्थी की इससे सुन्दर अभिव्यक्ति और क्या होगी। यह बच्चन की वर्णन क्षमता ही है जिसने केम्ब्रिज को भी अपने काव्य संसार में स्थापित कर लिया। केम्ब्रिज एवं आक्सफोर्ड के भूगोल एवं वहां की शिक्षा पद्धति व्यवहार एवं नियम कानूनों की विस्तृत चर्चा बच्चन ने इस आत्म चित्रण में की है। वहां का पूर्ण इतिहास भी वे पाठक के समक्ष रखना नहीं भूले हैं।

सृजन अभिव्यक्ति का एक माध्यम है एवं काव्य सृजन, गद्य साहित्य, कहानियां आत्मचित्रण भी व्यक्ति की आत्माभिव्यक्ति है। इसी सृजन के सम्बन्ध में बच्चन का मानना है कि वह कविता के अर्थ तक ही सीमित नहीं है उसके अन्तर्गत शोध प्रबन्ध एवं सम्पूर्ण शिक्षा सामग्री सम्मिलित है। सृजन के लिये दोनो स्थितियां अनुकूल है शांत मनःस्थिति या उद्गिग्न या मन की उपभ्रमित एवं विश्राम स्थिति, तनाव खिचाव में भी सृजन किया जा सकता है।

सर्जक का क्षण अपनी सृष्टि में डूबा रहने वाला होता है। उदिग्न मन विश्राम पाने के लिये सृजन करता है। बच्चन स्वयं स्वीकार करते हैं कि उन्होंने जो सृजन प्रवास

के समय किया चाहे वह शोधप्रबन्ध हो, कविता हो, डायरी सभी कुछ तनाव की स्थिति में किया उनके साहित्य में वह कलात्मक तनाव है भाव एवं अभिव्यक्ति के माध्यम के बीच। सर्जक का वास्तविक तनावउसमें साहित्य के माध्यम से उतरता चला जाता है विश्रांत मन सृजन का उसकी आत्मा प्रदान नहीं कर सकता। अभिव्यक्ति के परिपेक्ष्य में साहित्यकार की तृषित आत्मा का भाव भरा होता है। वियोगी होगा पहला 'कवि' ही सर्जक है। अभिव्यक्ति की गहराइयों से उसकी आह निकलकर विश्व का गान बन जाती है। इसी अनुशीलन एवं मनन का प्रभाव कवि के जीवन और सृजन पर था वही प्रभाव बच्चन स्वयं पर मानते हैं।

केम्ब्रिज प्रवास में बच्चन ने सौ से अधिक कवितायें लिखी उन कविताओं की पृष्ठभूमि में एक ठोस जीवानुभूति है एवं मनोभाव है। उनकी कविताओं में भावनाओं का विस्फोट अनुभूतियों की कचोट से ही पैदा हुआ है। साहित्य को शब्दों से संवारने के बजाए उन्होंने अपनी कविता को सहज स्वाभाविक गति प्रदान की।

सृजक की पृष्ठभूमि का सही तनाव बच्चन ने 'कीट्स' के साहित्य में पाया। वे इस अनुभूति को आत्मकथा में व्यक्त करते हुए लिखते हैं –

यह बहुत बड़ा सत्य है कि कीट्स का जीवन तनावों का जीवन था .... कीट्स बड़े तनावों के बावजूद कुछ और भी भाव अपने पर आरोपित कर लिये थे .... परस्पर विरोधी तनावों ने कभी-कभी एक दूसरे के प्रभाव को नकार कर कीट्स भी एक सन्तुलन की अनुभूति भी कराई होगी। जिसे पहुंचे हुए योगी ही प्राप्त कर सकते हैं - 'समत्वं योग उच्चते'।

अपने शोध प्रबन्ध के हेतु बच्चन ने 'आयरलैण्ड' ड्बलिन आदि जगहों की यात्रा की एवं उसका वर्णात्मक चित्रण इस आत्मकथा में किया है। उनके जीवन का हर क्षण सृजन के रूप में उनके साहित्य में सामाहित हुआ है। सृष्टि को सृजन का एक अंग मानते हुए बच्चन का विचार है कि सृष्टि में भी अपूर्णतायें हैं और साहित्य में भी अपूर्णतायें हैं लेकिन मानव अपनी दृष्टि में दोनों को ही पूर्ण समझ लेता है यह सब कुछ प्रयोग से ही होता है। अभिव्यक्ति भी एक प्रयोग है जीवन सृजन की भूले व्यक्ति को सफलता के मार्ग की ओर ही अग्रसर करती हैं। वे अपने सृजन के विकास को प्रयोगों का ही परिणाम मानते हैं। सृजन एवं शोध को एक ही काल में करने के जो प्रयोग हुए अनुभव हुए उन्हीं को आत्मकथा में साहित्यिकरूप देकर अपनी साहित्ययात्रा को विकासोन्मुख बनाया।

सृजन एवं साहित्य के सम्बन्ध में बच्चन का अपना दृष्टिकोण है वह है कि कवि को अपने जीवन सत्य अनुभूतियों को वाणी देनी चाहिए वह यदि अपने जीवन में प्रतिबद्ध है तो उसे किसी और के प्रति प्रतिबद्ध होने का प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है। सृजन एकांत क्षणों की वाणी होकर पाठक का उद्‌बोधक होता है। जिस समाज एवं युग के लिये कवि सृजन कर रहा है उसके समक्ष पूरी तरह पारदर्शी हो।

इस प्रकार अभिव्यक्ति के साथ पारदर्शिता होना आवश्यक है यही साहित्यकार की कला है एवं उसका मौलिक सृजन है। साहित्यकार के लिये यह आवश्यक है कि जीवन एवं यर्थाथ के उपर खुल कर अभिव्यक्ति दे सके। जिसमे अपनी सभ्यता, संस्कृति, अपनी ऐताहासिकता अपने अस्तित्व की छाप हो वहीं साहित्य मौलिक है।

साहित्यकार अपने मानस पटल पर अपने मानसिक, संस्कारात्मक, भावात्मक अंग भी साथ रखता है। जिससे वह अपने सृजन को सुन्दर, मनोरम, सरस एवं मनभावन बना सके।

'बसेरे से दूर' लिखते समय बच्चन के मानस पटल पर अपनी आत्मकथा के समापन का अंश है। अपनी इस कथा में वे मानते हैं कि शब्द अपने जीवन की सच्ची तसवीर पाठकों के समक्ष पूर्ण रूप से नहीं रख पाये हैं क्योंकि जीवन और शब्द अलग–अलग स्तर की चीजे हैं लेकिन अपनी ईमानदारी व अध्यवसाय से आत्मकथा लिखने के प्रयास को यर्थाथ की प्रतिध्वनि ही माना है। जीवन के सत्य को शब्द के सत्य के साथ समाहित करने का प्रयास मात्र है।

एक साहित्यकार की यह निष्पक्ष अभिव्यक्ति ही है जो सत्य से पाठकों को अवगत कराकर भी इस ढंग से मुक्त होना चाहता है कि उसने साहित्य में जीवन के सत्य को सम्मिलित कर लिया है। आत्मा की अभिव्यक्ति को जीवन के सत्य की अभिव्यक्ति बना कर शब्दों में बद्ध कर दिया है।

उनकी इस आत्मकथा को साहित्य जगत के मनीषियों ने भी सराहा हैं। समझा एवं अपने विचार व्यक्त किये हैं। नरेन्द्रशर्मा लिखते हैं – **'बसेरे से दूर का पठन प्रेरणा प्रद है। इसे पढ़कर मुझे प्रेरणा मिली, चेतना मिली, उत्साह मिला। आलोचक की दृष्टिसे देखें तो भी यह पुस्तक बच्चन के मानस भवन का कलश है। भवन की नींव 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' है, दीवारें 'नीड़ का निर्माण फिर' है और छत 'प्रवास की डायरी' है। 'बसेरे से दूर' बच्चन के आत्मकथात्मक साहित्य की परिणति है'।**

दशद्वार से सोपान तक

आत्मकथा को तीन भागों में अपने भावों की अभिव्यक्ति के उपरान्त 'दशद्वार से सोपान तक' आत्मकथा का चौथा एवं पूर्ण भाग है जिसमें बच्चन जी ने घटनाओं अनुभवों को तारतम्य में प्रस्तुत किया है। 'दशद्वार' अर्थात् इलाहाबाद एवं 'सोपान' दिल्ली के गृह का नाम है। आत्मकथा के शीर्षक से ही उनके जीवन का आद्योपान्त यात्रा का आभास होता है।

इस पुस्तक में बच्चन ने साहित्य की विधाओं, हिन्दी राष्ट्रभाषा के रूप में एवं उसकी समस्याओं पर भी प्रकाश डाला है। जीवन में मृदु–कटु अनुभवों एवं स्मृतियों के साथ इलाहाबाद में व्यतीत वर्षो को विदाकर नवजीवन, नव आशाओं के साथ, दिल्ली प्रस्थान करते हैं जहां हिन्दी विभाग में सेवा का अवसर मिलता है। उसी सेवाकाल में हिन्दी शब्दावली का गहन अध्ययन कर उसके विषय पर अपनी अभिव्यक्ति इस आत्मकथा में की है।

जिस भाषा को सम्पूर्ण देश राष्ट्रभाषा मानता है उसी को अंग्रेजी दां अफसर मजाक की वस्तु समझते हैं। हिन्दी को मजाक में लेना व हल्केपन के साथ उसको जोड़ना कुछ अंग्रेजी कुंठित लोगों का पेशा है। बच्चन जो भावनायें दिल्ली में हिन्दी अधिकारी के पद की मर्यादाओं के मध्य तत्काल नहीं व्यक्त कर सके वही भावनायें हिन्दी के प्रति उन्होंने इस आत्मकथा के माध्यम से व्यक्त की है एवं देश में राष्ट्रभाषा को अस्तित्व में लाने के लिये क्या प्रयास होना चाहिए इस समस्या का भी समाधान किया है। हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में उन्होंने अपने विचार व्यक्त किये हैं –

'हिन्दी - खड़ी बोली हिन्दी, जिस प्रकार विकसित हुई है वह अपने संस्कृत मूल से अपने संबधों के प्रीत सचेत होकर आगे अपने विकास में उस स्रोत से और अधिक संबद्ध, सिंचित, समन्वित होने का प्रयत्न करेगी। पर उसका यह रूप उसके गम्भीर विषिष्ट और शास्त्रीय साहित्य तक सीमित रहेगा।'

दिल्ली में अनुवादक के रूप में कार्य करते हुए बच्चन के कवि मन ने अनुभव

किया कि वे भाषा के अनुवाद एवं लेखे–जोखे की सीमा रेखा में बंध गये हैं और काव्य सृजन की ओर नहीं हैं। नौकर शाही एवं कवि मन में जो विरोधाभास था उस मानसिक परिवर्तन के लिये वे तैयार न थे अपनी इस समस्या का समाधान उन्हें 'मैकवैथ' के अनुवाद से मिला।

सृजन के पथ पर एक और कदम अनुवाद, 'गीता' का अनुवाद मैमवैथ का अनुवाद 'अथोलो' का अनुवाद इन सभी पुस्तकों का अनुवाद करके अपनी सृजन पिपासा को तुष्ट किया। अनुवाद करके अपनी बौद्धिक कुशलता एवं कल्पना शक्ति को उद्‌बुद्ध किया है। इस सृजन पक्ष में विघ्न रूपी राक्षस भी आये लेकिन साहित्य में सृजन की साधना अनवरत् चलती रही।

इस आत्मकथा में जिन पात्रों का वर्णन एवं उनके व्यक्तित्व की समीक्षा बच्चन ने की है वे प्रमुख हैं जवाहर लाल नेहरू, राधा बाबा, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'।

नेहरू जी की हिन्दी के प्रतिभावना एवं दूर दर्शिता को बच्चन ने खूब पहचाना और समय पर उनके सुझावों एवं सलाह को कार्यान्वित भी किया। नेहरू जी की बौद्धों के प्रति भावना का उल्लेख भी किया है।

'राधा बाबा' को उन्होंने विशुद्ध संत की श्रेणी में रखा जिस तरह से वे 'काष्ठ मौनव्रत' करते, एवं फक्कड़ सन्यासी जीवन व्यतीत करते थे वह एक संत ही कर सकता है। अपनी उम्र के पचासवें–साठवें दशम में सत्संग के इस अनुभव की अभिव्यक्ति बच्चन आत्मकथा में करते हैं। 'राधा बाबा' के ज्ञान, से उनके सन्यास से एवं उनके आचार विचार से बहुत कुछ अनुगृहीत किया। उसी विचारों की इसी ग्रहणशीलता को बच्चन ने अपनी अभिव्यक्ति दी।

बच्चन की यह विशेषता है कि आत्मकथा लिखते समय वे उन सभी स्मृतियों, व्यक्तियों अनुभवों, से प्रेरित रहे हैं जिन्होंने उनको प्रभावित किया प्ररणा दी। उन सभी को अपनी लेखन अभिव्यक्ति के द्वारा यथोचित स्थान एवं सम्मान दिया है।

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' में वे एक महात्मा का प्रतिरूप देखते हैं उनकी सच्चाई, उनका खुलापन, ईमानदारी स्वच्छंद जीवन की चर्चा आत्मकथा में की है। 'उग्र' के अन्दर छिपा हुआ तप उन्होंने देखा था जिसको वे अपने साधक एवं औधड़पन में छिपाये रहते थे।

इन महान् हस्तियों से मिलकर बच्चन को ये अनुभव हुआ मानों स्वच्छंद–मुक्त

निर्बन्ध जीवन से मिल रहे हैं।

इस आत्मकथा में बच्चन ने उस समय घटी देश की सबसे बड़ी घटना 'चीन का आक्रमण' पर भी प्रकाश डाला है। हिन्दी–चीनी भाई–भाई को पीठ में जो विश्वासघात देश ने झेला उसकी एक झलक बच्चन ने अपने साहित्य में भी की। देश के नेताओं ने कवियों, लेखकों को भी अपने विचारों के आन्दोलन से जनता को जगाने के लिये आवाह्न किया था उसी परिपेक्ष्य में बच्चन की लेखनी से कवितायें निकली 'त्रिभंगिमा' 'चेतावनी' में यही भाव दृष्टिगत हुए हैं।

सन ६४ में आपको 'सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार' मिला जो चौसठ रूसी कविताओं पर १९५५ से १९६५ तक दस वर्ष विदेशमन्त्रालय में हिन्दी विशेषाधिकारी के पद पर कार्य करते हुए अवकाश प्राप्त किया। एवं राज्यसभा के सदस्य पद के रूप में ६ वर्ष तक कार्य किया। शिष्ट मंडल के प्रतिनिध के रूप में रूस, लेबनान आदि कई देशों का भ्रमण किया, उन यात्राओं का विवरण बच्चन ने बड़े ही वर्णात्मक ढंग से किया है। अपनी इन यात्राओं से कवि बच्चन ने अपने साहित्य के लिये कई जगह से प्रेरणा ली। मास्कों में एक थियेट्र में वहां के पारंपरिक नृत्य 'स्वान लेक बैले' से प्रेरित होकर 'हंस मानस की नर्तकी' शीर्षक की कविता लिखी।

इस आत्मकथा में बच्चन ने अपने जीवन में घटी व साहित्य में घटी कई बातों का उल्लेख किया है। 'क्या भूलूं क्या याद करूं' प्रकाशित होने के बाद देश के कोने–कोने अनेक पाठकों के पत्र उन्हें चंपा, श्यामा, कर्कल के नाम से प्राप्त हुए जिन्होंने बच्चन के भाव जगत को समझने की कोशिश की थी। अपने साहित्य में दिवंगत लोगों के फिर से उनके भावुक पाठकों के रूप में जीवित होने की तुलना बच्चन ने प्लेनचिट में बुलायी जाने वाली आत्माओं से की है। उन्होंने अपने शब्दों की प्लेनचिट पर उन आत्माओं को सचेत एवं सशक्त किया है।

उनके ही लिखे शब्द उनके लिये नये अर्थ खोलते वे अपने साहित्य को पढ़कर सुनकर अतीत स्मृतियों में डूब जाते हैं, अपने साहित्य को जीवन में जीने की भावपूर्ण अभिव्यक्ति बच्चन ने इस आत्मकथा में की है। मधुशाला की ये पंक्तियां –

मैं शिव की प्रतिमा बन बैठूं
मंदिर हो यह मधुशाला।

वे आशा करते हैं कि यदि इन पंक्तियों को वे जी लें तो जीवन सार्थक हो जाये। कविता अपनी अभिव्यक्ति का रहस्य विशिष्ट क्षणों में विशिष्ट व्यक्तियों पर उद्घाटित करती है कभी तो वह भोगे हुए अधिक संघनता से भोगने को और सहायक होती है कविता को भोगना हर किसी के वश की बात नहीं है। और हर कविता भोग्या होती भी नहीं हें अपने साहित्य को भोगने के लिए साहित्यकार का एक जीवन भी कम है।

जीवन के सातवें दशक में अपने द्वारा ही रचित साहित्य को भोगने का जो अनुभव करते हैं उसका उल्लेख 'दशद्वार से सोपान तक' में किया है।

रूग्णावस्था के क्षणिक वैराग्य में वे मृत्यु को भी अपने समीप पाते हैं। कर्कल का स्वप्नों में आना क्या मृत्यु का ही आवाह्न है लेकिन जीवन के क्षणों की सम्पूर्ण निधि साहित्य में लुटा देने के पश्चात् मृत्यु भी क्या उससे पायेगी। मृत्यु से साक्षात्कार की इस भावना को 'जाल समेटा' में व्यक्त किया है –

मेरी मिट्टी में जो निहित था,
उसे मैंने जोत बो डाला
अश्रु-स्वेद रक्त से सींच निकाला,
काटा,
खलिहान का खलिहान पाटा,
अब मौत क्या ले जायेगी मेरी मिट्टी से ढेंगा।

यह कविता बच्चन की 'दशद्वार से सोपान तक' की यात्रा के सुखद, दुखद स्मृतियों से उपजे आत्मिक संतोष व सुखानुभूति की अभिव्यक्ति है। बच्चन ने अपनी विकृतियों को पाठकों से छिपाया नहीं तथा विकार होने का दावा भी नहीं किया।

साहित्य और समाज के आपस के सम्बन्ध में बच्चन ने अपने विचार व्यक्त किये हैं कि साहित्य को समाज की नीति परिपेक्ष्य से देखना उसके साथ न्याय करना नहीं होगा क्योंकि साहित्य का सामाजिक सम्पर्क व्यक्ति के माध्यम से होता है उसकें एकांत क्षण में होता है और व्यक्ति हर समय अपने को सामाजिक व राजनैतिक प्राणी के रूप में नहीं देख सकता न ही मुक्त दृष्टि से न ही व्यापक दृष्टि से लेखक जीवन सत्यों को सर्वदा राजनीति या समाज नीति के चश्में द्वारा नहीं देखता। जो साहित्य व्यक्ति के अनूकुल पड़ेगा जीवन की तरह साहित्य भी गतिशील है। इन्हीं अर्थों में बच्चन अपने को गतिशील लेखक तो

मानते है पर प्रगतिशील लेखकों की श्रेणी में नही रखते। क्योंकि प्रगतिशील आगे चलकर साहित्यकार की आत्मा को दूर छोड़ती जाती है क्योंकि प्रगतिशीलता जनमानस को भी पीछे छोड़ने लगती है अतः साहित्य गतिशील है, साहित्यकार गतिशील है, प्रगतिशील है समाज, प्रगतिशील है राजनीति।

साहित्य में आत्मा की अमर सत्ता और व्यक्तिगत सत्ता पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है इस विषय पर बच्चन अपने भाव व्यक्त करते हैं कि आत्म चेतना से उपर वे आत्मा की सत्ता पर विश्वास नहीं रखते। आत्मा की अमरता तो संदिग्ध है लेकिन आत्म चेतना असंदिग्ध है उसकी प्रसंगिता जीवन के लिये मान्य है समाज के लिये साहित्य के लिये विचारों की अनुभूति के लिये मान्य है ऐसी ही स्मृति यात्रा ये आत्मकथा है।

इस आत्मकथा में उसी आत्म चेतना का वर्णन करते हुए बच्चन ने वह प्रसंग छेड़ा है जिसमें एक लड़की पूर्वजन्म की श्यामा बनकर उनकी आत्मा की अमरता एवं पूर्वजन्म की सत्ता पर सोचने के लिये प्रेरित करती है और उसी प्रेरणा में वे कुछ काव्य सृजन भी कर डालते हैं इसे वे आत्म चेतना ही मानते हैं।

साहित्यकार के अन्दर एक चित्रकार अवश्य छिपा होता है कवि अपनी कविताओं में कल्पना चित्रों को चित्रित करता है बच्चन मूलतः एक कलाकार है आत्मकथा के इस संस्मरण में उन्होंने अपने कलाकर हृदय व रूचियों के संबन्ध में बहुत कुछ व्यक्त किया है। वे कहीं यात्रा पर जब होते हैं वहां से पत्थर व मूर्तियाँ इकट्ठी करते हैं उनके पास इनका छोटा–मोटा संग्रह भी है जिसे उन्होंने अपने भावुक मन से कई नामों से चित्रित किया है किसी पत्थर को पर्वत का रूप देकर किसी को पक्षी का रूप देकर उस पर थोड़ी बहुत चित्रकारी की है। कुछ पत्थर मूर्तियां उनके काव्य में प्रेरणा के रूप में विद्यमान हैं। 'दशद्वार से सोपान तक' में उन्होंने ऐसी ही तीन मूर्तियों के विषय में आत्माभिव्यक्ति की है। गरूण–सिंह–कुलटा – तीनों पर कवितायें लिखी।

विपरीत रति–रत नारीं की मूर्ति जो उन्हें मथुरा में मिली उसे 'कुलटा' नाम दिया–

यह विखंडित मूर्ति
मथुरा की सड़कर पर
मिली मुझको

शीश-हत
जांघ पसारे
खुले में विपरीत-रति-रत।
अरे ! यह तो पुंश्चली है।

सिंह की मूर्ति पर उनकी ये अभिव्यक्ति है –

शेर यह -
निर्भीक मुद्रा में -
था वहां पर पड़ा
चरती हैं बकरियां तृण
सशंकित जिस जगह पर
भूलकर, वह सिंह की औलाद
पौरूष मूर्त है,
अतिशय बली है।

गरूड़ की मूर्ति के आकार वाले पत्थर के विषय में वे यों लिखते हैं –

ओ गरूड़
तेरी जगह तो है गगन में,
भूमि पर कैसे पड़ा है,
पोटली की भांति गुड़मुड।
घूरना था जिस नजर से सूर्य को
तू मुझे अनिमेष देखता है।
बाहुओं में अब कहा बल,
उम्र मेरी ढल चली है।

मूर्तियों पर उपरोक्त पंक्तियां यह व्यक्त करती हैं कि सिंह हो, गरूड़ या अति शक्तिशाली पौरूष वाला मानव सभी को परिवर्तन के काल चक्र में खंडित होना है नष्ट होना है। आदि है तो अन्त अवश्यांभी है। इसी तरह पत्थरों से उन्होंने अपने गृहनिवास पर महादेव जी का मंदिर मारूति मंदिर स्थापित किया। गमले में लगाई हुई नागफनी के पौधे को – **'पापों का सांप'** नाम दिया। वे कहते हैं कि देखने वालों की आंख चाहिए बहुत

से ऐसे पत्थर मिलते हैं जिनको देखकर हम उन्हें कोई आकार दे सकते हैं –

जाओ, प्रतिमाओं को खोजो,
जिनमें भेद भरा है भारी
बन के चारों कोनों पर जो
कुलटा, बालक, बाघ, कुमारी।
और गरूड़ जो उड़ता नभ में
पर फैलाये उसको जानो
गाओ फिर जितना जी चाहे
जब इन पांचों को पहचानो।

बच्चन अपने काव्य और पाषाण मूर्तियों के सम्बन्ध में लिखते हैं – **'उन दिनों पत्थरों को रंगने का मुझे शौक हो चला था। तैल रंगों से रंगे गरूड़ की दो आंखे बना दी। बाद को मैंने इस मूर्तिबंध पर एक कविता लिखी-'पांच प्रतिमायें' जो 'उभरते प्रतिमानों के रूप' में है। घर के कई बार के बदलाव में यह मूर्तिबंध बिखर गया। 'कुलटा' 'शेर' और 'गरूड़' की मूर्तियां 'प्रतीक्षा' में बंध गई हैं। पत्थरों पर रंगने का प्रयोग मैंने एक तिपहले पत्थर पर इयागो, ओथोलो और डेसडिमोना को चित्रित किया था। एक बगुले का भी मूर्तिचित्र बनाया था जिसे मैंने 'नाड़ीजंघ' नाम दिया था - महाभारत में आता है। एक शीशकटा पत्थर को केवल सफेदे से रंगकर मैंने किसी ऋषि-मुनि का चित्र उभारा था। मेरी स्टडी के बाहर रखा था। उसे व्यास या बाल्मीकि कह सकते थे। भीतर महाभारत और रामायण का अध्ययन होता था। तीन पत्थरों के जोड़ से एक अहिल्या की मूर्ति खड़ी की थी। कुछ पेड़ और मंदिर भी पत्थरों पर रंगे थे। एक पेड़ को 'अक्षय वट' का नाम दिया था। उन्हीं दिनों मैने सीमेंट का एक गणेश भी बनाया था। वह मूर्ति भी अब 'प्रतीक्षा' में है, गणेशोत्सव के दिनों में उसका श्रंगार होता है। ये मंदिर मूर्तियां याद आती है तो सोचना हूँ कि मैंने कितना उन पर समय लगाया था। वे कुछ ऐसी न थी कि उन्हें कलाकृतियां कहा जाता। मन की कोई इच्छा या सनक पूरी करने को कुछ किया जाये तो सर्वथा निरर्थक तो नहीं कह सकते।'**

बच्चन भले ही उन मूर्तियों के संगेह को अपनी सनक या इच्छा कह सकते हैं लेकिन उन्हीं के द्वारा जो भावाव्यक्ति नाम रखकर व काव्य लिखकर उन्होंने की है वह निरर्थक नहीं है हिन्दीसाहित्य के लिये उनके ये भाव अमूल्य हैं। ये सारे पहले उनके

चित्रकार कवि के रूप को व्यक्त करते हैं। पत्थरों के आकार को यह नामराशि देना उनके गूढ़ चिन्तन व मनन की प्रतीक है –

स्त्री की विपरीत रति रत मूर्ति	-	**कुलटा**
कैक्टस का लम्बा वृक्ष	-	**पापों का सांप**
तिकोना पत्थर	-	**गरूड़**
बगुले का मूर्तिचित्र	-	**नाड़ी जंघ**
मंदिर में लगे वृक्ष को	-	**अक्षय वट**

ये तालिका बच्चन कि अनुभूतियों, कल्पनाओं, संवेदनाओं, भावनाओं, मंथनों, चिंतनों की एक शब्द में अभिव्यक्ति है। उनके ये भाव–विचार उनकी सृजन प्रवृत्ति तथा सांस्कृतिक रूचि का नियोजन हैं।

बच्चन ने परिस्थितियों के नियन्त्रण में रहते हुए भी आत्माभिव्यक्ति के नवीन मार्ग खोजे तथा साहित्य को नये आयाम दिये। साहित्य को शक्तिमनन, गतिशीलता दी। साहित्य का अनुभव राजनीति की तरफ होने पर भी व्यापक जीवन की विभिन्न समस्याओं की उपेक्षा उन्होंने नहीं की है।

निष्कर्ष

इस प्रकार आत्मकथा की यह स्मृति यात्रा 'क्या भूलूं क्या याद करूं' से 'दशद्वार से सोपान तक' बच्चन की अभिव्यक्ति निष्पक्ष रूप से पाठकों के समक्ष आयीहै जिसमें उन्होंने अपनी आत्मा की चेतना की सत्ता को अक्षुण्ण बनाये रखा है। हिन्दी के महान साहित्यकार श्री रामकृष्ण दास जी ने अपने एक पत्र में उनकी इस आत्मकथा पर अपनी प्रतिक्रिया उनके एक पत्र में लिखी जो अंक्षरशः सत्य है तथा जिसका उल्लेख बच्चन ने किया है यथा –

'क्या भूलूं क्या याद करूं' आत्मकथा साहित्य में आपकी कृति क्रान्तिकारी है। सर्वोपरि विशेषता यह है कि कृति वस्तुनिष्ठ है जो आत्मनिष्ठ सूत्र में ऐसी खूबसरती से पिरोयी गई है कि कहीं भी अहं नहीं उभरता'।

आत्मकथा में आत्माभिव्यक्ति हर रूप में प्रकट हुई है। आत्मकथा के चारों भागों में बच्चन ने पात्रो का, अतीत का, व अतीत के लोगों का ऐसा चित्रण किया है कि वे चरित्र बोलते चलते फिरते दिखाई देते हैं जिनमें गुण–स्वभाव प्रवृत्ति की प्रतिध्वनि पाठकों को अपने जीवन में प्रतीत हुई।

आत्मकथा लिखते वक्त उस मनःस्थिति अतीत को उन्होंने फिर से जिया अतीत दुःखमय था लेकिन कला और जीवन में उसको जीना और दुःखमय हुआ उन्हीं दुःखमय करूणा की छवि आत्मकथा में उतरी।

इस कथा में सम्पूर्ण जीवन की भावनायें विद्यमान हैं, नवयौवन में मिलन, परिचय, मैत्री घनिष्ठता आत्मीयता एकात्मकता, प्रीतम–प्रेयसी की सी भावशयता पारस्परिक आत्म सर्मपण क्षमायाचना मार्मिक क्षण के रस रागोच्छलन पत्रों का आदान प्रदान की स्मृतियों की अभिव्यक्ति में पाठक डूब जाता है। आपकी आत्मकथा पर अनेक विद्वानों, साहित्यकारों ने अपने भाव प्रगट किये जो इस प्रकार हैं।

धर्मवीर भारती ने तो हिन्दी के हजार वर्षो के इतिहास में पहली घटना तक की संज्ञा दे डाली है एवं सुमित्रानन्दन पन्त के शब्दों में – **'इस आत्मकथा में बच्चन जी का**

पारदर्शी सशक्त व्यक्तित्व अधिक गहरे रंगों में उभरा है'।

शिव मंगल सिंह सुमन कहते हैं **'ऐसी अभिव्यक्तियां नयी पीढ़ी के लिये पाथेय बन सकेगी, इसी में उनकी सार्थकता भी है'।**

अतः आत्मकथा बच्चन की एक अभिव्यक्ति पूर्ण सृजन है। सृजन का अर्थ होता है। आत्मदान अपने व्यक्तित्व का अंश दान यही अंशदान बच्चन ने अपनी आत्मकथा में किया है क्योंकि आत्मदान ही सृष्टि है तथा रचना है यही उनकी आत्मकथा है जो वस्तु उन्होंने जीवन से ग्रहण की उसे सृजन का विषय बना दिया तथा सृजन आत्मकथा के रूप में साहित्य में मुखरित हुआ है बच्चन ने छोटी से छोटी घटना के प्रति भी अपनी अभिव्यक्ति प्रगट की है। नगण्य से नगण्य पदार्थ के लिये उनकी प्रतिक्रिया हुई है क्योंकि यह छोटा नगण्य पदार्थ भी उनके अस्तित्व का अंग है उसके प्रति उनकी आसक्ति है वही आसक्ति उनकी आत्माभिव्यक्ति बन गई है। यह आत्मकथा भी उनकी जीवन के प्रति छोटी–छोटी घटनाओं व आसक्ति की झांकी प्रस्तुत करती है। उनके सृजन का आत्मदान ही उनकी आत्माभिव्यक्ति है। आत्मकथा बच्चन सृजन की साहित्यिकता के प्रति इतने सचेत नहीं रहे हैं जितने जीवन की भावनाओं की विवशता के प्रति रहे हैं। उनकी आत्मकथा को पढ़ने का अर्थ है उनकी करूण मधुर स्मृतियों के सरोवर में स्नान करना। पाठक आत्मकथा का पठन करते समय अपने जीवन की पूर्वानुभूतियों के क्षणों को अवश्य दोहराता है। यह आत्मकथा सम्पूर्ण जनमानस की कथा है, पात्र परिस्थितियां सिर्फ बदल जाती हैं पर अमूर्त भावनायें मन में उसी तरह मन को मथती हैं। बच्चन की यह कथा उनके अतीत के क्षणों को वर्तमान में विस्फोट कर उनको सृजन के लिये प्रेरित करती हैं। उनके जीवन की सम्पूर्ण विगत स्मृतियां सिर्फ जीने के लिये नहीं, सृजन करने के लिये साहित्यकार की दृष्टि से सृजन पथ पर लेकर आये हैं क्योंकि जब उन्होंने जीवन जिया तब उस जीवन का सृजन आत्मकथा या गद्य रूप में संभव नहीं था। इस प्रकार इसी सृजन में बच्चन ने अपनी अभिव्यक्तियों को पूर्ण रूप से जिया है।

आत्माभिव्यक्ति एक संश्लेषणात्मक अनुशीलन

आत्माभिव्यक्ति शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है। आत्मा–अभिव्यक्ति। अर्थात् आत्म का अभिप्राय आत्मा से है वही आत्मसत्ता जो हर व्यक्ति के हृदय में निहित है संसार के प्रत्येक जीव चर–अचर में जो आत्मा विद्यमान है। व्यक्ति की आत्म सत्ता मनुष्य की स्वयं की आत्मा है। यही आत्मा जब समाज में रहकर तमाम आचार–विचार, दुःख–सुख, करूणा, संवेदना के भावों को अपने में अनुभव करती है एवं उसे किसी न किसी रूप में प्रकाशित करती है आत्म प्रकाशन की उस परिकल्पना को आत्माभिव्यक्ति कहते हैं। संसार में आदिकाल से ऋषियों–मुनियों ने अपनी वाणी से समांज की नियमावली को अभिव्यक्त किया। जब वह लिपिबद्ध होकर सामाजिक प्राणी के समक्ष आयी माहकवियों की लेखनी में समाहित हुई। बड़े–बड़े महाकाव्यों की रचना हुई। अभिव्यक्ति की चेतना को वरदान मिला वह आत्माभिव्यक्ति कहलाई

साहित्य में आत्माभिव्यक्ति साहित्यकार की आत्मप्रकाशन की कला से व्यक्त होती है। भावों संवेदनाओं को शब्दों में रचकर अपनी आत्मकथा की पिपासा को लेखन के द्वारा शान्त करके साहित्यकार समाज के समक्षा एक स्वच्छ एवं सुन्दर अभिव्यक्ति करता है। ऐसी ही अभिव्यक्ति बच्चन ने अपने साहित्य में की। साहित्य में अभिव्यक्ति बच्चन की शास्त्र प्रतीत तथा विद्वता प्रतीत नहीं बल्कि आत्म चेतना की प्रतीत है। यह आत्म तत्व उनके काव्य में अमरत्व, आत्मचेतना, कामना, आकांक्षा का आत्मिक रूप है। जो ब्रह्मांडकीय उर्जा का अंश है। बच्चन की आत्मचेतना अपनी पीठिका पर पृष्ठभूमि, परिवार, समाज, प्रदेश, देश, पृथ्वी एवं प्राणी के लिये सार्थक एवं महत्वपूर्ण है जो देश काल गत चेतना से भी अनुप्रेरित है।

किसी भी साहित्यकार के लिये अभिव्यक्ति की आदर्श परिस्थिति वही हो सकती है कि वह जीवन और साहित्य के स्वाध्याय से परिपक्व होकर प्रेरणा ले एवं लिखने के लिये पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो। यह स्थिति किसी भी मनः स्थिति व किसी घटना व किसी दृश्य से एवं विचार से आ सकती है जो साहित्यकार को सृजन के लिये विवश करती है वह अपनी भावनायें व्यक्त करने के लिये साहित्य का सहारा लेता है।

आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में आदिकाल से ही कवि मनीषी अपने विचार युग के समक्ष प्रस्तुत करते रहे हैं। कुछ विद्वान आत्माभिव्यक्ति को आत्मानुभूति से प्रेरित मानते हैं एवं कोई आत्म प्रकाशन को आत्माभिव्यक्ति मानते है। अतः प्रेरणा के प्रगटित भावों को भी आत्माभिव्यक्ति की संज्ञा दी गई है। पाश्चात्य विद्वानों ने भी आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है। भारतीय विद्वाानों ने भी अपने विचार प्रगट किये हैं। साहित्यकार की अभिव्यक्ति तर्क जनित नहीं, भावना जनित होती है। वह जीवन का अध्ययन कर उसके दर्शन को व्यक्त करता है यह प्रगटी करण साहित्यकार की कविताओं में होता है कहानियों में एवं उपन्यासों में होता है वह उन प्रवृतियों से अनुप्राणित होता है जो उसे जन्म से मिली होती हैं। साहित्यकार की अपने द्वारा रचे गये साहित्य से व आत्माभिव्यक्ति से गहरी संवेदना जुड़ी होती है जिसमें दुर्भावना, घृणा, क्रोध: का स्थान नहीं होता। यह कला का नकारात्मक रूप है। अभिव्यक्ति को मनीषियों ने 'सात्विकता' से जोड़ा है। जो साहित्य है वह सात्विक है। सत्य एवं सुन्दर है। शिवत्व को प्राप्त होकर ही कोई साहित्यकार अपनी आत्माभिव्यक्ति करता है जो यर्थाथवादी व कल्याणकारी है। जीवन के प्रयोगों से सबद्ध होकर अभिव्यक्ति करता है, अभिव्यक्ति एवं सृजन की प्रक्रिया मे युग–मानस,जनमानस, परम्परागत मानस सभी कार्य करते हैं। इन सबको एक साथ एक ही ध्येय पर लगाकर साहित्यकार अपनी अभिव्यक्ति अपनी रचना में करता है।

अभिव्यक्ति के सम्बन्ध में बच्चन स्वयं कहते हैं **'मनःस्थितियों और परिस्थितियों के प्रति जिस प्रकार की मेरी प्रतिक्रिया होती है वह प्रतिक्रिया होने पर जिस प्रकार की अभिव्यक्ति मैं उन्हें देता हूँ यदि वह कवियों की सी हो तो, जो मैं लिखता हूँ वह कविता है'। .... 'मैं अपने मन का एक सहजभाव ही प्रति ध्वनित कर रहा था ये प्रतिक्रियायें ये आत्माभिव्यक्तियां मेरे लिये स्वाभाविक है .... तब मैं जैसे में हूँ वैसी ही मेरी अभिव्यक्ति है। .... मेरी अभिव्यक्ति का भी एक व्यक्तित्व है। .... कविता के प्रसंग में अभिव्यक्ति की स्वच्छंदता मेरे लिये निश्चित शब्द है। कविता जब अभिवादन मात्र नहीं, प्रेषण और सहानुभूति (सह + अनुभूति) भी होती है तो उसमें भाव विचार उसकी अभिव्यक्ति को निर्धारित, निरूपित और अनुशासित करते हैं'।**

आत्माभिव्यक्ति दो प्रकार की हो सकती है एक वह जब साहित्यकार सूक्ष्मदर्शी होता है और काल्पनिक अनुभूतियों के प्रकाश में वह साहित्य सृजन करता है। दूसरा, लाक्षणिक प्रतिकात्मक शब्दों के प्रयोग से भाव अभिव्यक्त करता है। आत्माभिव्यक्ति वास्तव

में कवि या साहित्यकार की वह अर्न्तमुखी दृष्टि है जिसे वह अतीन्द्रिय रूप में देखता है। युग की उद्‌बुद्ध चेतना से बाह्र अभिव्यक्ति से निराश होकर आत्मबद्ध अर्न्तमुखी साधना द्वारा अपनी अन्तरात्मा की वाणी को साहित्य में अभिव्यक्त करता है। इसे स्वानुभूति भी कह सकते हैं जहां वह अपनी सुख–दुख, हर्ष–शोक को वाणी प्रदान करता है।

साहित्यकार सृजन 'स्वान्तः सुखाय' के लिये करता है। तुलसीदास ने साहित्य की अभिव्यक्ति को 'स्वान्तः सुखाय' माना है। कालान्तर में वह 'बहुजनहिताय' बनी अर्थात् साहित्यकार जो भी अभिव्यक्ति अपनी आन्तरिक प्रेरणा से करता है वह किसी आदेश के पालन के लिये नहीं, न ही धनकीर्ति अर्जित करने के ध्येय से केवल वह अपनी आत्मा की पुकार पर व आत्माभिव्यक्ति की विवशता से करता हैं अपनी कृति को वह स्वान्तः सुखाय कहकर कविता एवं साहित्य के आर्दश लक्ष्य को परिभाषित करता है।

कुछ विद्वान् ये मानते हैं कि साहित्यकार को आत्मयोगी स्थितियों को वाणी न देकर समाज भोगी स्थितियों को वाणी देना चाहिये लेकिन प्रश्न ये है कि समाजभोगी स्थति को वाणी देकर बौद्धिक सहानुभूति देकर प्रचारात्मक लेखन ही साहित्य की श्रेणी में आयेगा वह आत्मा से भोगी हुई अनुभूतियां नहीं होगी। आत्माभिव्यक्ति नितांत निजी प्ररेणा द्वारा ही सम्भव है। वही प्रेरणा से साहित्यकार को आस्वादन की वस्तु बना देता है, सृजन से भूक्ति की भावना में साहित्यकार का सर्वांग सृजनशील होता है वह अपने अंश–अंश को सम्पूर्ण परितुष्ट पाता है। तभी वह अभिव्यक्ति करता है। बच्चन अपने साहित्य में मानसिक भार युक्त सृजन को आत्माभिव्यक्ति कहते हैं। 'भार सिर पर कंठ में स्वर' ही उनका साहित्य है।

साहित्यकार अपनी अभिव्यक्तियों में तभी सफल होता है जब वह अपने शब्दों मे सजीव साक्षात् स्वयं होता है। पर अभिव्यंक्ति सत्य को व्यापक सत्य बनाने में कवि अपनी भावनायें व्यक्त करता है।

भारतीय मत

अभिव्यक्ति क्या है इस विषय पर आदिकालन से ही हिन्दी साहित्य एवं पाश्चात्य साहित्य के विद्वानों ने अपनी मत प्रकट किय हैं। कवि की चेतना को अभिव्यक्ति कहते हैं या उसके द्वारा वर्णित व्यापक सत्य को अभिव्यक्ति कहते हैं। अभिव्यक्ति के विषय मे कुछ विद्वान् मानते हैं कि यह जटिल संवेदनाओं की अभिव्यक्ति है। लेकिन साहित्य में सौन्दर्य पक्षा को अभिमत देने वाले विद्वान् मानते हैं कि साहित्य का सौन्दर्य बुद्धि तत्व पर आधारित है। टी.एस. इलियट कविता को भावों की अभिव्यक्ति न मानकर भावों से विभुवित मानते हैं। अर्थात् कवि भावों से निर्वैयक्तिक हुए बिना बुद्धि के सहारे नहीं हो सकता। कुछ मतों का विश्वास है कि अभिव्यक्ति कभी–कभी साहित्य में अतः प्रेरणा के साथ–साथ पलायन भी जुड़ा रहता है। अभिव्यक्ति के माध्यम से साहित्यकार आनन्द से जुड़ा रहता है। अभिव्यक्ति से वह अपनी सृजनशील चेतना को किसी न किसी रूप में नया आयाम देता है।

अभिव्यक्ति को साहित्य में कई तरह से परिभाषित किया गया। उसके साथ अमूर्त शब्द भी जुड़े 'प्रमाणिक अभिव्यक्ति' तथा 'अभिव्यक्ति की ईमानदारी' तथा 'आत्मपरक अभिव्यक्ति की अनुभूति' इनके द्वारा इसे विश्लेषित किया जा चुका है। कुछ दिनों बाद अभिव्यक्ति से 'तनाव' जटिलता जैसे शब्द भी जोड़े गये। अभिव्यक्ति को वस्तुगत यर्थाथ के साथ जोड़ा है ईमानदारी, सच्चाई शब्दों का संबध नैतिकता से जोड़ गया। इस प्रसंग में नेमिचन्द्र जैन लिखते हैं कि **'जहां तक साहित्य की अपनी निजी शक्ति का प्रश्न है सबसे पहला तत्व है - साहित्यकार की अनुभूति, उस अनुभूति की सच्चाई और गहराई। समस्त कलात्मक सर्जना को प्रभावोत्पादक व्यापकता का मूल, उसकी भावात्मकता का स्त्रोत, अनुभूति में ही है .... जो अनुभूत नहीं है वह साहित्यक विषय नहीं है न ही उसका प्रगटीकरण साहित्य का रूप ले सकता है और उसे चाहे जिस नाम से पुकारें'।**

इस प्रकार भोगा हुआ सत्य व नितांत निजी अनुभूति से जुड़ा होता है तथा यही अनुभूति स्वचेतन एवं बौद्धिक बनकर भावों की सरलता के साथ साहित्य में अभिव्यक्त होती है। शब्दों को निरंतर नया संस्कार साहित्यकार देता है क्या वे सार्वजनिक मानस में प्रचलित हो जाते हैं। अज्ञेय का विचार है – **'यद्यपि सब कवियों मे भाषा का परिमार्जन**

और अभिव्यक्ति की सफाई एक सी नहीं है, और अटपटेपन की झांकी न्यूनाधिक मात्रा में प्रत्येक में मिलेगी ...... नई समस्याओं व नये तकाजों का अनुभव सबने किया है उसी की प्रेरणा सबको मिली है। कृतित्व की दृष्टि से लगभग समूचे आज के हिन्दी साहित्य में आशा की नई लौ जगाता है'।

इस प्रकार साहित्य में कवि की अभिव्यक्ति रचना की जड़ता से मुक्त होकर भी नई दिशा में गतिशील होती है। अभिव्यक्ति में साहित्यकार की प्रतिबद्धता किसी वाद या सिद्धांत के प्रति नहीं होती। फिर भी वह युगीन चेतना की अनुभूति की तीव्रता के साथ रचनाओं में व्यक्त करता है। वैयक्तिक स्वातन्त्रय की रचनात्मक प्रतिभा की रक्षा के साथ बुद्धि कर साहित्यकार सामाजिक उत्तरदायित्व को निभाता है तब उसकी अभिव्यक्ति विकास की दृष्टि से अवश्य वैयक्तिक होती है बल्कि जिसे अपना कुछ नहीं कहना उसे मुंह खोलना ही नहीं चाहिये।

अभिव्यक्ति के परिपेक्ष्य में प्रयाग नारायण त्रिपाठी लिखते हैं – **'आज के जीवन यर्थाथ की अभिव्यक्ति ही आज के कवि प्रधान की सच्ची अभिव्यक्ति है। ऐसी ही अभिव्यक्ति के लिये वह निरंतर सचेत है। निरंतर प्रयोजनशील है निरंतर अन्वेषी है। यह अभिव्यक्ति व्यक्तिगत न होकर समिष्ट से संश्लिष्ट हो सकती है'।**

इस विचार से यह स्पष्ट होता है कि साहित्य में यर्थाथ जीवन को ही उसकी अभिव्यक्ति माना है। परिवर्तित परिस्थियों ने संवेदनाशील प्राणी को झकझोरा है जिससे अब साहित्य की अभिव्यक्ति आत्मान्वेषण पर आधारित होती है। जो बौद्धिक जागरूकता भी है। यही कारण है कि विघटित मूल्यों के प्रति आस्था उत्पन्न हुई है। सत्य की खोज की वजह से तथा प्राप्त सत्य को उसी रूप में साहित्य में व्यक्त करने की, प्रयोगशील अन्वेषकों ने ईमानदारी के साथ युग जीवन के यर्थाथ को देखने का प्रयत्न किया है, उसे नये परिपेक्ष्य, नये सौन्दर्य बोध में नये धरातल तथा संवेदनाओं के बाह्र एवं आन्तरिक तादम्य के रूप में अभिव्यक्त किया है।

उपरोक्त विवेचना से यह ज्ञात है कि अभिव्यक्ति दो रूपों में साहित्यकार के समक्ष आती है। प्रथम – साहित्यकार की बौद्धिक चेतना के आधार पर, द्वितीय – उसके विवेक के आधार पर। अभिव्यक्ति में बौद्धिकता कई स्थलों पर बहुत सफलता के साथ साहित्य में दिखती है वह विवेक से मर्मस्पर्श भी करती है।

हर युग में साहित्यकारों की अभिव्यक्ति की परंमरा को दोहराना, नया करना या आत्मीयता से व्यक्त करना युगीन साहित्यकारों पर निर्भर करता है।

डा. नगेन्द्र का विचार है कि – **'सौन्दर्य के उद्दीपन से जीवन के अभाव अभिव्यक्ति के लिये फूट पड़ते हैं तभी कविता का जन्म होता है'**।

काव्य में आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में कई विद्वानों ने अपने मत प्रगट किये हैं। तार सप्तक के कवियों ने आत्माभिव्यक्ति को आत्म–सत्य के रूप में स्वीकार किया है। तारसप्तक की भूमिका में अज्ञेय लिखते हैं – **'जिस प्रकार कविता रूपी माध्यम को बरतते हुए आत्माभिव्यक्ति चाहने वाले कवि को आधिकार है कि उस माध्यम का अपनी आवश्यकता के अनुरूप श्रेष्ठ उपयोग करे, उसी प्रकार आत्म सत्स के अन्वेषी कवि को अन्वेषण के प्रयोग रूपी माध्यम का उपयोग करते समय उस माध्यम की विशेषताओं पर रखने का भी अधिकार है'**।

यहां पर कविता को आत्माभिव्यक्ति का और प्रयोग को स्त्यान्वेषण का माध्यम स्वकीार किया गया है। इसी प्रकार लक्ष्मीकांत वर्मा **'कविता को आत्म परक अनुभूति की रागात्मक अभिव्यंजना'** मानते हैं। उनके विचार से आत्मपूरक अनुभूति जिस अभिव्यक्ति में होगी वह आत्माभिव्यक्ति एक प्रभावपूर्ण कला बना जायेगी।

आत्माभिव्यक्ति में रचनाकार यर्थाथ की कल्पना के माध्यम से आत्मसाक्षात्कार कर रचनात्मक रूपान्तरण साहित्य में करता है। रचनाओं में जिन संवेगों की कलात्मक अभिव्यक्ति होती है वे एक सीमा तक साहित्यकार के लिये प्रमाणिक होते हैं इसी अभिव्यक्ति को साहित्य में आत्मभिव्यंक्ति माना गया है।

कवि अज्ञेय ने 'तार सप्तक' में कवि की आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में प्रकाश डाला है – **'अगर कवि की आत्माभिव्यक्ति एक संस्कार विशेष में वेष्टन में ही सहज सामने आती है तभी वह संस्कार देने वाली परंपर कवि की परंपरा है नहीं तो वह इतिहास है, शास्त्र है, ज्ञान भंडार है। जिससे अपरचित भी रहा जा सकता है'**।

अतः अज्ञेय आत्माभिव्यक्ति को साहित्यकार के विशेष संस्कारों की सहज भावना मानते हैं। आत्माभिव्यक्ति में सर्जक के व्यक्तित्व का हल्का गहरा रंग चढ़ा रहता है। परवर्ती साहित्य में ईश्वर, धर्म नीति तथा देशों के प्रति साहित्यकार की आत्माभिव्यक्ति प्रतिबद्ध रहा

हर युग में साहित्यकारों की अभिव्यक्ति की परंमरा को दोहराना, नया करना या आत्यीयता से व्यक्त करना युगीन साहित्यकारों पर निर्भर करता है।

डा. नगेन्द्र का विचार है कि – **'सौन्दर्य के उद्दीपन से जीवन के अभाव अभिव्यक्ति के लिये फूट पड़ते हैं तभी कविता का जन्म होता है'**।

काव्य में आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में कई विद्वानों ने अपने मत प्रगट किये हैं। तार सप्तक के कवियों ने आत्माभिव्यक्ति को आत्म–सत्य के रूप में स्वीकार किया है। तारसप्तक की भूमिका में अज्ञेय लिखते हैं – **'जिस प्रकार कविता रूपी माध्यम को बरतते हुए आत्माभिव्यक्ति चाहने वाले कवि को आधिकार है कि उस माध्यम का अपनी आवश्यकता के अनुरूप श्रेष्ठ उपयोग करे, उसी प्रकार आत्म सत्स के अन्वेषी कवि को अन्वेषण के प्रयोग रूपी माध्यम का उपयोग करते समय उस माध्यम की विशेषताओं पर रखने का भी अधिकार है'**।

यहां पर कविता को आत्माभिव्यक्ति का और प्रयोग को स्त्यान्वेषण का माध्यम स्वकीर किया गया है। इसी प्रकार लक्ष्मीकांत वर्मा **'कविता को आत्म परक अनुभूति की रागात्मक अभिव्यंजना'** मानते हैं। उनके विचार से आत्मपूरक अनुभूति जिस अभिव्यक्ति में होगी वह आत्माभिव्यक्ति एक प्रभावपूर्ण कला बना जायेगी।

आत्माभिव्यक्ति में रचनाकार यर्थाथ की कल्पना के माध्यम से आत्मसाक्षात्कार कर रचनात्मक रूपान्तरण साहित्य में करता है। रचनाओं में जिन संवेगों की कलात्मक अभिव्यक्ति होती है वे एक सीमा तक साहित्यकार के लिये प्रमाणिक होते हैं इसी अभिव्यक्ति को साहित्य में आत्मभिव्यक्ति माना गया है।

कवि अज्ञेय ने 'तार सप्तक' में कवि की आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में प्रकाश डाला है – **'अगर कवि की आत्माभिव्यक्ति एक संस्कार विशेष में वेष्टन में ही सहज सामने आती है तभी वह संस्कार देने वाली परंपर कवि की परंपरा है नहीं तो वह इतिहास है, शास्त्र है, ज्ञान भंडार है। जिससे अपरचित भी रहा जा सकता है'**।

अतः अज्ञेय आत्माभिव्यक्ति को साहित्यकार के विशेष संस्कारों की सहज भावना मानते हैं। आत्माभिव्यक्ति में सर्जक के व्यक्तित्व का हल्का गहरा रंग चढ़ा रहता है। परवर्ती साहित्य में ईश्वर, धर्म नीति तथा देशों के प्रति साहित्यकार की आत्माभिव्यक्ति प्रतिबद्ध रहा

है किन्तु कालान्तर में यह अभिव्यक्ति निरपेक्ष एवं स्वतन्त्र हो गई। मानवीय मूल्यों से बंधकर अभिव्यक्तियों के प्रति ईमानदारी बढ़ती जा सकती है। आत्माभिव्यक्ति में साहित्यकार 'मैं' को प्रतिष्ठित करता है क्योंकि 'मैं' की अभिव्यक्ति की ईमानदारी पर शंका नहीं की जा सकती। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अभिव्यक्ति में वैयक्तिकता का दायित्वपूर्ण है तथा सामाजिकता से भी इसका काई विरोध नहीं है। अभिव्यक्ति में 'मैं' का विर्सजन नहीं होता वरन् 'मैं' का बोध अस्तित्व का बोध ही आत्मभिव्यक्ति की प्रतिद्धता है।

आत्माभिव्यक्ति व्यक्तिगत स्वचेतनशीलता से भी जन्म लेती है। यर्थाथ जगत की चेतना के बीच कला लोक है अर्थात् कलाजगत व यर्थार्थ जगत की स्चचेतना की पुनराभिव्यक्ति साहित्य सृजन है। साहित्य में काव्यशास्त्र के अर्न्तगत आत्माभिव्यक्ति पर अनेक विद्वाानों ने अपने मत प्रगट किये हैं। भारतीय आचार्य क्षेमेन्द्र, कुन्तक, अभिनव गुप्त आदि ने आत्माभिव्यक्ति को कला की अभिव्यक्ति एवं क्रिया माना है।

क्षेमेन्द्र के अनुसार – **'देश शान, काल शान परंपरा शान तथा इतिहास शान कवि को सौन्दर्य दृष्टि का अंजन कल्प करते हुए उसे क्रमशः यर्थाथता के बोध से समसामियकता के प्रति जागरूक व्यवहार लोक व्यवहार एवं लोक प्रमाण से अभिव्यथ्कत है। वे कवि को विशिष्ट बनाने के स्थान पर उसे युग की चेतना मानते हैं'**।

अभिव्यंजनावादी विचारक मूलतः आत्माभिव्यक्ति के लिये 'सहृदय' की धारणा पर विश्वास करते हैं। आत्माभिव्यक्ति के लिये सर्जक के हृदय को विमल, प्रतिभाशाली होना आवश्यक है जिसमें स्थायी भावों की अभिव्यक्ति तथा चर्वणा अर्पित हो। अभिनव गुप्त ने आत्माभिव्यक्ति के लिये यह आवश्यक माना है कि विमल हृदय, एवं नैर्सगिक चारूत्व को समझनें वाला, मन की चंचलता और तपोमय मन की मोहाधंता से दूर रहने पर ही कवि स्वच्छ निर्मल आत्माभिव्यक्ति सकेगा।

फलस्वरूप सर्जक भावात्मक पुर्नरचना में साहित्य का सर्जन करता है जहां उसके विचार, अनुभव, अनुभूति, विवेक, दार्शनिक सिद्धान्त आदि उसके लिये आत्माभिव्यक्ति के माध यम है जिसके द्वारा रचनाकार के विचार अनुभूति, विवेक, दार्शनिक सिद्धांत से हृदय संवाद करता है।

आत्माभिव्यक्ति के दो खण्ड मान कर चलते हैं **पहला मूल स्वयं प्रकाश, भावात्मक तथा रचना, दूसरा भौतिक माध्यम मूलतः पुर्न रचना**। स्वयं प्रकाश स्वचेतना के

सम्बन्ध में पाश्चात्य दार्शनिक क्रोंचे ने तो अपने विचार प्रगट किये हैं वरन् भारतीय साहित्यशास्त्र में वामन कुंतक, राजशेखर आदि के विचार ऐताहिसक परंपरा को उद्घारित करते हैं।

कुतंक कवि की अभिव्यक्ति को सहज प्रतिभा मानते हैं। सुकुमार कवि का सुकुमार स्वभाव होता है उसकी आत्माभिव्यक्ति भी सुकुमार होती है। विचित्र कवि की अभिव्यक्ति भी विचित्र होती है तथा मिश्रित स्वभाव का कवि मिश्रित शोभाशालनी प्रतिभा की अभिव्यक्ति करता है।

कुंतक ने कवि स्वभाव के अनुसार काव्याभिव्यक्ति की प्रतिबिंबता स्वीकारी है अर्थात् रचना को मात्र कवि के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति माना है।

अतः आत्माभिव्यक्ति सामान्य ही नहीं विशिष्ट भी हो सकती है इन्हीं कारणों से योग्यता, कीर्ति, सामाजिक महत्ता, महान् रचनाकार के जीवन तथा जगत में गहरी आंतरिक पैंठ रखनेवाला साहित्यकार कौशल सिद्ध व अर्न्तग्रन्थित एवं अन्योन्यामिश्रत है। आत्माभिव्यक्ति चेतन मस्तिष्क के धरातल पर मथी जाकर, झकझोर दी जाकर पाठक या श्रोता के समक्ष उपस्थित हो जाती है। ऐसी प्रेरणा दशा में भाव इतने प्रबल होते हैं कि लेखक की इच्छा व माध्यम की सीमा का अतिक्रमण करते हुए विकसित होते हैं वे इतने अपरिचत होते हैं कि उनके वशीभूत लेखक, निर्वासित–व्यक्तित्व की एक नवीन 'आत्म' का अनुसंधान कर लेता है। वहीं आत्म आत्माभिव्यक्ति भी हो सकती है।

आत्माभिव्यक्ति की दशा असाधारण चित्त व आकस्मिक परिस्थिति दोनो की देन है। जब उत्तेजक शब्द या बिंब की प्रतिक्रिया मानस पटल पर एक साथ कई स्मृतियां लाती है और सभी की सभी अभिव्यक्ति के लिये चंचल होती है। अभिव्यक्ति होने पर भावों की गहरी अभिव्यक्ति तथा नई अभिव्यक्ति होती है।

राजशेखर ने काव्य की अभिव्यक्ति में कवि को भावक माना है अर्थात् कवि को भावक बनना पड़ता है तथा भाव को कवि। – यथा – **'कः पुनरयो भेदो यत्कर्विभावव्यक्ति भावकश्च कविः इत्याचार्यः'**।

भावना के समधरातल पर बर्हिमुखी होकर बाह्न अभिव्यक्ति प्रस्तुत करके व्यक्ति कवि हो जाता है। सब कुछ रचनाकार के व्यक्तित्व पर निर्भर करता है। सृजन प्रक्रिया के सम्बन्ध में 'आत्म रूपायन' व आत्म प्रशिक्षण उसके व्यक्तित्व व सृजनात्मकता का

गतिशील चरित्र्य है। रचनाकार की उर्जा साहित्यसृजन में गतिमान हो उठती है। सृजन में उसकी जीवन उर्जा का क्षरण नहीं होना चाहिए अथवा वह सर्जक अभिव्यक्ति नहीं कर पायेगा। आत्माभिव्यक्ति तो अन्य दिशाओं में भी होती है चित्रकार की अभिव्यक्ति, इंजीनियर की व जीवशास्त्री, इतिहासवेत्ता आदि अपने–अपने क्षेत्र में आत्माभिव्यक्ति करते हैं। ऋतुसंहार लिखनेवाले कालिदास ने रघुवंश भी लिखा यह उनके आत्मरूपायन व आत्मप्रशिक्षण का फल है।

कई विचारकों ने 'अभिव्यंजना' को आत्माभिव्यक्ति माना है। अभिव्यंजना प्रस्तुत नहीं प्रतिनिवेदित करती है। यह अंर्तमुखी व बर्हिमुखी दोनों है। रचनाकार अपनी चेतन, अवचेतन दोनों प्रकार की अनुभूतियों को, अनुभवों, संवेगों को एक ऐन्द्रिक माध्यम से पेशकर उन्हें कलाकृति में रूपान्तरित करता है। यह अभिव्यंजना (अभिव्यक्ति) भावों की होती हैं, हो सकता है कि जो अनुभूति उसे अनुभव हो वह रचना में अभिव्यक्त न कर पाये या जो अनुभूति उसे नहीं हो वह व्यक्त कर दे या सृजन आश्य में उसकी अनुभूति अपूर्ण हो और अन्त में पूर्ण हो जाये। इस प्रकार संवेगों, अनुभवों की प्रगट अभिव्यक्ति ही साहित्य में आत्माभिव्यक्ति है। जिसे काव्यशास्त्र के मनीषियों ने अभिव्यंजना (एक्सप्रेशन) का नाम दिया है।

अभिव्यंजना के अर्न्तनिहित गुण शब्द स्वर, आदि ऐन्द्रिक अनुभूति के आत्मधर्म है। अभिव्यंजना का तत्पर्य आंतरिक को बर्हिजगत बनाना है। इसके अर्न्तगत प्रतिनिवेदन प्रतिकीकरण उद्‌घाटन अन्वयन अनुभव सृजन इत्यादि शामिल है। प्रक्रिया स्वरूप रचनाकार अपनी अनुभूतियां तथा अनुभवों को विशिष्ट आत्माभिव्जंना से लेकर वस्तु में धारण तक का समावेश होता है।

सांतायन का विचार है – **'पहले शब्द बिम्ब, अभिव्यंजक वस्तु वस्तुतः प्रस्तुत की जाती है, दूसरे में वस्तु की व्यंजना होती है, जैसे आगामी विचार संवेग या अभ्युदिंत बिम्ब - अभिव्यंति वस्तु। .... अभिव्यंजना इन दोनो के एकता गठन पर आधारित है। .... दूसरे के मूल को पहले में संनिवेश होना चाहिए'**।

भारतीय आचार्य प्रस्तुत करने पर बल देते हैं व नवीन युग के आचार्य व्यंजन पर बल देते हैं। वामन ने गुण की अभिव्यक्ति को धैर्य माना है। इस प्रकार काव्य शास्त्र में वर्णित 'अभिव्यंजना' साहित्य की आत्माभिव्यक्ति ही है जो साहित्यकार की चेतना का विकास

करती है। कृति की निहित क्षमताओं का उद्घाटन करती है।

अभिव्यक्ति मन की दशा को प्रभावित करती है। भारतीय परम्पराओं में इन दशाओं को द्रुति, दीप्ति और व्याप्ति से सामन्यीकृत किया गया है। उदाहरणार्थ – प्रेम का वर्णन करने पर प्रेम के भेद तत्व, स्वरूप आदि का अनुशीलन करते हैं और अतः उसको एक धारणा में अभिव्यक्ति कर देते हैं प्रेम एक सामान्य नाम रूप हो जाता है, लेकिन उसकी अभिव्यक्ति साहित्य या कला में नितांत विलक्षण प्रेम के प्रति जागरूक होती हैं तथा कृति के माध्यम से रचनाकार की अभिव्यक्ति उद्घाटित होती है। यह अभिव्यक्ति वैयक्तिकीकृत होती है। अतः प्रेम की एक ही समान वस्तु की अभिव्यक्ति भिन्न–भिन्न होगी तथा वैयक्तिक होगी विलक्षण होगी अतः यही वैयक्तीकरण से प्रकाशित अभिव्यक्ति आत्माभिव्यक्ति होगी।

अभिव्यक्ति में रचनाकार निरपेक्षता व तटस्थता पूर्वक अपनी अभिव्यक्ति के सामाजिक स्वरूप को देखता है। भारतीय भट्टनायक इसको 'भावकत्व व्यापार' बताते हैं। कुछ आचार्यो का मत है कि संवेगों का कृति में वर्णन अभिव्यंजना होना चाहिए।

लेकिन सवाल ये है कि जब रचनाकार अपने वास्तविक अनुभव को अभिव्यक्त नहीं कर पाता तब क्या वह आत्मविश्वस्त कहा जायेगा। महादेवी वर्मा के 'आत्म परक' विरह गीत में आत्म विश्वस्तता की बात ठीक है लेकिन जहां रचनाकार स्वयं को गौड़ मानकर रचना करता है वहां विश्वस्तता का क्या अर्थ है। जिस विषय वस्तु, घटनाओं को वह वर्णित कर उसे स्वयं भोग चुका हो। इस तरह की विश्वस्ता रचनाकार की वैयवित्तक जीवनी व अनुभवों पर ही आश्रित रहती है। दूसरी तरफ रचनाकार सहृदय के अनुभवों से अपने अनुभवों के समीकरण से रचना करता है। इस प्रकार अभिव्यक्ति की विश्वस्तता रचनाकार की कृति की श्रेष्ठता का केवल एक अंग है। मूल अभिव्यक्ति रचनाकर की अनुभवगम्य सौन्दर्यबोधता व आंतरिक संवेग है।

अतः आत्माभिव्यक्ति की प्रमाणिकता पर संदेह नहीं होता क्योंकि रामायण के तुलसी व रघुवंश के काली दास ने तो तत्कालीन घटनाओं का भोग तो नहीं चुके थे किन्तु उन्होंने कृति में अभिव्यक्ति को अविश्वस्त बना दिया है। आत्माभिव्यक्ति के सहृदय के अनुभव एवं हृदयागत भाव ही रचनाकार की प्रमाणिकता है। रचनाकार के व्यक्तित्व पर भौतिक एवं मानवीय पर्यावरण का प्रभााव भी पड़ता है। जिसके कारण उसकी अभिव्यक्ति

व्यक्तिगत ही नहीं वरन् समाज, वर्ग की धारणाओं की प्रतिक्रियायें भी होती हैं। उसका समाज उसकी वर्गीय चरित्र मूल अनुभवों तक को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से निर्धारित संचालित करता है। परिणाम स्वरूप उसके अनुभवों में तत्कालीन सामाजिक संबन्धों की चेतना और विचारों में वर्गीय चरित्र दृष्टिगत होते हैं। अतः आत्माभिव्यक्ति इसी कारण सामाजिक अभिव्यक्ति भी होती है जो पूरे समाज के अर्न्तविरोधों को प्रगट कर मूल्यों को धारण करने वाली रचनाकार की चेतना की अर्न्तवस्तु है।

अतः एक रचनाकार की आत्माभिव्यक्ति का विकास किस परिस्थियों में होता है पहले तो निःसन्देह प्रेरणा है। अभिव्यक्ति हमारे मन की कल्पना हमारे मन में सभी मनोदशाओं में बहुधा उसकी धाराप्रवाह अवतारणा होती है। अतः मन के अन्तरभावों की अनुकूल परिस्थिति में प्रगट होना ही अभिव्यक्ति है। जब साहित्यकार अभिव्यक्ति करता है वह अप्राप्त को प्राप्त करता है, अपरिचित से पूर्ण परिचित हो जाता है, अस्पष्ट से स्पष्ट बनाता है बूझ को समझता है तथा विरोधों में सांमन्जस्य पैदा करता है। यह सिर्फ भावनाओं द्वारा ही नहीं होता, अपितु तर्क विचार, चिन्तन आदि के द्वारा भी होता है।

इस प्रकार अभिव्यक्ति की पहली परिस्थिति अभिरूचि है। रचनाकार को संस्कार मूलक अभिरूचि, उसकी जिस प्रकार रूचि होती है वह उसी के वृत में चिंतन करता है, मनन करता है। जिसमें उसका आत्म विचार भी शमिल होता है और अन्त में वह रचनायें प्रगट हो जाता है। विश्व के माहनतम रचनाकारों की कृतियां उनकी अभिरूचियों का ही परिणाम है जो अभिव्यक्ति के रूप में जगत के समक्ष प्रस्तुत हुई। तुलसी की रामायण उनकी राम के प्रति भक्ति में रूचि की अभिव्यक्ति है तथा वेदव्यास की महाभारत कृष्ण व गीता के उपदेशों के प्रति रूचि की अभिव्यक्ति है।

दूसरी स्थिति इच्छातुष्टि भी है, निर्बाध विचार अभिव्यक्ति नहीं कर पाते, ज्योंहि रचनाकार के विचारों में मंथन होता है, एवं बाधा आती है आपस में तर्क–वितर्क की खींचतान होती है, अभाव का अनुभव होता है त्योंही साहित्य द्वारा मन की अभिव्यक्ति की इच्छातुष्टि होती है।

अतः अभिव्यक्ति की उद्‌बुद्ध करने वाली प्रधान परिस्थितियां वैयक्तिक, संस्कार मूलक अभिरूचियां सामाजिक असंतोष, भावात्मक अतृप्ति , इच्छापूर्ति, उदात्तीकरण व संतुलन है। स्वयं भू अभिव्यक्ति सृजनात्मक तथा सृष्टि विधायक होती है। आत्माभिव्यक्ति

ही स्वयं भू अभिव्यक्ति है स्वयं के विचार जब अभिव्यक्ति पाते है तब अवचेतन का ज्वार व चेतन का वेग दोनों ही समान रूप से अभिव्यक्त होते हैं, अतः इसमें एक ओर रागतत्व की प्रबलता है दूसरी ओर प्रगाढ़ प्रभावोत्कर्ष और तर्क है। साहित्यकार सबसे पहले मार्मिक स्मरणों को तथा सार गर्भित अनुभवों को चुनता है। उनमें मौलिक सम्बन्ध स्थापित करता है। फिर एक नई रचना या सृष्टि की जाती है। आत्माभिव्यक्ति में तीन घटाकों का योग होता है। तर्क स्मृति व विवेक। यदि अभिव्यक्ति अनुभूति व रागात्मकता से विहीन है तब वह साहित्य के क्षेत्र में निष्प्राण है। अतः अनुभूति प्रवण सृजनात्मक अभिव्यक्ति मन का विराट विस्तार करने वाली रचनाकार या साहित्सकार की परम शक्ति उसकी अभिव्यक्ति है। विवेक व्यक्ति को तर्क का व स्वभाविकता एवं यर्थाथता का मार्ग देता है एवं स्मृति भावों व प्रतिक्रियाओं का मार्ग देती है।

इसलिये आत्माभिव्यक्ति प्रत्यक्ष व यर्थाथ में रूपान्तरित करने वाली तत्व अयर्थाथ को यर्थात में बनाने वाली, स्मृति और वस्तु को नया रूप देने वाली होती है। इन्हीं धर्मो के कारण अभिव्यक्ति शांत से अशांत की ओर, विशेष से सार्वभौम की ओर, सार्वभौम से विशेष की ओर, सदृश्य से अदृश्य की ओर, वर्तमान से भविष्य की ओर, क्रान्ति संचरण करने वाली होती है तथा दर्शन व तर्क के विधानों से संचालित होने वाली होती है। अतः एक साहित्यकार की आत्माभिव्यक्ति उसका अतीत ही नहीं उस युग का भविष्य भी है सिर्फ भावना ही नहीं विवेक भी है। जब अभिव्यक्ति विवेक प्रधान होती है तब वह अमुक रचनाकार की दार्शनिकता बन जाता है। इस प्रकार आत्माभिव्यक्ति रचनाकार के विवेक प्रधान, भावप्रधान विचारों का दर्शन है।

आत्माभिव्यक्ति सृजन प्रक्रिया के अर्न्तगत आती है। इसकी परिभाषा सृजनात्मक कृत्य की आत्मकथा होने के कारण सर्वाधिक विलक्षण, अपरिभाषित व असपष्ट रही है। मनोवैज्ञानिकों, दार्शनिकों, सौन्दर्य बोध शास्त्रियों ने इस क्षेत्र की निरपेक्ष छानबीन की है। सृजन की अभिव्यक्ति जीवन की अवचेतन क्रिया होने के कारण और केवल चेतना के बाहर ही मुक्तमुखर होने के कारण अभिव्यक्ति की प्रक्रिया अद्वितीय है क्योंकि वह अर्न्तमुखी जीवन के संयोजन में परिवर्तन, विकास व संर्वधन की एक विलक्षण प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में मानसिक विचारों को अर्न्तमुखी चरण से बर्हिमुखी चरण में रूपान्तरित किया जाता है, वह रूपान्तरण किस प्रकार का हो यही आत्माभिव्यक्ति का क्षेत्र है। व्यक्ति की आत्माभिव्यक्ति उसका भावात्मक रूप है जो मानस योग्य है। इसमें आंतरिक प्रेषणीयता का निर्वाह होता

है।

जब रचनाकार अभिव्यक्ति द्वारा साहित्य सृजन करता है या कृति की रचना करता है तब वह विशिष्ट एवं विलक्षण होती है। यह सृजन एक ओर तो वास्तविक जगत का होकर भी उससे स्वतन्त्र होता है, दूसरी ओर कलात्मक एवं सांस्कृतिक परंपराओं से संघटित होकर स्वकीय होता है। इसलिये अभिव्यक्ति में मौलिकता और परम्परा, वैयक्तिक्ता और सामूहिकता का द्वान्दात्मक सहअस्तित्व रहता है।

सृजनात्मक अन्वेषण एवं तार्मिक प्रमाणीकरण के समागम से एक सम्पूर्ण आत्माभिव्यक्ति की सृजन प्रक्रिया साहित्य में सम्पन्न होती है जिसके अर्न्तगत चिंतन के नाना प्रकार रचनाकार के आंतरिक अनुभवों को व्यवस्थित करंके रूप तक और रोजमर्रा के जीवन की व्यवहारीक समावेशों तक शामिल होती है। इसलिये रचनाकार का व्यक्तित्व, उसके मन की अर्न्तवाहन किया प्रक्रियायें अभिव्यक्ति की प्रथम घटक है व विचारों में सम्प्रेषण में तकनीकी निपुणता की उपलब्धियां, विषय वस्तु का अनुमूलन, पर्यावरण संस्कृति, लक्ष्या मूल्य आदि दूसरे घटक हैं।

साहित्य में अभिव्यक्ति करने में प्रतिभा प्रेरणा व संस्कार तथा संवेदना को अतिश्योक्ति पूर्ण प्रभामंडल में रहस्य दप्ति किया गया है। यह भी माना जाता है कि आत्माभिव्यक्ति की सृजन प्रक्रिया मात्र अवचेतन का आवेश है जिसमें संवेग ही प्रमुख होते हैं। किन्तु ऐसा नहीं है। वास्तव में सम्पूर्ण आत्माभिव्यक्ति रचनाकार की अवचेतन प्रक्रिया की दहलीज को लांघकर ही चेतना जागृत होती है, संवेगों के अनियंत्रित ज्वर को नियंत्रित करके चिन्तन की सृष्टि में रूपान्तिरित करके ही कोई भी रचनाकार आत्माभिव्यक्ति करता है। इस प्रकार सर्जक चाहे वह कवि हो, निबंधकार हो या कहानीकार, कृतित्व के द्वारा अपने चिति मूलक जीवन के रचना गठन या संरचना का निर्माण करता है। इस प्रसंग में जंग की महत्वपूर्ण उक्ति उद्धत है कि **'कृति प्रक्रिया में कवि का प्रारब्ध हो जाती है और उसके मनस्तात्विक विकास को निश्चित करती है'**।

बहुत से विचारकों ने **'संवेदना के तीव्र क्षणों में रचनाकार की अर्न्तमुखी चरण की अभिव्यक्ति होती है'** ऐसा माना है। गोट्शाक तीव्र संवेदना को ही सृजनात्मकता की आधार शक्ति मानते हैं। उनके अनुसार –

'तीव्र संवेदना ही आंतरिक चेतना एवं बाहरी दुनिया के बीच का सम्पूर्क बिन्दू है। ...... तीव्र संवेदना सृजन के प्रतीकात्मक या अर्न्तमुखी चरण का भौमिक सिद्वान्त है'।

इस प्रकार अंर्तमुखी सृजन से बर्हिमुखी सृजन तक, अविवेकपूर्ण अवस्था से आलोचनापूर्ण नियन्त्रण तक रचनाकार साहित्य में अपनी आत्माभिव्यक्ति का निर्वाह करता है। आत्माभिव्यक्ति साहित्य में व्यक्त करते समय रचनाकार का यह धैर्य है कि वह नये विचार नई अर्त दृष्टि का निर्माण करे। इससे साधारण अभिव्यक्ति तो अनियन्त्रित भावनाओं मादक द्रव्यों के प्रभावों, बच्चों के आत्मरतिपूर्ण खेलों में भी देखा जा सकता है। जहां नियन्त्रण व रूपायन का अभाव होता है लेकिन सृजनात्मक व साहित्यक क्षेत्र में आत्माभिव्यक्ति चिंतन का संस्पर्श पाकर नई दिशा प्रदान करती है। ऐसी दिशा में साहित्यकार एक व्यक्ति न होकर एक प्रजाति मानव जाति की वाणी हो जाता है उसके आत्म विचार आर्दश में रूपायित हो जाते हैं। जो साहित्य में अपनी वाणी बोलता है वह हजारों जिह्वाओं से बोलता है। व्यक्तिगत प्रारब्ध को मानवजाति के प्रारब्ध में रूपांतरित कर देता है।

साहित्यकार को वे सभी ज्ञान, विचार सिद्धांत आदि ज्ञात होने चाहिये जिसमें कि समाज को नई दिशा मिल सके। हिन्दी साहित्य में हजारी प्रसाद द्विवेदी (बाणभट्ट की, आत्मकथा) राहुल सांकृत्यायन, प्रसाद, निराला, पन्त, मैथलीशरण गुप्त आदि का विपुल सांस्कृतिक ज्ञान उनकी आत्माभिव्यक्ति का आदर्श है। इससे ज्ञान होता है कि जब तक चेतन व अवचेतन मस्तिष्क धारणाओं, विचारों, बिंबों की वृहत सामग्री से भरता नहीं है तब तक नयी आत्माभिव्यक्ति असंभव है।

अभिव्यक्ति में सृजन के पूर्व भी एक लम्बा समय रहता है जिसमें सर्जक आत्मलीन रहता है और चेतन होकर अभिव्यक्ति की तैयारी करता है। इस प्रकार चेतन की चेष्टा व तीव्र एकाग्रता अभिव्यक्ति के लिये आवश्यक है। रचनाकार के अन्दर अभिव्यक्ति की यंत्रणा व सर्जन की पीड़ा विभ्रांत संघर्ष देता है जहां अवचेतन इससे निपटता है इसके बाद बर्हिमुखी सृजन (अभिव्यक्ति) होता है। यही उत्साह व आवेश में साहित्यकार सृजन को गतिशील कर देता है।

अभिव्यक्ति में एकाग्रचितता आवश्यक है। इसी एकाग्रता से साहित्यकार व उसकी अभिव्यक्ति एकभाव हो जाते हैं।

इस प्रकार आत्माभिव्यक्ति का अभ्युदय तब होगा जब व्यक्ति विश्रांत तनाव की

दिशा में होता है वह हर तरफ से बेखबर होता है उसे अपने साहित्य सृजन की स्वतंत्रा होती है। आत्माभिव्यक्ति में आत्मविमोही मानस पर चेतना का नियन्त्रण होता है और सृजन व्यापार चलता सौन्दर्य बोधशस्त्री अभिव्यक्ति को ही कला का सार मानते हैं क्योंकि इसके द्वारा वह स्वयं का विषय में प्रक्षेपण भी करता है तथा अपने कृति न्याय को आरोपित करता है। वह प्रकृति के रंग आकृति, आकार रूप आदि का परित्याग करके कविदर्शन के रूप में रंग आकृति, आकार आदि का प्रयत्न होता है। यह अभिव्यक्ति की चरम धारणात्मक अवस्था है जब वस्तु की बजाय उसके विचार या भाव या धर्म, गुण का चित्रण न होकर उसका आत्माभिव्यक्तिकरण होता है। भारतीय कला एवं साहित्य में मुक्ति बोध, विश्वेश्वर, सतीश जमाली की फेंटेसी कवितायें और कहानियां इसी आत्माभिव्यक्ति में सौन्दर्याभिव्यंजन की मिसालें हैं। सृजन प्रक्रिया के बर्हिमुखी चरण के संयोग से ही अभिव्यक्ति का एक संपूर्ण तथा जीवंत विकास होता है इसमें साहित्यकार की निजी आत्मनिर्णायक भौतिक प्रकृति होती है, दूसरी ओर नमनीयता (लचीलापन) भी होता है। अपनी आत्मनिश्च्यात्मक भौतिक प्रकृति के अनुरूप विषयवस्तु में भी परिवर्तन करती है। यह परिवर्तन परस्पर अन्योन्याश्रित है।

भौतिक संस्कृति तथा अंर्तमुखी संस्कृति के इतिहास के प्रभापंडल के दीपित होने के कारण भी कलात्मक विचार स्वयं सृजनात्मक संभावनाओं से परिपूर्ण हो जाता है। प्रत्येक नये सामाजिक, सांस्कृतिक चरण में नवीन तकनीक के विकसित होने पर खुद अभिव्यक्ति नये–नये कलात्मक गुणों को उद्‌घाटित करती है।

साहित्य में अभिव्यक्ति की क्षमता से कई विचार पल्लवित–पुष्पित होते रहते हैं। कई अजन्मे विचार पूर्ण विकास प्राप्त करते हैं और कभी–कभी अवरूद्ध दशा टूट जाती है तथा नये–नये विचार उमड़ पड़ते हैं। विचारों का यही धाराप्रवाह आगमन साहित्यकार की अभिव्यक्ति के माध्यम से कृति में फूट पड़ता है।

इन विचारों में कुछ सामाजिक होते हैं, कुछ वैयक्तिक। विचारों का आत्मप्रकाशन कृति में केवल सौन्दर्यात्मक प्रयोजनों को ही नहीं प्राप्त करता है वरन् अर्थलाभ व शिव रक्षा **(सत्मय् शिवम् सुन्दरम्)** जैसी भावनाओं को भी शामिल करता है। इस प्रकार आत्माभिव्यक्ति में वैयक्तिक लक्ष्य प्रयोजन केवल यश रमणीय निवेदन ही नहीं बल्कि सर्जक की आत्म तृप्ति, उसके सौन्दर्य स्वप्नों का अवतारण, व्यक्तित्व की प्रौढ़ता, कौशल का निष्णात्य, आत्मलीनता, आत्मप्रसार महत आर्दश की भी उपलब्धि है। अतः आत्माभिव्यक्ति की सृजन प्रक्रिया अवचेतन, चेतन सत्य के छोर पर लक्ष्य तथा प्रयोजनशील होकर चरितार्थ होती है

और विचार प्रकाशन से उसकी साहित्य यात्रा पूर्ण होती है।

आत्माभिव्यक्ति में 'अर्न्तदृष्टि' का महत्वपूर्ण कार्य होता है। अभिव्यक्ति के कार्य को प्रशिक्षित करने की क्षमता अर्न्तदृष्टि है अर्न्तदृष्टि अभिव्यक्ति के निर्माण की निपुणता है। रचनाकार अपनी अन्तदृष्टि द्वारा ही अपने हृदयगत आंतरिक भावों का प्रकाशन कर पाता है। अर्न्तदृष्टि अभिव्यक्ति के समय रचनाकार के मस्तिष्क में अकस्मात् आ जाती है उससे वह अपनी कृति में अप्रत्याशित भावों का स्वयं प्रकाशन कर डालता है एवं उसे अभिव्यक्ति द्वारा शब्दों में सुव्यवस्थित करके प्रस्तुत करता है।

कवि आत्माभिव्यक्ति के सृजनात्मक चिंतन के समय विभिन्न चरणों द्वारा अपना रचनाकार्य आरम्भ करता है। प्रथम चरण है 'प्रस्तुति' विचारों को किस प्रकार पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया जाये। द्वितीय 'प्रकाशन' किस प्रकार प्रकाशित हो तथा 'प्रमाणीकरण'। रचना में अपने शब्दों द्वारा सहृदय को बह प्रमाणित कर देता है कि अमुक भाव विचार, उसकी ही आत्माभिव्यक्ति है। जब 'आत्म सृजन' को व्यवहार में आत्माभिव्यक्ति कहते हैं तभी अभिव्यक्ति की सृजनात्मकता का अर्था खुलता है। रचनाकार अनुभव व व्युत्पत्ति के द्वारा आत्मसृजन करता है। बर्हिजगत की यर्थाथता को मानवीय यर्थापता में रूपान्तरित करता है। बहुधा यह सामान्य मानवीय यर्थाथता की विशिष्ट अभिव्यक्ति होती है जब उसकी र्निबाधित चुनाव की स्वतन्त्रता मिलती है। जब वह सामजिक कार्य जो अपेक्षित हैं करता है तथा उसके अनुरूप उसका नेतृत्व उभरता है। बाल्मीकि, कालीदास, काव्यशास्त्रिों के सामाजिक चरित्र भिन्न–भिन्न थे। अतः उनका आत्मसृजन भी भिन्न अभिव्यक्यिों में हुआ।

अतः सर्जक वैयक्तिक योग्यताओं व क्षमताओं का अर्जित कर साहित्य के माध्यम से रचना करता है कभी वह संस्कृति रचना में आगे आता है कभी पीछे जाता है। उसका आवागमन सामाजिक अवस्थाओं पर निर्भर करता है लेकिन व्यक्तिगत अभिव्यकित उनकी कृतियां में उभरना भी आत्माभिव्यक्ति का आकस्मिक संयोग है। सर्जक के यही आत्म विचार उस युग की 'सहृदय' जनता को मानवता का संदेश देते रहते हैं। सर्जक का लक्ष्य यही है जो व्यक्तिगत है, संक्षिप्त है, आत्मयोगी है, उसे, सर्वगत सार्वभौमिक और सर्वयोगी बना दे।

हिन्दी के आचार्य शुक्ल ने शास्त्रीय दृष्टि व अपनी मौलिक प्रतिभा के योग से अभिव्यक्ति में कल्पना का विवेचन किया है। उन्होंने रसमीमांसा में रसात्मक बोध शीर्षक

निबन्ध में तीन प्रकार के रूपविधान होते हैं, विशुद्ध स्मृति– प्रत्यक्ष रूप विधान – संभावित रूप विधान। वे तीसरे प्रकार के रूपविधान को पूर्णतः अभिव्यक्ति को यर्थाथ मानते थे। क्योंकि हृदय की प्रेरणा से प्रवृत्त होकर रचनाकार भवव्यंजना के क्षेत्र में पूर्णतः स्वच्छन्द रहता है। उनके अनुसार तीनों प्रकार का रूपविधान मन के भीतर होता है। जब किसी प्रत्यक्ष देखी हुई वस्तु की हूबहू अभिव्यक्ति होती है तब वह प्रत्यक्ष रूप विधान है। यदि बिंब विशेष दशाओं में हमारी मार्मिक अनुभूतियों को जागृत कर दे तब अभिव्यक्ति रसानुभूति कोटि में आ जाती है। उनका मानना है कि काल–प्रवाह तथा साहचर्य प्रभाव के योग से हमारा हृदय उन अनुभूतियों को समेटकर अपनी रागात्मक सत्ता में अनकूल करने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार रागतत्व और ज्ञानतत्व से संयुक्त विशुद्ध स्मृति भी मधुर हो जाती है और रचना कार के अर्न्तलोक में घुलमिल जाती है। यहां रचंनाकार स्वयं को भुला बैठता है और अपनी स्मृति व वर्तमान की स्थिति भी अभिव्यक्ति में ही निमग्न हो जाता है।

रचनाकार पहले बर्हिजगत के प्रत्यक्षों तथा अर्न्तलोक के स्मरणों तथा अनुभवों का विचार करता है एवं अभिव्यक्ति के साहित्य सृजन के क्षणों में जब वे स्मरण व अनुभव उस यंत्रणा देते हैं, निमंत्रण देते हैं, सुख देते हैं, तब वह ध्यानायोगावस्था में न होकर उद्वेलित दशा में अभिव्यक्ति अपनी रचना में कर डालता है।

पाश्चात्य मत

आत्माभिव्यक्ति काव्य शास्त्र के सिद्धान्त के अर्न्तगत साहितय की एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा साहित्यकार जीवन की सौन्दर्यमयी, कलामयी, चेतनामयी अभिव्यक्ति करता है। काव्य रचना साहित्य रचना में तीव्र अनुभूति का अनियंत्रित भावोवश को चिन्तन स्मरण द्वारा नियमित व नियंत्रित किया जाता है। इसी नियमन व ठहराव के लिये साहित्य की उत्पत्ति होती है। साहित्य के द्वारा अंतर्गति भाव को संहित अभिव्यक्ति देता है और ऐसा कर वह असीम संतोष पाता है। इसी अभिव्यक्ति के सम्बन्ध में किस प्रकार के भाव होने चाहिए इस पर पाश्चात्य विद्वानों ने अपने–अपने मत प्रगट किये हैंत तथा उनमें भारी मतभेद भी पाया गया है।

पाश्चात्य समीक्षा का मूल यूनान में माना जाता है तथा प्लेटों को प्रथम पाश्चात्य समीक्षक माना गया है। कालान्तर में प्लेटों के शिष्य अरस्तू ने अपनी विचारधारा को आगे बढ़ाया। उस समय समाज का नैतिक पतन हो चुका था। साहित्य में शान, व्यवहार की उपयोगिता की दृष्टि से किया जाता था। प्लेटों, अरस्तू के बाद तीसरे समीक्षक लौंजाइनस थे इन्हें प्रथम स्वच्छन्दतावादी समीक्षक भी कहा गया।

कुंठा निराशा मानवद्रोह अनास्था समाज विरोधी स्वरों से युक्त विभिन्न प्रवृतियों के साथ २०वीं सदी का आरम्भ होता है। एवं नीतिवादी विचारकों द्वारा अभिव्यक्ति को नई दिशा मिली। इस समय के विचारकों में ही ओ.ई.ह्यूम, इटैलियन दार्शनिक क्रोंचे थें जिन्होंने आत्मावादी दर्शन पर जोर दिया। आत्माभिव्यक्ति को आत्म सहजानुभूति का क्रिया बताया एवं आई.ए. रिचर्डस ने साहित्यालोचन के सिद्धान्तों के लिये नवीन वैज्ञानिक आधार दिया। फ्राइड और मार्क्स ने रचनात्मक एवं आलोचनात्मक विचार प्रस्तुत किये।

प्लेटों आदर्शवादी सुधारक था उसने साहित्य में नैतिकता पर बल दिया। प्लेटों के अनुसार **'सत्य वह है जिससे समाज और व्यक्ति के नैतिक और आध्यात्मिक जीवन को बल मिले, इसके विपरीत जो भी हो वह उसे असत्य मानता है'** अर्थात् वह काव्य के सत्य को वास्तविक सत्य नहीं मानता। प्लेटों के अनुसार साहित्य कमें सत्य की अभिव्यक्ति पूर्ण रूप से सम्भव नहीं है, कवि आत्मा के विवेकपूर्ण अंश के प्रसन्न करने के लिये नहीं लिखता,

अपनी पुस्तक 'दि रिपब्लिक' में उसने स्पष्ट कहा है –

'The First business of art is to open men's eyes to the beauty of things, to what is great and noble is human nature and then with its gracious effluence it invades man's soul, and like some health giving breeze, it natures in them what is good and noble'.

अतः उसने साहित्य में सुन्दर से अधिक शिव को महत्व दिया है। लेकिन अभिव्यक्ति में सत्य तो ठीक है लेकिन सुन्दरता के तत्व को यदि हटा देंगे तो साहित्य का रूप कुरूप होगा अतः प्लेटों ने इस विचार को पूर्णता नहीं मिली।

प्लेटों के शिष्य अरस्तू ने अनुकरण के सिद्धान्त पर बल दिया। वह अभिव्यक्ति की कला को प्रकृति की अनुकृति मानता है। उसने अपनी ग्रन्थ 'पोलटिम्स' में लिखा है **'कवि या साहित्यकार उन अवरोधक कारणों को हटा कर प्रकृति की सर्जन क्रिया का अनुकरण करता हुआ प्रकृति के अधूरे कार्य को पूरा करता है'**। अरस्तु कर मत है – **'कवि और इतिहासकार में वास्तविक भेद यह है कि एक उसका वर्णन करता है जो घटित हो चुका है और दूसरा उसका वर्णन करता है जो घटित हो सकता है। काव्य सामान्य की अभिव्यक्ति है'**।

इस प्रकार अरस्तू साहित्य या कला में मानव जीवन के सर्वव्यापक तत्व की अभिव्यक्ति मानता हुआ अनुकारण को रचनात्मक प्रक्रिया मानता है।

अभिव्यक्ति में अनुकरण की दृष्टि से साहित्य को देखा जाये तो आज उसके मायने बदल चुके हैं। आज अनुकरण की जगह 'कल्पना' व 'आत्म' को ज्यादामहत्व दिया जाता है। अनुकार्य महानता से ज्यादा आनन्द तत्व को आत्माभिव्यक्ति में अधिक बल दिया गया है।

लौंजाइनस की कृति 'परिइप्सुस' का केवल २/३ भाग उपलब्ध है उसके अनुसार साहित्यकार का कार्य शिक्षा देना, आनंद देना, और बाध्य करना है। वे काव्य में अभिव्यक्ति के लिये भावोत्कर्ष को मूल तत्व मानते हैं अर्थात् साहित्य में अभिव्यक्ति इस प्रकार की हो कि वह पाठक या श्रोता को चरमोल्लास प्रदान कर सके। वे प्रतिभा को प्राकृतिक वस्तु मानते हैं और कहते हैं कि **'उसके लिये सदैव कोई नियम नहीं बनाये जा सकते फिर भी**

प्रकृति के अनुशीलन से प्रगट होता है कि उसकी अभिव्यक्ति में एक व्यवस्था है और वह भी नियम से कार्य करती है'।

उपरोक्त विचारों से यह स्पष्ट होता है कि आत्माभिव्यक्ति साहित्यकार की प्राकृति प्रक्रिया है।

साहित्य में काव्यलोकन के सिद्धान्त में **वर्डस्वर्थ** स्वच्छंदतावाद के घोषणापत्र समझे जाते हैं उन्होंने कविता को भावनाओं का सजह उच्छलन कहा है। वे कविता में सामान्य जीवन की घटनाओं के सहज चित्रण पर बल देते हैं, वर्डस्वर्थ ने काव्य में आत्माभिव्यक्ति की परिभाषा इस प्रकार की है –

'All good poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings it takes its origin from emotion recollected in tranquillity'.

अभिव्यक्ति को सहज रूप देने के पक्ष में वे जिस प्रकार हैं उसी प्रकार काव्य शैली सुधारने के पक्ष में है। इस प्रकार वर्डस्वर्थ चिन्तन, मनन परीक्षण को भी आत्माभिव्यक्ति के लिये आवश्यक मानते है।

कालरिज साहित्य में निर्वैयक्तिक स्वरों को प्रश्रय देने के पक्ष में हैं वह कवि से यह अपेक्षा करते हैं कि वह निज से अधिक चर्तुदिक वातावरण का तटस्थ आंकलन करे वह कवि को सचेतन कलाकार कहता है। दूसरी ओर वह चाहता है कि काव्य में अभिव्यक्ति अवचेतन क्रिया की भी होनी चाहिए। एक साहित्यकार को वह दार्शनिक कहता है दूसरी ओर बालक की तरफ निरीह एवं भोला मानता है – वह साहित्य में बुद्धि व ह्रदय का सम्मिलन चाहता है जो कवि अपनी कृति की अभिव्यक्ति में बुद्धि को वेदी पर ह्रदयतत्व की बलि देते है तथा कविता में बाह्र श्रंगार, अंलकरण की वेदी पर ह्रदय तत्व की बलि देते हैं वे सच्चे कवि नहीं हैं।

कालीरिज तत्व वेत्ता था। साहित्य में वह आत्मज्ञान को महत्व देता है और आत्मज्ञान का कारण कल्पना है मनुष्य, ब्रह्मकल्पना का ही प्रतिनाद है वह दिव्य प्रेरणा है तथा साहित्यकार की सर्जनाशक्ति में निहित है। इसी कारण कॉलरिज आत्माभिव्यक्ति में सम्पूर्ण सृष्टि को चेतना की अभिव्यक्ति मानता है। जड़ चेतन में सामन्जस्य स्वीकार करता है। वह कहता है कि जड़ पदार्थ को देखकर कवि के ह्रदय में भाव उत्पन्न होते हैं नई उद्‌भावनायें है तथा अभिव्यक्ति होती है।

इटली के प्रसिद्ध दार्शनिक कलावादी **क्रोंचे** का अर्विभाव हुआ वे मूलतः आत्मवादी दार्शनिक थे उन्होंने साहित्य में अभिव्यंजनावाद का दर्शन किया। उनके अनुसार साहित्य में सहजानुभूति की प्रक्रिया होती है और वही अभिव्यक्ति है सहजानुभूति ही आत्मानुभूति है वही आत्मानुभूति साहित्य में आत्माभिव्यक्ति के रूप में प्रगट होती है।

क्रोंचे अभिव्यंजना को कला की आंतरिक क्रिया मानते हैं उसके अनुसार विश्व में जो भी उदात्ततम् साहित्य निर्मित है वह साहित्यकार की मूल भावना की धूमिल छाया ही है अर्थात् बाह्य प्रकाशन तो साधन मात्र है।

अत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में क्रोंचे का विचार अधिक सत्यता के निकट है एवं अभिव्यक्ति की सटीक परिभाषा उनके द्वारा की गई है। आत्माभिव्यक्ति को वे सबसे ज्यादा महत्व देते है बाह्य अभिव्यक्ति तो व्यवहारिक उपियोगिता के लिये है जिसके द्वारा साहित्यकार अपनी अनुभूति को चिरकाल तक दूसरों के लिये सुरक्षित रखता है।

क्रोंचे अभिव्यक्ति को सौन्दर्य से जोड़ते हैं उनका मत है कि – **'सफल अभिव्यक्ति में सौन्दर्य निवास करता है और यदि अभिव्यक्ति सफल नहीं है तो वह अभिव्यक्ति नहीं है'।**

साहित्यकार मन में सहज ज्ञान को आमंत्रित करता है उससे जो संतोष व आनन्द मिलता है उसे वह आत्माभिव्यक्ति के माध्यम से उपियोगिता व नैतिकता की कसौटी पर कस कर साहित्य में प्रगट करता है। वे आत्ममुक्ति से प्राप्त आनन्द की अभिव्यक्ति को सफल अभिव्यक्ति मानते हैं।

अभिव्यक्ति के विषय में उन्होंने लिखा है –

"Beauty is successful expression or better expression and nothing more, because expression when it is not successful, is not expression."

C. Brooks L.Kravy

Criticism

क्रोंचे के सहानुभूति के मत को यदि मान लिया जाये सहजनुभूति तो आंतरिक होती है उसकी अभिव्यक्ति मानसिक होगी इससे साहित्यकार स्वच्छन्द हो जायेगा। रचनाकार अपनी अनुभूति में ही व्यस्त रहेगा एवं बाह्य आत्माभिव्यक्ति नहीं कर पायेगा। क्रोंचे के सिद्धान्त में जीवन की उपेक्षा है। यदि रचनाकार अपने मानस में विचरण करने

वाले अस्पष्ट, अरूप, अर्थहीन प्रभावों की आन्तिरक अभिव्यक्ति करेगा तो जीवन और साहित्य का सम्बन्ध टूट जायेगा।

आधुनिक युग के मौलिक विचार को आर.ए. रिचडर्स का महत्वपूर्ण स्थान है। रिचडर्स के अनुसार मनुष्य के अनुभवों के दो स्त्रोत हैं। बाह्र जगत – मानसिक अवस्थायें। साहित्य मानसिक अवस्थाओं से सम्बन्धित होता है।

लेखक अलंकारों के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति करता है उसे हम कल्पनाशील साहित्यकार कहते हैं। आत्माभिव्यक्ति में व्यक्ति विपरीत मनोवेगों तथा अनुभवों में एकत्व तथा सन्तुलन करता है उसके अनुसार किसी भी वक्तव्य में चार धारायें मुख्य हैं – १ आशय २ भाव ३ ध्वनि ४ उद्देश्य। इन्हीं तत्वों के द्वारा कवि या लेखक साहित्य में अभिव्यक्ति करता है। रिचडर्स अति भावुकता को रचना की अभिव्यक्ति के लिये घातक मानते हैं अति भावुकता के कारण ही पाठक रचनाकार के भावपूर्ण रूप से ग्रहण नहीं कर पाती। वे काव्यानुभूति को जगत से पृथक देखने का परामर्श नहीं देते। नैतिकता को भी मानववादी दृष्टि से निर्धारित किया है उनके अनुसार अच्छा वही है जो मूल्यवान है और मूल्यवान वही है जो संगीतपूर्ण संतुलन स्थापित करे।

अतः रिचडर्स का मनोवैज्ञानिक आदर्शवादी और मानववादी दृष्टिकोण ही आत्माभिव्यक्ति के नियमों को सन्तुलित करता है। यही उनकी सबसे बड़ी देन है।

साहित्य एवं दर्शन के गहन अदयेता समीक्षक कवि टी.एस.इलियट के मत भी साहित्यावलोकन में महत्व रखते हैं।

इलियट ने परम्परा के सिद्धान्त का प्रतिवादन किया इसके द्वारा उन्होंने साहित्य को आत्मनिष्ठ न मानकर वस्तुनिष्ठ माना है। कवि की अभिव्यक्ति की कला को र्निवैयक्तिक माना है। साहित्यकार सिर्फ माध्यम मात्र है जो काव्य की स्वतन्त्र अवतारणा करता है। उसके अनुसार – **'कवि व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति नहीं करता है, वरन् उनसे पालयन कला है। कलाकार की प्रगीत निरंतर आत्म त्याग, व्यक्तित्व का निरंतर बहिष्कार है'**।

आरम्भ में इलियट वैयक्तिक्ता की अभिव्यक्ति के आत्मनिष्ठा के विरोधी थे। ध ीरे–धीरे उनका मन परिवर्तित हुआ तथा उन्होंने यह माना कि कवि अपनी निजी भावों की अभिव्यक्ति करता है और वे भाव उसके अपने नहीं सर्वमान्य के भाव बन जाते हैं। अतः इलियट की र्निवैयक्तिवत्ता का अर्थ है – **कवि के व्यक्तिगत भावों की विशिष्टता का**

सामान्यकिरण। कवि आत्माभिव्यक्ति में अपनी तीव्र संवेदना, तथा निजी अनुभूतियों को लोगों की अनुभूतियों से आत्मसात् कर लेता है तथा वे उसकी निजी अनुभूतियां हो जाती हैं। इन्हीं का वह अपने साहित्य में व्यक्त करता है। वह अपनी संवेदनाओं, अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिये वस्तु मूलक चिन्हों से काम लेता है तथा अमूर्त भावनायें मूर्त रूप में प्रगट हो जाती है। इनसे इन प्रतीकों द्वारा वही भावनायें जाग्रह होती हैं जो रचनाकार के मन में जाग्रत हुई थी। अभिव्यक्ति की सफलता वही है कि भावनाओं और उसके मूर्त विधान में पूर्ण सांमजस्य व एकरूपता हो।

इलियट के अनुसार **कवि की अभिव्यक्ति समाज को नूतन अनुभूतियां प्रदान करती हैं, परिचित अनुभूतियों का नवीन बोध कराती है। जिन अनुभूतियों को हम जानते हैं जिनकी अभिव्यक्ति के लिये हमारे पास शब्द नहीं होते कवि उन्हें अभिव्यक्त करता है। जिससे हमारी चेनता का विस्तार होता है, संवेदन शक्ति का परिष्कार होता है, इन अभिव्यक्तियों द्वारा कवि परम्परागत भाषा से संघर्ष करता है तथा उसे अपने अनुकूल बनाता है उसे शक्ति प्रदान करता है।**

इस प्रकार इलियट के अनुसार **जनमानस की अनुभूतियों को स्वयं की अनुभूतियों के साथ जोड़कर अभिव्यक्त करना ही साहित्यकार की अभिव्यक्ति है।**

रॉस्किन ने अभिव्यक्ति को कला माना है। साहित्यकार एक कलाकार है तथा उसका यह कर्त्तव्य है कि, जो कुछ वह देखता है, जो कुछ वह अनुभव करता है उसे पूरी ईमानदारी व पूर्णता के साथ अभिव्यक्त कर दे।

प्रथम महायुद्ध के पूर्व पाश्चात्य विचारकों में एक धारणा अस्तित्व वादियों की बनी जिन्होंने अभिव्यक्ति को वर्तमान, सत्य का खुलकर स्वतन्त्रता प्रदान की उन्होंने आत्मा का स्वीकार ने कर चेतना को स्वीकार किया। उनके अनुसार मानव नियति के क्रूर खेल का शिकार है। अस्तित्ववादियों ने तत्कालीन साहित्य में जीवन और मानव प्रकृति को हीनतम् पाशवितक रूप में चित्रित किया। उनकी कलात्मक अभिव्यक्ति प्रकृतिवादी कलाकारों के समान है।

मतवाद् के रूप में कहने को तो वे आत्मगत विवेक पर बल देते हैं पर उत्तर दायित्वहीनता के कारण अभिव्यक्ति में उच्छंखलता जन्म लेती है। इन सभी कमियों के होने बाद भी अस्तित्ववाद मानव को आत्मविश्वासी बनाता है। करोड़ों बार मर कर भी मानव अपने अस्तित्व (आत्म) को सिद्ध कर लेता है और इसी आत्म को वह अभिव्यक्ति प्रदान

करता है।

सारांश यह है कि साहित्य रचना की तीव्र अनुभूति को भावावेश चिन्तन तथा स्मरण द्वारा नियमित व नियंत्रित किया जाता है इस नियमन या ठहराव के लिये आत्माभिव्यक्ति की जरूरत होती है, साहित्य उन भटकते भावों को अभिव्यक्ति देता है ऐसा कर वह असीम संतोष पाता है। उपरोक्त विद्वानों के मत विवादास्पद हैं किन्तु पूर्ण रूप से अस्वीकार्य नहीं है इन सभी के मतों के अनुसार ही साहित्यरचना में रचनाकार विशिष्ट गति व भावों की आत्माभिव्यक्ति को अतिरिक्त बल मिलता है।

पाश्चात्य साहित्य में द्वितीय महायुद्ध की जन्मी मानसिक चिंता, पश्चिम के बुद्धि जीवियों की खोज, नाराजगी–विद्रोह और अस्वीकृति की अभिव्यक्ति साहित्य में फूट पड़ी। मानसिक उद्वेलन के रूप में आत्माभिव्यक्ति पाश्चात्य विचारकों के समक्ष अभिव्यक्ति का संकट लेकर आयी। साथ – साथ अभिव्यक्ति के विषय की प्रधानता के साथ विषयी चिंतनशीलता और अनुभूति प्रवणता भी साहित्य में आयी। नये मूल्यों, प्रतिमानों वैराग्य, नैतिक मान्याताओं के अर्न्तद्वन्द ने तत्कालीन विचारकों में मनोवैज्ञानिक व्याकुलता उत्पन्न की । इस व्याकुलता की अभिव्यक्ति ही संभवतः आत्माभिव्यक्ति समझी गई।

पाश्चात्य विचारकों में क्रोचे का यह अभिमत आत्माभिव्यक्ति की व्याख्या के ज्यादा निकट पहुंचता है कि **'मानव मन की जगत के नाना पदार्थो की प्रतिक्रिया रूप अनेक छायाचित्र घूमते रहते हैं, अनुभूति के विशेष क्षणों में उनको अभिव्यक्त करना उसके (कवि के) मानसिक स्वास्थ्य के लिये अनिवार्य है। जगत के संसर्ग से मानव मन पर प्रतिक्रिया होती है, अनेक अरूप संस्कृतियां उन्पन्न होती हैं, कवि या कलाकार उन अरूप इन कृतियों को रूप देने का प्रयत्न करता है। इसी रूप देने के प्रयास में काव्य या कला का जन्म होता है'।**

क्रोचे के इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि वह आत्माभिव्यक्ति को काव्य सृर्जना की प्रेरक वृत्ति मानता है।

पाश्चात्य विद्वानों में **फ्रायड** का मत मानव की हर अभिव्यक्ति को काम प्रेरक मानता है। उसका मत है कि, बाह्य जगत में सामाजिक जीवन में, हम नीति नियमों या समाज के भय से अपनी वासना को तृप्त नहीं कर पाते, तो यह अर्न्तमन में जाकर पड़ जाती है और फिर उस अवस्था में जबकि हमारा चेतन मन जागरूक नहीं होता। वह अर्पन को

परितृप्त करने के लिये नाना उपाय ढूंढती है, जिनमें स्वप्न और काव्यसृजन प्रमुख उपाय हैं, मन की अचेतनावस्था में वह स्वप्न के माध्यम से तृप्ति पाती है और अर्धचेतनावसाा में काव्य सृजन के माध्यम से।

अतः **फ्रायड** के अनुसार रचनाकार या साहित्यकार की आत्माभिव्यक्ति वासना के दमन की स्वस्थ प्रवृत्ति है। लेकिन आत्माभिव्यक्ति को सिर्फ काम प्रेरित नहीं कह सकते क्योंकि मनुष्य की स्वस्थ भावनाओं का प्रगटीकरण भी तो साहित्य है।

एडलर ने भी **फ्रायड** के मत के आगेचलकर अनुसरण किया तथा युगं ने फ्रायड व एडलर के मतों का स्वीकार करके जीवन की मूल प्रेरण जीवनेच्छा को अभिव्यक्ति माना है। युंग के मतानुसार – **'मानव के सम्पूर्ण प्रयत्न जीवनेच्छाा को लेकार चनते हैं, वह जो कुछ करता है जीवित रहने के लिये करता है। अतः प्रत्येक अभिव्यक्ति के पीछे भी जीवनेच्छा की प्रेरणा वर्तमान रहती है। साहित्य भी एक प्रकार की अभिव्यक्ति है, अन्तर केवल इतना है कि वह साधारण और सामान्य न होकर विशिष्ट, अधिक कलात्मक, सूक्ष्म और आन्तरिक होती है'**।

अतः साहित्य की प्रेरक शक्ति **युंग** के अनुसार अभिव्यक्ति की अदम्य कामना है, जो जीवनेच्छा से घनिष्ठ रूप में जुड़ी हुई है।

इस प्रकार अभिव्यक्ति न तो काम दमन की एकांत प्रवृत्ति, न जीवन के अभावों की कल्पना द्वारा पूर्ति और न ही अकेली जीवनेच्छा ही है वरन् कवि या रचनाकार की उर्वर कल्पना, दार्शनिक चिन्तन सूक्ष्म सौन्दर्यानुभूति, संवेदनशीलता की कलात्क अभिव्यक्ति है।

वर्तमान में आत्माभिव्यक्ति में भोगा हुआ यर्थाथ निजी अनुभूति से जुड़ा होता हे किन्तु जिस अभिव्यक्ति को कला में निहित किया जाता है वह उससे सर्वथा भिन्न होती है। आधुनिक बोध कलाकार को अधिक सजग स्वचेतन व बौद्धिक बनाता है, इसलिये भावों की सरलता का सीान विचार और तर्क ने ले लिये हैं। उससे अभिव्यक्ति का संकट तथा संवेदनहीनता की सी स्थिति साहित्य में आती जा रही है, संवेदना के परिवर्तन ने यर्थाथ के प्रति हामरी समस्त प्रतिक्रियाओं को बदल दिया हे। साहित्यकार अपनी अभिव्यक्ति से प्रत्येक चरण शब्द स्वर से नये जीवन का निर्माण करता है। लेनिन ने कवियों व साहित्याकारों को **'मनुष्यों की आत्माओं का इंजीनियर'** कहा है। इंजीनियर जिस प्रकार नये–नये नगरों का निर्माण करता है साहित्यकार उन नगरों में रहने–बसने वालों के लिये नये मनुष्य बनाता है।

आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में बच्चन के विचार

आत्माभिव्यक्ति यों तो बच्चन के सम्पूर्ण साहित्य में है काव्य में जहां उनकी अनुभूतियों का आत्मदान है वहीं आत्मकथा में उनकी जीवन की घटनाओं का प्रगटीकरण है सभी कुछ आत्म से प्रेरित है किन्तु बच्चन स्वयं काव्य में, साहित्य में आत्माभिव्यक्ति के विषय में क्या सोचते हैं, समय–समय पर अपने विचार प्रगट किये जिसे प्रस्तुत कर हम उनकी साहित्य में आत्माभिव्यक्ति सम्बन्धी धारणा के और निकट पहुंच सकते हैं। वे साहित्य को किस प्रकार की दुनियां मानते हैं साहित्य उनके लिये सृजन है या आत्मदान, से यब उनके प्रस्तुत विचारों से दृष्टिगत होता है :–

एक साक्षात्कार में यह पूछे जाने पर कि वे विचार प्रधान रचनाओं के प्रति आसक्त हैं या अनुभूति प्रधान ? वे कहते हैं –

'मस्तिष्क से जो चीज लिखी जाती है वह शिल्प होती है, रचना नहीं। बौद्धिक रचनायें सृजनात्मक नहीं होती। सृजन का तो अर्थ ही है आत्मदान। जिन रचनाओं में आत्मदान का जितना अधिक अंश रहता है, वे उतनी ही अधिक रचनात्मक होती हैं। बुद्धि से लिखी जाने वाली रचनायें कभी श्रेष्ठ साहित्य के अन्तर्गत वर्गीकृत नहीं की जा सकतीं'।

आगे वे कहते हैं कि – **'सृजन का अर्थ भी है अपने व्यक्तित्व का अंशदान। भगवान का कहना भी यही है कि सह सृष्टि मेरे लिये निसर्ग बनी है। वास्तव में आत्मदान ही सृष्टि है, रचना है। जो वस्तु मुझ से ग्रहण करती है, वही मेरे सृजन का विषय भी बनती है। शुष्कता अथवा कठोरता अभी मेरे जीवन में नहीं आयी है। दुनिया में बिकने के लिये कुछ अधिक कठोर, कुछ अधिक व्यवहारिक होना पड़ता है'**।

साहित्य में अभ्यास से लिखी गई रचना को वे आत्माभिव्यक्ति नहीं मानते, तो कहते हैं कि – **'पच्चीस-तीस साल लगातार लिखते रहने के बावजूद आज भी मैं जब कोई कविता लिखने को उद्धत होता हूँ, तो मुझे उतनी ही कठनाई अनुभव होती है, जिनती मुझे पहली कविता लिखने में हुई होगी। पच्चीस-तीस साल का मेरा यह अभ्यास मेरे कोई**

काम नहीं आता। यों भी अभ्यास से लिखी गई रचना साहित्य नहीं बन पाती'।

'कवि प्रकृतिक जीवन के विरूद्ध जीवित रहता। वह प्रकृति के कवच को तोड़ता रहता है। उसे अपना जीवन अपने कार्य के अनुपात में बहुत छोटा प्रतीत होता है।'

अभिव्यक्ति के सम्बन्ध में वे लिखते हैं – 'जीवन के प्रयोग की अवस्था चल रही हो तो अभिव्यकित का प्रयोग स्वाभाविक हो सकता है। संघर्ष की प्रक्रिया का फिर क्या कहना। जिसमें अपना ही नहीं, जन-मानस, युग मानस, परम्परा गत मानस एक साथ काम करते हैं। इन सबका एक साथ जगा, एक ध्येय पर लगा, एक परिपूर्ण कृति में कैसे परिणित किया जाये ? बड़ी पेचीदा और कठिन समस्या है'।

शब्द संसार यर्थाथ-संसार की अनुकृति नहीं है। पहली बात अनुकृति प्रस्तुत करना अंसभव है, दूसरी बात, अनुकृति कर भी ली जाये तो अनावश्यक है, जब यर्थात् संसार मौजूद हो तो उसकी नकल की ही क्यों जाये न कला (शब्द कला भी) जीवन की अनुकृति (इमीटेशन) यहीं है जीवन की विकृति (रिवेजेटेशन) या व्याख्या (इंटरप्रिटेशन) है और यहां जीवन से चुनाव (सलेक्शन) आवश्यक हो जाता है। कवि या लेखक जीवन की जो व्याख्या देना चाहता है उसके अनुसार जीवन से चुनाव करता है। यानि वह जीवन के बहुत से सत्य को छोड़ता है, उसकी उपेक्षा करता है, या उसे दबाता है कि उसकी धारणा को मूर्तिमान करने वाले जीवन का रूप प्रमुख हो, उभरे उजागर हो इस प्रकार कलाकार कला की मांग पर सत्य से मिली अंश को गोपन रखने का विशेषाधिकार रखता है'।

वस्तुतः उच्चकोटि का कलाकार कला के माध्यम से जीवन का जो व्याख्या देता है वह एक प्रकार से उसका जीवन दर्शन होता है। मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि प्लेटों ने अपने आदर्श राज्य में कवि को इसलिये भी तो नहीं टिकने दिया कि कहीं वह उसका प्रतिद्वन्दी बनकर न खड़ा हो जाये। फिर भी वह सोचता होगा कि कवि जो दर्शन प्रस्तुत करेगा वह खण्ड सत्य पर. आधारित होगा। परिपूर्ण दर्शन तो परिपूर्ण सत्य पर ही आधारित होना चाहिए, उसे देने का अधिकारी उसका विशुद्ध दार्शनिक होगा, कवि नहीं। पर यह सर्वमान्य है कि कवि के दर्शन की भी अपनी विशिष्टता है, उपियोगिता है, औचित्य है। मैंने पहले कहा कलाकार लोक-मर्यादा की दृष्टि से भी कुछ सत्य को दबा

जा सकता है। यहां एक दूसरा प्रश्न उठता है - लिखना किस लिये ? ....
जीवन और संसार में जो कुछ घटित होता है उसे ज्यों का त्यों कह या लिख देने से अगर लोकहित संभव होता तो साहित्य समाचार-पत्र का स्फीतीकृत, यानि फूला-फैला रूप होता। साहित्य लोगमंगल की दृष्टि से रखकर यर्थाथ के यथेष्ट को चुनता है। इस प्रकार फिर कलाकार या साहित्यकार को अपने ध्येय में सफल होने के लिए यह अधिकार देना होगा कि वह आवांछित सत्य को छिपा रखे'।

एक और बात, और बहुत विशिष्ट बात स्वाभाविक है कि सर्वाग सत्य से अंश सत्य का निकालने अलग करने में सर्वागं सत्य क्षत-विक्षत होगा। वैसे अंश सत्य भी, जैसे शरीर को किसी अंग को काट कर अलग कर देने में - कटा शरीर भी, कटा अंग भी और यहां कलाकार व साहित्यकार को एक और अधिकार देना होगा कि वह उन क्षत-विक्षत अंगों पर कल्पना का मरहम लगा सके, कल्पना की प्लास्टिक सर्जरी कर सके। यानि उसे कुछ ऐसा सत्य भी जोड़ने का हक होगा जो वास्तव में घटित नहीं हुआ, जो उसकी ईजाद है, शर्त केवल यह है कि वह खण्ड सत्य और काल्पनिक सत्य का इस प्रकार से समीकरण करेगा कि वह सर्वागौण सत्य से भी अधिक स्वाभाविक, संपूर्ण और सजीव प्रतीत हो। साथ ही वह समाज की परिष्कृत कला में रूचि को परितुष्ट करता हुआ उसके मंगल को भी साधेगा।

सच्चाई तो यह है कि सतय को स्वतंत्रता लेने का मूल्य कवि, कलाकार या साहित्यकार को अपने रक्त से चुकाना पड़ता है - सृजन के रक्त से जो बड़ी साधना, बड़े तप से बनता है।'

(आत्मकथा से)

निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से आत्माभिव्यक्ति के सम्बन्ध में ये धारणा बनती है कि, आत्माभिव्यक्ति आत्म प्रकाशन है। यह आत्मानुभूति से प्रेरित है यह अनुभूति सूक्ष्मदर्शी काल्पनिक होती है। साहित्यकार अपनी आत्मभोगी स्थिति स्वचेतना को साहित्य में व्यक्त करता है। आत्माभिव्यक्ति भावों से विरक्ति भी है भावों से पलायन है तथा भावों का प्रकाशन भी है यं साहित्यकार की वे अनुभूतियों हैं जो प्रमाणिक़ होती हैं उसके अतः करण से जिन्हें वह बौद्धिक चेतना एवं विवेक के आधार पर व्यक्त करता है।

साहित्यकार भी आत्माभिव्यक्ति उसका आत्मान्वेषण व आत्म साक्षात्कार है जिसे वह आत्मप्रशिक्षण से साहित्य के आत्म रूपायित करता है। आत्माभिव्यक्ति आत्म को सहज ही अनुभूति होने वाली भावना की अनुकृति है। यह सर्जक का वह भावोत्कर्ष है जिसमें उसका आत्मज्ञान अंर्तमुखी चरण से बर्हिमुखी चरण में प्रतिपादित होता है।

उपसंहार

साहित्य, कवि या साहित्यकार के विचारों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। नूतन विचार, धाराओं के प्रसार, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक परिवर्तन एवं विभिन्न जातियों के समिष्टगत मानस में उथल पुथल कर कवि की साकात्मक अभिव्यक्ति होती है बच्चन का साहित्य तो प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से समाज एवं व्यक्ति के भावों से अभिव्यक्ति प्रदान करता रहा है उनके साहित्य में जो भाव जो चेतना अथवा जो दृष्टि उपयुक्त विवेचन में देखी गई उससे यह स्पष्ट होता है कि कवि मानस के मन मस्तिक को उनमें अन्तर की पीड़ा में खूब आलोड़ित विलोड़ित किया। उनके साहित्य में अभिव्यक्ति की एक नूतन दिशा उजागर हो सकी।

युगीन परिस्थितियों का अनुभव बच्चन को प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति की प्रेरणा देता है और अपने साहित्य से आदर्श तथा औदात्य संस्कार पैदा कर सहृदय पाठकों को मदिरा, हलाहल, मधुकलश का स्वप्निल संसार दिखाते हैं जिसमें जीवन का विष भी है, अमृत भी है तथा सांसारिकता का नशा भी है जहां 'निशा निमंत्रण', 'सतरंगनी' में प्रेम करूणा संवेदना है वहीं 'प्रणय पत्रिका', 'मिलन यामिनी' में प्रेम चिन्तन में कवि औदात्य और आत्मिकता का समावेश है। 'अग्निपथ' जैसी रचनाओं में वे निष्क्रिय समाज को कर्मयोग्य का संदेश देकर समाज सुधार के दिशा में भूमिका निभाते हैं।

इसके अतिरिक्त वे बंगाल का काल में जीवन के कटु यर्थाथ का चित्रण करते हैं तत्कालीन समाज की परम्पराओं पर व्यंग प्रहार भी करते हैं प्रकृति सौन्दर्य अभिव्यंजना कौशल तथा लौकिक साहित्य की मार्मिक अभिव्यक्ति सभी कुछ बच्चन की मौलिक एवं अन्यतम प्रतिभा तथा सौन्दर्य–दृष्टि को प्रकाशित करते हैं। निश्चित ही मानवीय संवेदना एवं आत्मिक भावों की मधुर अभिव्यक्ति ही उनके साहित्य का प्रमुख स्वर है। बच्चन के काव्य साहित्य में प्रेम एवं वियोग संयोग के भावों के कथानक एकरसता लिए हुए भी एक कहानी के रूप में अपनी काव्य यात्रा पूर्ण करते हैं प्रेम उनकी दृष्टि का परिचायक है। उनकी साहित्यिक अभिव्यक्तियां भावनात्मक उद्देलन देकर कर्त्तव्य पथ की ओर उन्मुख होने की प्रेरणा देने वाली है।

बच्चन अपने साहित्य में मानव मन की पीड़ा के एक वृहद संसार को कविताओं माध्यम से हमारे सामने उजागर करते हैं दुख कातरता के भाव बिना निस्प्राण तथा पाषाण सा जान पड़ता है। अतः संवेदनशीलता मनुष्य का आभूषण है। इसी संवेदनशीलता से आकुल–व्याकुल रहने वाले बच्चन आत्माभिव्यक्ति को सशक्त कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं एवं वेदना को साहित्य में उजागर कर उसके प्रति ध्याानाकर्षण करने वाली शैली विशिष्ट मुक्त छन्दों की भाषा में जिसमें सहजता व स्वाभविकता भी है, तो कलात्मक प्रभावात्मकता भी है, किसी प्रकार का बनावटीपन क्लिष्टता व दुर्बोधिता या बिखराव बच्चन के साहित्य में नहीं है नपीतुली सटीक सार्थक, भावप्रवण सरस शब्दावली में वे महाकाव्योचित अर्थवत्त का भी सहज ही कह देते हैं उनकी कविता जैसे भीतर से निकली जान पड़ती है काव्य में पीड़ा व दर्द का विशाल संसार बंध सा जाता है उनके काव्य साहित्य में कहीं कोई रहस्य उलझाव द्वन्द या विश्रृंखलता नहीं है।

बच्चन की अभिव्यक्ति का मुख्य साधन साहित्य में काव्य रहा है, बच्चन के मधुकाव्य में आत्मतत्व की महानता का प्रतिबिम्ब, औदात्य प्रदान करता है यही कारण है वे लौकिक जगत के अलौकिक मदिरा के दर्शन से आशा, आस्था व आदर्शों की पताका फहराते हुए गीतों की उर्जा से जीवन की ज्योति विकीर्ण करते हुए भविष्य व वर्तमान के सत्य को सबके समक्ष प्रस्तुत करते हैं सत्य को साध्य व सौन्दर्य को साधन बनाकर वे गीत लिखते हैं आपके काव्य में कवि व्यक्तित्व तथा काव्य विषय की अद्भुत भावना जिसमें कवि की सच्ची तथा रस में सराबोर कर देने वाली अनुभूति को अनुभव किया जा सके जो कवि की अन्तरात्मा को मार्मिक स्वर का संगीतमयी अभिव्यक्ति प्रदान कर सके वहीं अभिव्यक्ति बच्चन के काव्य में है।

वे सुख–दुख को भावावेशमयी अवस्था विशेष या व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख दुखात्मक अनुभूति का शब्दरूप मानते हैं जोअपनी ध्वन्यात्मकता या काव्य साधना में देय हो सके। इसी कारण उनके साहित्य में भावप्रेरित विचारों की आवेगमयी अभिव्यक्ति मुखर होती है। आत्मनिष्ठभावुकता उनके साहित्य का प्रमुख अंग है वे गतिमय आत्मानुभूत भावातिरक को समस्त रूप से साहित्य में व्यक्त कर उसे भावुक बना देते हैं आत्मकथा के कई खण्ड़ों में बच्चन ने अपनी भावुकता को शब्दों में व्यक्त किया है, स्पष्ट है कि कवि की भावुकता की अनुभूति उसके साहित्य को अलौकिकृता, व दिव्य चेतना के मूल में ही दृष्टिगत होती है। उन्होंने जिस संवेग एवं पीड़ा अनुभूति को अपने साहित्ये में प्रमुख विषय बनाया

है उसकी अभिव्यक्ति काव्य के माध्यम से अधिक सजह थी। जिस युग में उन्होंने काव्य सृजन किया वह छायावाद का युग था जहां महादेवी, प्रसाद, निराला जैसी महान् विभूतियां अपने काव्य सृजन से हिन्दी साहित्य को समृद्ध कर रहीं थी वहीं बच्चन ने अपनी इन अनुभूतियों को नया परिवेश दिया 'हालावाद' की एक और कड़ी उसमें जोड़ दी।

भावनात्मक अभिव्यक्ति बच्चन के सम्पूर्ण साहित्य में है उनकी भावानुभूति का आलम्बन और कोई नहीं उनका अपना हृदय है जो भावों से भरा है, उनके गीतों में अलौकिक प्रणय भावना, करूणा व निर्वेद भी है, वैयक्तिक सुख–दुख को ध्वनित करते हुए कुछ गीतों की मार्मिकता विस्मय की वस्तु बन जाती है उनमें गम्भीर मनोवेग की अभिव्यक्ति है। आदि से अन्त तक भावधारा की उत्कृष्ट प्रस्तुति उनके काव्य सौन्दर्य को समृद्ध व प्राणवान बनाती है।

आत्माभिव्यक्ति की भावाकुलता के साथ बच्चन के काव्य में अखण्ड प्रभावपूर्ण संक्षिप्तता भी देखने को मिलती है, हार्दिक उच्छावासों को व्यक्त करने वाले उनके भावगीत भावात्मक शुद्धता और उत्कृष्टता की कसौटी बनते हैं जहां 'मधुशाला' 'हलाहल' में रहस्य दर्शन का अध्ययन है अथाह ज्ञान है। वहीं अन्य काव्य संग्रहों 'मरकत के द्वीप' सोऽहम हंसः में साहित्यकार स्तर के साथ आत्मानुभूतिक गहराई भी है हृदय का सहज उच्छवास, मर्म की तीखी पीड़ा, यही उनके साहित्य की आत्माभिव्यक्ति है।

बच्चन काफी समय तक 'छायावादी काव्यधारा' के समीप रहे किन्तु उनके साहित्यकार व्यक्तित्व का स्वतंत्र विकास हुआ। चेतना की पृष्टभूति व अज्ञान सर्वशक्तिमान सत्ता के रहस्यात्मक रूप में प्रति हृदयोदगारों की अभिव्यक्ति मानव मूल्यों के प्रति जागृति एवं सर्मपण जैसे गरिमा से मंडित भावों विचारों का साहित्य बच्चन की उपलब्धि है। यही कारण है कि बच्चन क्षणभंगुर भौतिकता की तुलना कालजयी चिरंतन अनुभूति को दिव्य रूप से प्रस्तुत करते हैं वे मानवता के व्यापक आदर्शों और महान् उद्देश्यों को अपनी साहित्य शक्ति का साध्य मानते हैं। उनका समस्त साहित्य उनकी संतुलित अनुभूतियां सांस्कृतिक मूल्यों की विशिष्ट परम्पराओं प्रेरणाओं की सहजाभिव्यक्ति व्यक्ति बन कर हमारे सामने आती है। भाव सूक्ष्मता व चिन्तन गहनता के साथ सहज–सरल शब्दावली का प्रयोग उनके साहित्य में विद्यमान है। 'हलाहल' में पुरा प्रसंगों ऐतिहासिक उपमानों को नवीन अर्थ व नवीन रूप में प्रस्तुत कर अत्यन्त भावग्राही बनाया है यथा –

कहां है अकबर का वह स्वप्न
जिसे कर पत्थर से मजबूत,
किया था उसने भूपर सत्य
यहां फिर किसकी करतूत।

बच्चन के साहित्य में सौन्दर्य, प्रेम संवेदना जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति जितनी बलपूर्वक हो पाती है उतनी ही प्रबलता से वे जनसाधारण, राष्ट्रहित, अतीत के प्रति प्रेम व राष्ट्रपिता गांधी, बंगाल के काल जैसे राष्ट्रीय चेतना के प्रति सर्मपण के भाव को भी उजागर करते हैं। गांधी जी के प्रति वे अपने भाव यों व्यक्त करते हैं।

क्योंकि गांधी व्यर्थ
यदि न मिलती हिंसा को चुनौती
क्योंकि गांधी व्यर्थ
यदि अन्याय की ही जीत होती
क्योंकि गांधी व्यर्थ
यों जाति स्वतन्त्र होकर
यदि न अपने पाप धोती।

बच्चन ने हृदय की सहज अनुभूतियों का सामान्य किन्तु हृदयस्पर्शी शैली में सृजन किया है काव्य शिल्प व शब्द चमत्कार के जाल में अनुभूति अभिव्यक्ति के मूल रूप को समाहित कर वे विकल्प नहीं बनाना चाहते हैं। घोर निराशा के सघन वन से निकल कर वे आशा के दीप जलाकर उत्साह रूप ज्योति संचरित करते चलते हैं। विषाद् की लहरों को आनन्द के किनारे ले जाने का प्रयत्न करते हैं।

मंद झकोरों के प्यालों में
मधु ऋतु सौरभ की हाला
भर-भरकर है अनिल पिलाता
वन कर मधु-मद-मतवाला
हरे-हरे नव पल्लव, तरूगण
नूतन डाले वल्लरियाँ
छक-छक, झुक-झुक झूम रही, मधु बन है मधुशाला

बच्चन के सम्पूर्ण साहित्य का विवेचन करने पर यह ज्ञात होता है कि वे साहित्य सृजन चिन्तन और अनुशीलन में जीवन पर्यन्त निमग्न रहने वाले व मधुशाला से आत्मकथातक की साहित्य यात्रा करने वाले बच्चन ने संवेदना व कलात्मकता के नये सोपानों को उजागर किया।

इस शोध ग्रन्थ का यही निष्कर्ष है कि बच्चन के साहित्य में उनकी आत्मनिर्भता उनकी अनुभूतियों से सीधी उठी चीज है उसे प्रकाश में लाये जाने पर वह औरों को भी अपनी अनुभूति प्रतीत होगी। भाव तो मानव को ईश्वर प्रदत्त वरदान है, किसी साहित्यकार की अभिव्यक्ति की सफलता का रहस्य तो यही है कि वह उन भावों को ग्रहण करके उन्हें व्यक्त करके पाठकों के हृदय में स्थान बना सके, जिसमें बच्चन सफल हुए हैं।

उपस्कारक ग्रन्थ

पुस्तक	लेखक	प्रकाशन	सन्
मधुशाला	बच्चन	हिन्द पॉकेट बुक्स	१९६४
मधुबाला	बच्चन	राज पाल एन्ड सन्स्, कश्मीरी गेट, दिल्ली	१९९५
मधुकलश	बच्चन	– सम –	
निशा निमंत्रण	बच्चन	– सम –	
एकांत संगीत	बच्चन	– सम –	
सतरंगनी	बच्चन	– सम –	१९८३
हलाहल	बच्चन	भारती भण्डार लीडर पैस	१९४०
बंगाल का काल	बच्चन	राज पाल एन्उ सन्स्, कश्मीरी गेट, दिल्ली	१९९५
बुद्ध और नाचघर	बच्चन	– सम –	
दो चट्टानें	बच्चन	– सम –	१९६३
जाल समेटा	बच्चन	– सम –	१९८५
सोऽहम हंसः	बच्चन	मित्तल प्रिन्टर्स, शाहदरा, दिल्ली	१९८१
चौंसठ रूसी कवितायें	बच्चन		
क्या भूलूं क्या याद करूं	बच्चन	राज पाल एन्ड सन्स् कश्मीरी गेट, दिल्ली	१९९५
नीड़ का निर्माण फिर	बच्चन	– सम –	१९८३
बसेरे से दूर	बच्चन	– सम –	१९९५
दशद्वार से सोपान तक	बच्चन	– सम –	१९९५
बच्चन के विशिष्ट पत्र	बच्चन	प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली	१९८४
कवियों में सौम्य सन्त पन्त	बच्चन	राज पाल एन्ड सन्स् काश्मीरी गेट, दिल्ली	१९६०

उपजीव्य ग्रन्थ

(बच्चन का साहित्यिक परिचय)

पुस्तक	लेखक	प्रकाशन	पृष्ठ सं०
आज के हिन्दी कवि	चन्द्र गुप्त विद्यालंकार	राजपाल एण्ड सन्स्	१५
हलाहल	बच्चन	भारती भण्डार	४३
मधुशाला	बच्चन	हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि०	७३
क्या भूलूँ क्या याद करूँ	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	२१३
सतरंगनी (वेदना का गीत)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१०१
निशा निमंत्रण	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६७
सतरंगनी (अपने पाठकों से)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	७
मधुशाला	बच्चन	हिन्दी पॉकेट बुक्स प्रा० लि०	क्र० ६०
सतरंगनी (पहला रंग)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	३७
मधुशाला	बच्चन	हिन्दी पॉकेट बुक्स प्रा० लि०	क्र० ३०
सतरंगनी (नवल प्रात)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	११२
नीड़ का निर्माण फिर	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	२६१
आज के हिन्दी कवि (परिचय)	चन्द्रगुप्त विद्यालंकार	हिन्दी साहित्य सम्मेलन	२१
क्या भूलूँ क्या याद करूँ	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१८१
सतरंगनी (मयूरी)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६१
सोऽहं हंसः (हंस का प्रयाण)	बच्चन	मित्तल प्रिन्टर्स, शाहदरा	
सतरंगनी (नागिन)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	५२
निशा निमंत्रण	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	४३
दशद्वार से सोपान तक	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	३५३
सतरंगनी (नागिन)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	५३
सतरंगनी (नागिन)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	५६

निशा निमंत्रण	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६३
आकुल अन्तर	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६२
बच्चन व्यक्ति और कवि (मेरे प्रिय कवि बच्चन)	बांके बिहारी भटनागर	हिन्दी भवन, नई दिल्ली	७१
आज के हिन्दी कवि (आकुल अन्तर)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६०
बच्चन व्यक्ति और कवि (आत्म परिचय–बच्चन व्यक्तित्व तथा काव्य – पन्त)	बच्चन	हिन्दी भवन, नई दिल्ली	४२, २३
बच्चन व्यक्ति और कवि (मेरे प्रिय कवि बच्चन – –भगवती चरण वर्मा	बांके बिहार भटनागर	हिन्दी भवन, नई दिल्ली	७१
बच्चन व्यक्ति और कवि	भगवति चरण वर्मा	हिन्दी भवन, नई दिल्ली	७१
बच्चन व्यक्ति और कवि (नरेन्द्र शर्मा)	बांके बिहारी भटनागर	हिन्दी भवन, नई दिल्ली	
प्रारम्भिक रचनाएं(भाग–दो)	बच्चन		६
सतरंगनी (भूमिका)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	७

(बच्चन की आत्माभिव्यक्ति काव्य में)

मधुबाला(आत्म परिचय)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६५
प्रणय पत्रिका	बच्चन		
मधुबाला (इसपार–उसपार)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	८८
दशद्वार से सोपान तक (रूपांतरित शब्द)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	७००
बच्चन व्यक्ति और कवि (मेरे प्रिय कवि बच्चन)	बच्चन	हिन्दी भवन, नई दिल्ली	७२
दशद्वार से सोपान तक	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	२०६
सोऽहं हंसः(हंस का प्रवास)	बच्चन	मित्तल प्रिन्टर्स, शाहदरा, दिल्ली	१२
सोऽहं हंसः (अभिनव सोपान – पन्त)	बच्चन	मित्तल प्रिन्टर्स, शाहदरा, दिल्ली	
सा०हि० (भेंट वार्ता – मृणाल पांडेय)	बच्चन	प्रकाशन वर्ष, मार्च १९९२	३७

कालेर कबले बंगला (भूमिका)	विनय सरकार		३
कालेर कबले बंगला	विनय सरकार		
बंगाल का काल	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	३०
सतरंगनी (मयूरी)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६१
सतरंगनी (पथ की पहचान)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	७४
सतरंगनी (विश्वास)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१२१
वाणांबरी	पोद्दार रामा— —वातार अरूण		१४२
शकुंतला	सागर निज़ामी		अंक ४
सतरंगनी (भूमिका)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१४
आत्मकथा (नीड़ का निर्माण फिर)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१८३
आत्मकथा (बसेरे से दूर)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१७४
आत्म कथा (नीड़ का निर्माण फिर)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१०१
एकांत संगीत	बच्चन		६५वां गीत
एकंत संगीत	बच्चन		८६वां गीत
जाल समेटा (दिल्ली की मुसीबत)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	२३
जाल समेटा (बूढ़ा किसान)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६२
दो चट्टाने (गैंडे की गवेषणा)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	५६
सा०हि० (भेटवार्ता)	मृणाल पांडेय	प्रकाशन वर्ष १६६२	३७
त्रिभंगिमा (पगला मल्लाह)	बच्चन		
दो चट्टानें (सिसिफस बरक्स हनुमान)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१६६
—सम—	—सम—	राजपाल एण्ड सन्स्	१३६
सोऽहं हंस:(हंस का घाव)	बच्चन	मित्तम प्रिन्टर्स, शाहदरा, दिल्ली	२७
दो चट्टानें(माली की सांझ)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१००

दो चट्टानें (ड्राईंग रूम में मरता हुआ गुलाब)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६०
दो चट्टानें (जीवन परीक्षा)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६४
सतरंगनी (भूमिका से)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	२०
आत्म कथा (बसेरे से दूर)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	८४, ६०
आत्म कथा (दशद्वार से सोपन तक)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१६२
बच्चन व्यक्ति और कवि	बच्चन		३२
सतरंगनी (भूमिका)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	७
बच्चन व्यक्ति और कवि (बच्चन का व्यक्तित्व और काव्य)	पन्त		२५

(बच्चन की आत्माभिव्यक्ति मधुकाव्य में)

मधुबाला (आत्म परिचय)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६७
आत्म कथा (क्या भूलूं क्या याद करूं – परिशिष्ट)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	२२३
–सम –	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१८८
मधुशाला	बच्चन	हिन्द पॉकेट बुक्स, ४४वां संस्करण	क्र०स११
मधुशाला	बच्चन	– सम –	क्र०स१६
मधुशाला	बच्चन	– सम –	क्र०स१७
मधुशाला	बच्चन	– सम –	क्र०स ६५
बच्चन निकट से	नरेन्द्र शर्मा		३६, ३७
आत्म कथा (क्या भूलूं क्या याद करूं)	बच्चन		२०६–२०७
मधुबाला (आत्म परिचय)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६७
मधुबाला (पाटल माल)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	८२
मधुबाला (पांच पुकार)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	६०
मधुबाला (मालीक मधुशला)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	३४

मधुबाला (मधुपायी)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	३६
मधुबाला (सुराही)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	४६
मधुबाला (सुराही)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१६
मधुकलश	बच्चन		
आधुनिक कवि (मधुकलश)	बच्चन	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग	४६
आधुनिक कवि (मधुकलश)	बच्चन	— सम —	४६
हलाहल	बच्चन	भारती भण्डार लिडर प्रैंस, इ०	क्र०स६
हलाहल	बच्चन	— सम —	क्र०स४३
हलाहल	बच्चन	— सम —	क्र०स१८
हलाहल	बच्चन	— सम —	क्र०स१
हलाहल	बच्चन	— सम —	क्र०स ७३
हलाहल	बच्चन	— सम —	क्र०स१३७
बच्चन, व्यक्ति और कवि (भेंट वार्ता—बालस्वरूप राही)	बांके बिहारी भटनागर	हिन्दी भवन, नई दिल्ली	६५

(बच्चन की आत्माभिव्यक्ति पत्रों में)

बच्चन की विशिष्ट पत्र	चन्द्रदेव सिंह	प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली, प्र० वर्ष १९८४ पृष्ठ सं० : ६, ११, १६, २५, २८, ३१, ८७, ४४, ४७, ५६, ७३, ५८, ७७, ५४, ६२, ५६, ७४, १०३, १०२, ११, ११४, ११६, ३४	
दशद्वार से सोपान तक	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१६३

(बच्चन की आत्माभिव्यक्ति समीक्षा में)

सतरंगनी (अपने पाठकों से)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	३१
दशद्वार से सोपान तक	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	१६६

(आत्माभिव्यक्ति एक संश्लेषणात्मक अनुशीलन)

आज के हिन्दी कवि बच्चन (भूमिका)	चन्द्रगुप्त विद्यालंकार		१७, १८
बदलते परिपेक्ष्य	नेमिचन्द्र जैन		४३

बदलते परिपेक्ष्य (दूसरा तार सप्तक–भूमिका)	अज्ञेय		१४
बदलते परिपेक्ष्य (तीसरा सप्तक)	प्रयागनारायण त्रिपाठी		६
काव्य में उदात्त तत्व	डा. नगेन्द्र		
– सम –	प्लेटो		२७७, २७८
– सम –	वैडस्वर्थ (प्रिल्यूड)		१७
लिट्रेरी क्रिटिसिज़म	क्रोंचे		५०२–३
बदलते परिपेक्ष्य (दूसरा तार सप्तक)	अज्ञेय		७
दि सैंस ऑफ ब्यूटी	चार्ल्स स्कूबर्न		१४७–४६
बच्चन व्यक्ति और कवि (मेरी रचना परिक्रिया)	बांके बिहारी भटनागर		६०
दशद्वार से सोपान तक	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स्	४१

(अन्य सहायक ग्रन्थ)

काव्य में उदात तत्व	डा. नगेन्द्र		
पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धांत	लीलाधर गुप्त		
समीक्षालोक	भागीरथ मिश्र		
दशद्वार से सोपान तक			
बच्चन, व्यक्ति और कवि			
अथातों सौन्दर्य जिज्ञासा	रमेश कुन्तल मेघ		
रस मीमांसा	राम चन्द्र शुक्ल	नागरी प्रचारणी सभा	
डी डब्लू गोट्शाक्		आर्ट एण्ड सोशल ऑर्डर १६३२	५६–६१
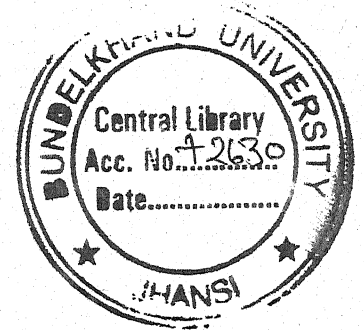
(उपसंहार)

हलाहल (प्रथम संस्करण)	बच्चन	भारती भण्डार लीडर प्रैस, इ०	८२
मधुशाला	बच्चन	हिन्दी पॉकेट बुक्स, ४०वां संस्करण	३५
दो चट्टानें (गांधी)	बच्चन	राजपाल एण्ड सन्स	४२